* अर्हन् *

पूनमचंद वृद्धिचंद ढढ्ढा हिन्दी जैन ग्रंथ
माला सं० १.

श्री कल्पसूत्र मूल और हिन्दी भाषान्तर.

पूर्वाचार्यों की टीकानुसार.

अनुवादक– श्रीमान् माणिक मुनिजी महाराज.

प्रकाशक

सोभागमल हरकावत–व्यवस्थापक.
अजमेर

सुखदेवसहाय जैन प्रिंटिंग प्रेस, अजमेर में.
बाबू दुर्गाप्रसाद के प्रबन्ध से मुद्रित.

वीर सम्वत २४४२ विक्रम सं० १९७२.

प्रथमा वृत्ति १०००

मूल्य रु० १।।)
डाक व्यय पृथक्

॥ कल्पसूत्र की प्रस्तावना ॥

कल्पसूत्र के बारे में ग्रन्थ के पहिले उसका कुछ वर्णन कर दिया है तो भी जैनेतर वा जैनसूत्र के गूढ शब्दों से अपरिचित जनों के लिये अथवा सम्प्रदायिक झगड़े वालों के हितार्थ थोड़ासा लिखना योग्य है.

जैनों में तीर्थंकर एक सर्वोत्तम पुण्यवान पुरुष को माना जाता है ऐसे २४ पुरुष इस जमाने में हुए हैं उन तीर्थंकरों के उपदेश से अन्य जीव धर्म पाते हैं धर्म के जरिये इस दुनिया में नीति से चलकर स्वपर का हित करसक्ते हैं और मरने के बाद कर्मबन्धन सर्वथा छूट जाने से मुक्ति होती है और पीछे जन्म मर्ण होता नहीं क्योंकि जैन मंतव्य में ऐसा ईश्वर नहीं माना है कि जो अपनी इच्छा से अमुक समय बाद मुक्ति के जीवों को भी मुक्ति से हटाकर संसार में घुमावे.

जैनों में ऐसा भी ईश्वर नहीं माना है कि अन्यायी पुरुषों को दंड देने को वा भक्त पुरुषों को धनादि देने को रूप बदल कर आवे अथवा उनकी प्रार्थना से उनका पुत्र होकर संसार की लीला बनाकर आप सीधा मोक्ष में पीछा जावे.

किन्तु जैनोंने ऐसा माना है कि प्रत्येक जीव अपने शरीर बन्धन में पड़ा है और जहां तक उसको ऐसा ज्ञान नहीं होगा कि मैं एक बन्धन में पड़ा हूं वहां तक वह विचारा बालक पशु की तरह शरीर को ही आत्मा मानकर उस शरीर की पुष्टि शोभा रक्षा के खातर ही उद्यम करेगा और उस पुराणे शरीर को छोड़ नये शरीर को धारण कर देव, मनुष्य, नरक, तिर्यंच, में घुमता ही रहेगा और पुण्य पापानुसार अपने सुख दुःख भोगता ही रहेगा.

जिस आदमी के जीव को ऐसा ज्ञान होगा कि मैं शरीर से भिन्न सचेतन हूं, मेरा लक्षण शरीर से भिन्न है मैं व्यर्थ उसपर मोह करता हूं मैं मूर्खता से आज तक दुःख पारहा हूं, मेरा कोई शत्रु नहीं है, मुझे अब वो शरीर का बंधन तोड़ने का उद्यम करना चाहिए, वो ही मनुष्य धर्म में उन्नत होकर धर्मात्मा साधु होता है. और आत्म रमणता में आनन्द मानकर दुःख सुख हर्ष शोक में समता रखता है, वो ही कैवलज्ञान पाकर सर्वज्ञ होता है और कृत कृतार्थ होने पर भी "परोपकारायसतां विभूतिः" मानकर सर्वत्र फिरकर सूर्य, चंद्र, वृक्ष, मेघ के उपकार की तरह सद्बोध द्वारा जीवों को दुःख से बचाता है उन सब सर्वज्ञों

में अधिक पुण्य प्रकृति राजाओं में चक्रवर्त्ती के समान तीर्थंकर की हीं होती है और वे आयुष पूर्ण होने तक उपदेश देने को फिरते रहते हैं.

महावीर प्रभु अंतिम तीर्थंकर इस जमाने में हुवे है और हमारे उपर उन का ही उपकार है दिवाली पर्व उनके निर्वाण (मोक्ष) काल से शरू हुवा है इसलिये उन्ह का चरित्र विस्तार से दिया है बाद में उनसे पहिले पार्श्वनाथ और उनके पहिले नेमिनाथ चरित्र और २० तीर्थंकरों का चारित्र ग्रंथ बढने के भय से समयान्तर बताकर इस जमाने में व्यवहार बताने वाले प्रथम धर्मोपदेष्टा ऋषभदेव प्रभु का चरित्र दिया है क्योंकि सब कलायें हुन्नर राज्य रीति साधुता धर्मोपदेश वगैरः सब उन्होंने प्रथम बताये हैं.

इस कल्प सूत्र के नव विभाग किये हैं जिससे वांचने वाले वा सुनने वालों को सुगमता होती है, अन्याचार्य ज्यादा विभाग भी करते हैं मुझे जिसका ज्यादा परिचय है वो सुबोधिका टीका विनय विजय महाराज की है ऐसी अनेक टीकाऐं संस्कृत गुजराती प्रचलित है जिससे कल्प सूत्र का गहन अर्थ समझ में आवे, मैं निःशंक पणे कह सक्ता हूं कि यह कार्य एक महान् संस्कृतज्ञ हिंदी भाषा जानने वाले का था किंतु ऐसे संयोग शोधने पर भी तीन वर्ष तक राह देखी तो भी कोई ने उद्यम पूरा न किया जिससे मैंनें यह किया है और उसमें श्रावकों की मदत बहुत ली है और अजमेर के श्रावक समाज इसके लिये धन्यवाद के योग्य है किंतु कोई भी त्रुटी रही हो तो उनका दोष नहीं है किंतु मेरी गुजराती भाषा, संस्कृत का कम ज्ञान और दूसरे पंडित वा साधुओं की मदद कम मिली है ये ही मुख्य कारण है कारण पड़ने पर लक्ष्मी वल्लभी कल्प किरणावलि और कच्छी संघ का छपाए हुए गुजराती भाषांतर की मददली है.

कागज का भाव वढने से और जैनों में ज्ञान तरफ भाव मंद होने से पूरी मदद की त्रूटी से और लेने वालों की आर्थिक स्थिति विचार कर थोड़े में ग्रंथ को समाप्त किया है तो भी मूल सूत्र साथ होने से विद्वान को वा विद्वान की रक्षा में रहकर पढने वालों को इच्छित लाभ मिलेगा.

हिन्दी भाषा सार्व देशिक होने से जैनों को अपने ग्रन्थ सरल हिन्दी भाषा में छपवाकर सर्वत्र प्रचार करना चाहिये इस हेतु को ध्यान में रखकर मेरे उपदेश से विद्वान् और धर्म रक्त सोभागमलजी हरकावत ने यह बात अत्युत्तम जानकर परोपकारार्थ अपने सम्बन्धी वृद्धिचन्दजी ढढ्ढा जो एक धर्मात्मा पुरुष थे उन्हीं के मरने के समय पर धर्म्मार्थ रकम जो उनकी ज्ञानवान स्त्री

द्वारा करदी गई थी उसमें से ज्ञानवृद्धि के लिये जो रकम निकाली थी उस रकम को उनकी भार्या सिरहकुंवर और उनकी भातृजा सिरह बाई दोनों बाई विधवा मोजूद हैं उनकी आज्ञा लेकर ५०१) रुपये उसमें मदद देकर उन सोभागमलजी ने छपवाया है और जो कल्पसूत्र अधिक लाभदायी लोगों को मालूम होगा तो उसी द्रव्य से और ग्रन्थ भी वे छपवाकर प्रसिद्ध करेंगे.

कल्पसूत्र में २४ तीर्थंकरों के चरित्र हैं तथा बड़े साधू जो गणधर स्थविर नाम से प्रसिद्ध हैं उनका किंचित् वर्णन है तथा और भी साधुओं के चरित्र हैं उनके गुणों को जानने के लिये और इतिहासिक शोध के लिये यह ग्रन्थ एक अत्युत्तम साधन है. इस ग्रन्थ की मूल भाषा मागधी प्रायः २२०० वर्ष की पुराणी है. उसके रचयिता भद्रबाहु स्वामी होने से उनका कुछ वर्णन यहां करदेते हैं.

पंचम गणधर सुधर्मा स्वामी भगवान महावीर के निर्वाण से १२ वर्ष बाद छद्मस्त साधु और ८ वर्ष केवल ज्ञान पर्याय पालकर १०० वर्ष की उम्र में भगवान महावीर से २० वें वर्ष के बाद मुक्ति गये आज उनको मोक्ष जाने को २४२२ वर्ष हुए हैं उनके शिष्य जंबू स्वामी महावीर निर्वाण से ६४ वर्ष बाद मुक्ति गये उस वक्त दश वस्तु का विच्छेद हुआ.

१ मनपर्यवज्ञान, २ परमावधिज्ञान, ३ पुलाकलब्धि, ४ आहारकलब्धि, ५ क्षपक, ६ उपशम श्रेणी, ७ जिनकल्प, ८ पिछले तीन चारित्र, ९ केवलज्ञान और १० मुक्ति, और जब जंबूस्वामी के शिष्य प्रभवास्वामी, उनके शिष्य शय्यंभवसूरी, उनके यशोभद्र, जिसके संभूति विजय और भद्रबाहु हुए हैं.

भद्रबाहु प्रतिष्ठानपुर नगर के रहने वाले थे और उनके भाई वराह मिहिर के साथ उन्होंने दीक्षा ली दोनों शास्त्रज्ञ होने पर स्थिरता वगैरह भद्रबाहु में अधिक देखकर गुरु ने उनको आचार्य पदवी दी वराह मिहिर नाराज होकर साधुपना छोड़ वाराही संहिता बनाकर ज्योतिष द्वारा लोगों में प्रसिद्ध हुआ राज्य सभा में ज्योतिष की चर्चा में वराह मिहिर भद्रबाहु से हारगया जिससे उसको खेद हुआ और मरकर व्यंतर देव होकर जैनों को दुःख देने लगा जिससे भद्रबाहुस्वामीने 'उवसग्गहरंस्तोत्र' बनाकर जैनों को दिया सर्वत्र शांति होगई उस भद्रबाहु स्वामी ने सामान्य साधू को भी अधिक उपकारी होनेवाला कल्प सूत्र बनाया है अर्थात् सिद्धांत समुद्र से रत्न समान थोड़े में सार बताया है साधू समाचारी चोमासे के लिये जो बनाई है वो देखने से मालूम होजावेगा;

भद्रबाहू के समय में नवमानंद पटणा में राज्य करता था, उनका शिष्य नन्द राजा का प्रधान का पुत्र स्थूलिभद्रजी है. जो कि यद्यपि कल्प सूत्र उनका रचा हुआ है तो भी २४ तीर्थंकरों के चरित्र के बाद स्थविरावली है वह देवर्द्धि क्षमा श्रमण तक की है तो देवर्द्धि क्षमा श्रमण के शिष्य की रची हुई है ऐसा संभव होता है जिस समय कि सूत्र सब लिखे गये उससे पहिले सिर्फ मुंह-पाठ करके साधू साध्वी उसका लाभ लेते थे.

समाचारी को अंत में रखने का कारण यह है कि चरित्रों में विधि मार्ग व्याघात रूप न होवे.

ज्ञान की मंदता से आज से १००० वर्ष पूर्व के आचार्यों ने अपना गच्छ का मंतव्य मुकर्रर कर युक्ति को मंतव्य में खेंचकर जैन समाज में लाभ के बदले कुछ हानि का संभव (गच्छकदाग्रह) भी खड़ा किया है आनंदघनजी महाराज ने २५० वर्ष पहिले १४ वों तीर्थंकर के स्तवन में बताया है कि—

" गच्छना भेद बहुनयण निहालतां तत्वनी वात करतां न लाजे " इसलिये भव्यात्मा मुमुक्षुओं से प्रार्थना है कि कोई भी गच्छ का क्लेश छोड़ सिर्फ साधू के क्षमा, कोमलता, सरलता, निर्लोभतादि दश उत्तम गुणों को धारण कर अपनी परम्परा से चली हुई विधि अनुसार दूसरों की निंदा किये विना मध्यस्थ भाव में रहकर कल्प सूत्र के कल्पानुसार आत्मा निर्मल करना, पूर्व कर्मों को समता से सुख दुःख में धीरता रखकर भोगना दूसरे जीवों को समाधि उत्पन्न कराना अपनी युक्ति, बुद्धि का ऐसा उपयोग करना कि अन्य पुरुषों को अपनी परमार्थ वृत्ति ही नजर आवे.

पहिला व्याख्यान में नवकल्पों का वर्णन और महावीर प्रभुका चरित्र की शरुआत होती है. और महावीर प्रभु को देवा नंदाकी कुक्षिमें देख कर सौधर्म इंद्र देवलोक में जो बैठा है उसने प्रभु को नमस्कार किया. और नमुत्थुणं का पाठ पढा.

दूसरे व्याख्यान में प्रभु को ब्राह्मणी की कुक्षि में देखकर क्षत्रि राजवंशी कुल में प्रभु को बदलने का विचार किया और ऐसे दश आश्चर्य बताकर प्रभु के २७ भवों का वर्णन बताया. और त्रिशला देवी की कुक्षि में बदलने पर उसने १४ स्वप्न देखे. उनमें से ४ स्वप्नों तक का वर्णन है.

तीसरे व्याख्यान में बाकी के दश स्वप्नों का वर्णन और त्रिशला राणी का

जागृत होकर राजा के पास जाना और राजाने जागृत होकर सब सुनकर प्रभात में जोतिषिओं को बुलाकर हाल सुनाना.

चोथे व्याख्यान में माता के दोहद और प्रभुका जन्म होना बताया.

पांचवे में दीक्षा तक का चरित्र है छठ्ठे में साधू का उत्तम आचरण पालना परिसह सहना केवल ज्ञान और मुक्ति संपदा का वर्णन है.

सातवे व्याख्यान में पार्श्वनाथ नेमिनाथ चरित्र और २० तीर्थकरों का अंतर है ऋषभदेव का चरित्र है.

आठवे व्याख्यान में स्थविरावली है.

नवमें व्याख्यान में साधुओं की चोमासे की विशेष समाचारी है.

मरौ भूमौ श्रेष्ठं, नगर मजमेरं प्रशमदं ।
स्थितोहं श्राद्धानां गुण रुचिवतां ज्ञान रतये ॥
व्यधायि व्याख्यानं सुगुरु कृपया कल्प कथनं ।
पुरा पुण्याद्बन्धो ! पठतु च भवान्मोक्ष जनकं ॥ २ ॥
वैशाखे शनिवासरे शुभ तिथौ युग्माब्धि वेदाक्षिके ।
पञ्चम्यां लिखितः समाधि जनकः पक्षे च शुक्ले तरे ॥
दृष्ट्वा वृद्धि शशी सुधी र्निजधनं धर्मार्थ माशंसत ।
तत्सौभाग्यमलेन पुण्यमतिना दत्तं यतो मुद्रणे ॥ ३ ॥

ता० १८ जून १९१६.
लाखन कोटड़ी अजमेर.

मुनि माणक्य.

५१) रुपये बीजराजजी कोठारी मिर्जापुर वाले.

२१) रुपये श्रीरामजी देहली नवघरे वाले ने प्रथम देकर बडी सहायता की है और जिन्होंने पहिले रकम देकर अथवा पहिला नाम नोंधाकर ग्रंथ की कदर की है उन सब को इस जगह धन्यवाद देने योग्य हैं.

प्रकाशक-सोभागमल हरकावत.

* अर्हम् *

॥ शासन नायक महावीर प्रभु और सद्बोध दाता परम गुरु महाराज पन्यासजी श्री हर्ष मुनिजी आदि पूज्य पुरुषों को नमस्कार करके कल्पसूत्र का हिन्दी भाषान्तर हिन्दी जानने वालों के लिये मूल सूत्र के साथ लिखता हूं:-

कल्प सूत्र।

कल्प शब्द से साधु का मोक्ष मार्ग आराधन के लिये आचार जानना; और उन आचारों को सूचित करना वो कल्प सूत्र है अर्थात् कल्प सूत्र में साधुओं का आचार (कर्त्तव्य वर्तन) बताया है।

जैनियों में सब पर्वों में पर्यूषण पर्व मुख्य है। प्रथम कल्प सूत्र के बांचने और पठन पाठन के अधिकारी साधू ही थे, परन्तु आनन्दपुर नगर में ध्रुव सेन राजा के पुत्र के शोक निवारणार्थ राज सभा में उक्त सूत्र को सुनाया उस दिन से चतुर्विध संघ साधू, साध्वी, श्रावक, श्राविका, पठन पाठन और श्रवण करने के अधिकारी हुये और प्रायः सर्वत्र साधु, साध्वी, श्रावक, श्राविका, सुनते हैं। साधू साध्वी की पठन पाठन की विधि टीकाओं से जान लेनी।

कल्प (आचार वर्तन)

साधुओं का आचार दस प्रकार का है (१) जीर्ण वस्त्र (२) निर्दोष आहार (३) घर देने वाले का आहार आदि न लेना (४) राजाओं का आहार आदि न लेना (५) बड़े साधू को वंदन करना (६) पांच महाव्रत को पालना (७) बड़ी दीक्षा से चारित्र पर्याय जाणना (८) देवसी, राई, पक्खी, चौमासी, सम्वत्सरी प्रतिक्रमण विधि अनुसार करना (९) आठ मास ग्राम ग्राम विहार करना (१०) वर्षा ऋतु में एक जगह पर रहना।

साधू के आचार में और तीर्थंकरों के आचार में क्या भेद है अथवा चौवीस तीर्थंकरों के साधूओं में क्या भेद है वो ग्रन्थान्तर से जान लेना।

यहां पर थोड़ासा बताते हैं:-

दश कल्पों की गाथा.

आचेलक्कुद्देसिय, सिज्जायर रायपिंड किइकम्मे;
वय जिट्ठपडिक्कमणे, मासं पज्जोसण कप्पे।

तीर्थंकरों के लिये प्रथम कल्प ऐसा है कि वे इन्द्र का दिया हुआ देव दुष्य वस्त्र दीक्षा के समय कंधे पर डालते हैं वो गिर जावे तो पीछे पहला और अंतिम तीर्थंकर अचेलक ही रहते हैं उनके पुण्य तेज से दूसरे को नग्न नहीं दीखते और २२ तीर्थंकरों को निरंतर वस्त्र रहता है और कल्पों में तीर्थंकरों का विशेष वर्णन देखने में नहीं आया इसलिये सिर्फ २४ तीर्थंकर के साधुओं का ही भेद बताते हैं.

साधुओं के कल्पों का भेद.

मोक्ष के अभिलाषी साधुओं के कल्पों में भेद होने का कारण सिर्फ कालानुसार उन की बुद्धि का भेद है.

ऋषभदेव के साधु प्रायः ऋजु जड होने से उनकी समझ में खामी थी और अनजान में अधिक दोष न लगावें इसलिये दश कल्प यथा विधि पालना एक फर्ज रूप है. महावीर प्रभु के साधु वक्रजड होने से उनको समझ में कम आवे और वक्र होने से उत्तर भी सीधा नहीं देवे इसलिये उनको दोष विशेष नहीं लगे इसलिये दशों ही कल्प पालना आवश्यक बताया है.

अजित प्रभु से लेकर पार्श्वनाथ तक के साधु ऋजु प्रज्ञ होने से उनको समझ में शीघ्र आवे और निष्कपट होने से अधिक दोष का संभव नहीं और अल्प दोष आवे तो शीघ्र गुरु को सत्य कहकर निर्मल होजावे, इसलिये उनके दृष्टांत बताये हैं.

एक नाटक ऋषभदेव महावीर और बीच के २२ तीर्थंकरों के साधुओं ने देखा और देर से आये गुरु के पूछने पर ऋषभदेव के साधुओंने सरल गुण से सत्य कहा. गुरुने कहा कि आपको ऐसा नाटक देखना नहीं चाहिये. दूसरी वक्त फिर नाटक देखा और देर से आये गुरु के पूछने पर सत्य कहा, गुरुने कहा कि आपको नाटक की मना की थी फिर क्यों देखा? वो बोले, महाराज! हमने पूर्व में पुरुष का नाटक देखा आज तो स्त्री का देखा है. गुरुने कहा कि ऐसा नाटक स्त्रियों का अधिक मोहक होने से साधुओं को त्याज्य है अब नहीं देखना. यह दृष्टांत से मालूम होता है कि उनकी बुद्धि जडतासे विशेष नहीं पहुंच सकी के स्त्री का नाटक नहीं देखना.

महावीर के साधुओंने वक्रता से उत्तर भी सीधा न दिया, धमकाने पर सत्य कहा. गुरुने मना किया, परन्तु दूसरी वक्त भी देखा और गुरुने फिर धमकाये तो सत्य बोलकर वक्रता से बोले कि ऐसा था तो आपने पुरुष के नाटक के साथ स्त्री का नाटक भी क्यों निषेध न करा?

और २२ तीर्थंकरों के साधु तो नाटक देखै नहीं, देखै तो सत्य कहै और दूसरी वक्त समझ जावें कि पुरुष से स्त्री अधिक मोहक है इसलिये देखने खड़े न रहे.

इसलिये २२ तीर्थंकरो के साधुओं को १० कल्प में कुछ नियत कुछ अनियत हैं.

(१) अचेलक पणा का नियम नहीं, चाहे जीर्ण अल्प-मूल्य का अथवा पंच रंगी वहु मूल्य का वस्त्र पहरे उनको दोष न लगे ऐसा वर्त्तन रखे अर्थात् २२ तीर्थंकरो के साधुओं को यह कल्प अनियत है. दो तीर्थंकरो के साधुओं को नियत है कि अल्प मूल्य के वस्त्र पहरे.

(२) दूसरा कल्प नियत है अपने निमित्त किया हुआ आहारादि न लेवे अर्थात् साधु के निमित्त आहारादि वनावे तो साधु न लेवे परन्तु २२ तीर्थंकरो के साधुओं को विशेष यह है कि जिसके निमित्त हो उस साधु को न कल्पे दूसरों को कल्पे और ऋषभ महावीर के साधुओ को वो आहार जिस साधु के निमित्त वनाया हो वो आहारादि सब साधुओं को न कल्पे सिर्फ गृहस्थोंने अपने लिये ही वनाया हो वो साधुओं को कल्प सकता है वोही ले सकैं.

(३) जिस गृहस्थ के मकान मे ठहरे उसका आहारादि कोई भी साधु को न लेना चाहिये.

१ अशन २ पान ३ खादिम ४ स्वादिम चार प्रकार का आहार न कल्पे. ५ वस्त्र ६ पात्र ७ कंवल ८ रजोहरण ६ सूई १० पिप्फलक ११ नख कतरणी १२ कर्ण शोधन शली यह १२ वस्तु न कल्पे. दोष का संभव और वस्ती का अभाव न होवे इसलिये मना की है परन्तु रात्रि को जागृत रहकर प्रभात का प्रतिक्रमण अन्यत्र करे तो जहां प्रतिक्रमण किया उसका घर शय्यातर होवे यदि जो रात को नींद वहां हीं लेवे और दूसरी जगह प्रभात का प्रतिक्रमण करे तो दोनों ही घर शय्यातर होवें.

इतनी चीज शय्यातर की काम लगे.

तृण डगल भस्म (राखोड़ी) मल्लक पीठ फलग शय्या संथारो लेपादि वस्तु—

और उसका घर का लड़का दीक्षा लेवे तो सब उपकरण सहित लेना कल्पे (वो साधु लेसकते हैं).

(४) राजपिंड २२ तीर्थंकरो के साधुओं को कल्पे क्योकि वो समयज्ञ होने से निंदा नहीं कराते न उनको कोई अपमान करसकते वो राजा सेनापति पुरोहित नगर सेठ अमात्य और सार्थवाह युक्त राज्याभिषेक से भूषित होना चाहिये.

(५) कृति कर्म-यह कल्प नियत है वड़े साधुओं को छोटे साधु अनुक्रम से वंदन करें २४ तीर्थकरों के साधु इस तरह वंदन करते हैं. साध्वी वड़ी होवे तो भी छोटे साधु को वंदन करे.

(६) व्रत-२४ तीर्थकरों के साधुओं के व्रत में मुख्य पांच होने पर भी प्रथम अंतिम तीर्थकरों के साधुओं को पांच व्रत से रात्रि भोजन विरमण व्रत अलग वताया जो हिंसादि दोषों का पोषक है और २२ तीर्थकरों के साधु समयज्ञ होने से जीव रक्षा, सत्य वचन, चोरी त्याग, ब्रह्मचर्य, परिग्रह त्याग यह पांच में से स्त्री को परिग्रह रूप मान कर ब्रह्मचर्य को परिग्रह त्याग में मानते हैं इसलिये चार व्रत उनके गिनते हैं.

(७) ज्येष्ठ पद-साधु दीक्षा लेवे उसको जडता से दोष होने का संभव होने से दूसरी दीक्षा देते हैं वो दीक्षा से चारित्र का समय गिनते हैं और जिसकी वडी दीक्षा प्रथम हुई वो ही वडा गिना जाता है. ऋषभ महावीर के साधुओं को दो दीक्षाएँ होती हैं किन्तु २२ तीर्थकरों के साधुओं को एक ही दीक्षा होती है और वहां से चारित्र समय गिना जाता है.

(८) प्रतिक्रमण कल्प अनियत है-दोष होवे तो २२ तीर्थकरों के साधु प्रतिक्रमण देवसी राई करें अन्यथा नहीं किन्तु ऋषभ महावीर के साधुओं को देवसी राई पक्खी चौमासी संवत्सरी प्रतिक्रमण अवश्य करना चाहिये.

(९) मास कल्प-वर्षा ऋतु असाढ सुद १४ से कार्तिक सुद १४ तक एक जगह रहे आठ मास फिरते रहें. और एक मास से विना कारण अधिक न रहें वो मास कल्प २२ तीर्थंकरों के साधुओं को अनियत है चाहे दोष लगे तो एक दिन में भी विहार करें दोष न लगे तो वर्षों में भी विहार न करें निर्मल चारित्र पालें.

(१०) पर्युषण कल्प-चार मास एक जगह रहकर वर्षा ऋतु निर्वाह करना यह कल्प अनियत है २२ तीर्थंकरों के साधु वर्षा हो तो ठहरें नहीं तो विहार करें प्रथम और अंतिम तीर्थंकर के साधुओं को वर्षा हो चाहे न हो किन्तु रहना ही चाहिये तो भी दुकाल और रोग उपद्रव के कारण विहार करसक्ते हैं. वर्षा के कारण छमास भी एक जगह रहसकते हैं.

यह सब बातें साधु साध्वीओं का निर्मल चारित्र रहे और वे निर्मल वर्तन वाले रहकर लोगों को धर्म बताकर सुमार्ग में चलावें और मोक्ष मार्ग के अधिकारी आप वनें दूसरों को वनावें इस हेतु से कल्प नियत अनियत है इसका विशेष हाल गुरु मुख से जान सक्ते हैं क्योंकि समयानुसार योग्य फेर फार करने का अधिकार गीतार्थों को दिया गया है जैसे कि यति साधु एक होने पर भी द्रव्य संग्रही जतिओं से साधुओं को भिन्न बताने को पीत्त वस्त्र धारण करने की प्रथा सत्य विजय पन्यास के समय से शुरु है ॥

पर्यूषण पर्व ।

चार मास एक जगह रहने के लिये क्षेत्रादि के तेरह गुण देखना चाहिये (१) जहां मिट्टी से विशेष कीचड़ न हो (२) जहां सम्मुर्छिम जंतु की उत्पत्ति कम हो (३) जहां थंडिल मात्रा की जगह निर्दोष हो (४) रहने का मकान ऐसा हो कि जिस में ब्रह्मचर्य की रक्षा होती हो (५) कारण पड़ने पर दूध दही मिल सक्ता हो (६) जहां के पुरुष गुणानुरागी और भद्रक हों (७) जहां निपुण भद्रक वैद्य हो (८) औषधि शीघ्रता से योग्य समय पर मिल सक्ती हो (९) गृहस्थी धन धान्य और मनुष्यों से सुखी हों (१०) राजा साधू का रागी हो (११) जैनेतर (ब्राह्मणादि) से साधू वर्ग को पीड़ा न हो (१२) समय पर गोचरी मिलती हो (१३) पठन पाठन उत्तम प्रकार से होता हो ।

जघन्य गुण ।

जो तेरह गुण वाला क्षेत्र न मिले तो चार गुण तो अवश्य ही शोधना (१) विहार भूमि (जिन मंदिर) नजदीक हो (२) थंडिल की जगह नजदीक हो (३) पठन पाठन अच्छा होता हो (४) भिक्षा अनुकूल मिलती हो । कम से कम ये चार गुण अवश्य शोधना चाहिये ।

पर्यूषण पर्व में कल्प सूत्र सुनने का लाभ ।

दोष के अभाव में चारित्र की निर्मलता रक्खै, ज्ञान की वृद्धि होवे और सम्यग् दर्शन की स्थिरता होवे और मंद बुद्धि वा अजाण पणे में जो दोष लगे हों वे दूर होजावें क्योंकि कल्प सूत्र में सम्पूर्ण आचारों के पालने वाले तीर्थंकर, गणधर, और आचार्यों के चरित्र हैं और चौमासे के जो विशेष आचार हैं वो इसमें बताये हैं क्योंकि आचार की शुद्धि से सर्व कर्मों की निर्जरा होती है, शुभ भावना होती है, इसलिये इस लोक में पाप से बचाने वाला और परलोक में सुगति देने वाला कल्पसूत्र प्रत्येक पुरुष स्त्री को लाभ दाई है इसलिये उसको सम्यक् प्रकार से सुनना चाहिये ।

पर्यूषण पर्व में आवश्यक कर्त्तव्य ।

(१) जिन मंदिरों का दर्शन, पूजन, बहुमानता (२) अट्ठम तप करना (३)

स्वामी वात्सल्य करना (४) परस्पर वैर विरोध प्रतिक्रमण से दूर करना (५) जीव रक्षा के योग्य उपाय करना (६) अर्थात् पर्व के दिनों में तन मन धन से जैन धर्म की उन्नति करना।

कल्पसूत्र के उद्धारक (रचयिता) सिद्धांत में से अमृत समान थोड़े सूत्रों में अधिक रहस्य बताने वाले भद्रबाहू स्वामी चौदह पूर्व के पारगामी थे उन्होंने दशाश्रुत स्कंध और नवमा पूर्व से उद्धार किया है।

पूर्व।

जैन शास्त्रों में अंग उपांग कालिक उत्कालिक इत्यादि अनेक भेद हैं जिन में पूर्व बारहवां अंग में है बारहवां अंग दृष्टिवाद है उस अंग का विषय रहस्य बहुत बड़ा है और पूर्व का लिखना अशक्य है बाल जीवों को समझाने के लिये कहा है कि पहले पूर्व का रहस्य लिखने के लिये एक हाथी जितना ऊंचा शाही का ढेर चाहिये और प्रत्येक को दुगट गिनने से चौदवां पूर्व आठ हजार एक सो बाणूं हाथी जितना शाही का ढेर चाहिये सब पूर्वों का हिसाब गिनती में १-२-४-८-१६-३२-६४-१२८-२५६-५१२-१०२४-२०४८ ४०९६-८१९२सब मिलके १६३८३ होते हैं इतना रहस्य समझने वाले भद्र बाहू स्वामी ने इस ग्रंथ की रचना की है इसलिये कल्पसूत्र माननीय है और उस सूत्र का अर्थ भी बहुत गंभीर है इस कल्पसूत्र के रहस्य में कुछ लिखते हैं।

अट्ठम (तीन उपवास) तप की महिमा।

चंद्रकान्त नाम की नगरी, विजयसेन राजा, श्रीकान्त नाम का सेठ, श्री सखी नाम की भार्या पृथ्वी ऊपर भूषण रूप थे. यथा विधि धर्म ध्यान करने से श्रीकान्त के पुत्र रत्न हुवा. पर्युषण में अट्ठम तप करने की बात दूसरों के मूंह से सुनी, सुनते ही बालक को पूर्व भव का ज्ञान हुवा और बालकने अट्ठम तप किया, कोमल वय और दूध नहीं पीने से वो अशक्त और मरने समान होगया, माता पिताने उपचार किया परन्तु बालक तो कुछ भी औषधि न लेने से मृत समान होगया उसको मरा हुवा देखके (समझ के) जमीन में गाड दिया. पुत्र के शोक से विह्वल होकर उसके माता और पिताने भी प्राण छोड़ दिये. राजाने सेठ के सपरिवार मृत्यु होने के समाचार सुनकर उसका धन लेने को अपने नोकर भेजे. अट्ठम तप के प्रभाव से धरणेन्द्र का आसन कम्पा-

यमान हुवा वो अवधि ज्ञान द्वारा सर्व वार्ता को जानकर ब्राह्मण के स्वरूप में आकर सेठ के धन और घर की रक्षा करने लगा और राजा के सेवकों को माल नहीं लेजाने दिया. ये समाचार नोकरों द्वारा राजा सुनकर स्वयं वहां आया और हाथ जोड़ कर कहने लगा कि हे भूदेव ! इस में आप क्यों विघ्न डालते हो ? ब्राह्मण (इन्द्र) ने उत्तर दिया, कि इस संपत्ति का मालिक जिन्दा है और उसी समय जमीन से उस बालक को निकाल और अमृत छांट कर जागृत किया और राजा से कहा कि हे राजन ! इस बालक की रक्षा करने से आपको बहुत लाभ होवेगा. राजाने हाथ जोड़कर पूछा, हे भूदेव ! कृपाकर अपना परिचय दीजिये. तब इन्द्र ने अपना साक्षात् रूप प्रकट करके कहा कि इस बालक के तप के प्रभाव से मेरा आसन कम्पायमान हुवा, तो मैंने अवधि ज्ञान द्वारा सर्व रहस्य जानकर इस बालक की सेवा के लिये यहां आया हूं। यह बालक पूर्व भव में बहुत दुःखी था और एक समय अपने मित्र से अपनी दुःख की कथा कही तो मित्रने अट्ठम तप का रहस्य समझाकर इसे अट्ठम तप करने के लिये कहा. बालक ने पर्युषण पर्व में इस तप का करने का विचार कर शान्ति से निद्रा ली परन्तु सोत माताने इसे सोता देख अपनी द्वेष बुद्धि से उस झोंपड़े (मकान) में आग लगादी, जिसके द्वारा इस की मृत्यु होगई, परन्तु उस समय के अट्ठम तप के शुभ भाव से इस का जन्म यहां हुवा और पर्यूषण पर्व में अट्ठम तप करने की बात सुनकर इस बालक को जाति स्मर्ण ज्ञान प्राप्त हुवा, जिस के द्वारा अपने पूर्व भव में किये हुवे विचार के स्मर्ण होने से इसी लघुवय में ही यह अट्ठम तप किया, इस कारण से इसने माता का दूध न पीया। इन सर्व भेदों से अनजान होने के कारण माता पिताने बालक को किसी प्रकार का रोग हुवा समझकर औषधि का उपचार (उपाय) करना चाहा परन्तु बालकने तप में पक्का होने से कोई दवा न पी. लघुवय के कारण अचेत होगया, परन्तु सर्व लोकों ने उसे मरा हुवा समझकर जमीन में गाड़ दिया और इसके माता पिताने भी शोक से विह्वल हो प्राण त्याग दिये। इस प्रकार से राजा को समझाकर इन्द्र महाराज ने कहा, कि हे राजन ! अब इस बालक की आप रक्षा करें और इस बालक द्वारा आपका बहुत भला होगा। यह बचन सुनकर तथा इन्द्र महाराज को पहिचान कर राजा हाथ जोड़ कर खड़ा हुवा और सविनय कहने लगा कि आप की आज्ञा शिरोधार्य्य है, इन्द्र तो अपने स्थान को सिधाये और राजा बालक को पुत्रवत् पालन करने लगा

और नाम संस्कार के समय नागकेतु नाम स्थापित किया. विद्या पढ़कर व धर्म की उत्तम शिक्षा पाकर वह बालक अर्थात नागकेतु नित्य सामायिक देव पूजन प्रतिक्रमण इत्यादि शुभ क्रियाओं को करता हुवा समय विताने लगा। परोपकार तन, मन, और धन तीनों से करने लगा और सम्यगदर्शन ज्ञान चारित्र को मुख्य मानकर यथाशक्ति समय पर पौषध इत्यादि करता हुवा अर्थात् एक धर्मात्मा पुरुष तरीके अपना जीवन (आयु) निर्वाह करने लगा। एक समय राजाने एक मनुष्य को चोरी के अपराध में चोर नहीं होते हुए भी शक से शिक्षा के हेतु फांसी की आज्ञा दी, मरती समय शुभ परिणाम के रहने से वो मनुष्य व्यंतर देव हुवा, अवधि ज्ञान द्वारा राजा को पूर्व भव में फांसी की आज्ञा देने वाला जानकर उसको द्वेष बुद्धि उत्पन्न हुई और अपनी शक्ति द्वारा राजा को सिंहासन से नीचे गिरा दिया और उस सर्व नगरी का नाश करने के हेतु एक नगर के समान लम्बी चोड़ी पत्थर की शिला नगर पर छोड़ दी, नागकेतु ने सर्व जीवों के प्राणों को बचाने और जिन मंदिरों की रक्षा करने के हेतु एक मंदिर के शिखर की चोटी पर चढ़कर और पञ्च परमेष्ठि मंत्र का जाप कर उस महान् शिला को अपनी ऊंगली पर रोकली. देवता भी उसके तेज से घबरा गया तब नागकेतु ने देवता को सदुपदेश दिया जिससे उसने शिला पीछी हटाई. राजा को भी अच्छा किया सर्व नग्र के लोक नागकेतु की स्तुति करने लगे।

एक समय नागकेतु जिनेश्वर भगवान् की पूजा कर रहा था उस समय एक तंबोलिया सर्प ने नागकेतु को डसा, परन्तु उस महान परोपकारी पुरुष को जरा भी द्वेष उत्पन्न न हुवा अपने पूर्व कर्मों का फल समझकर जिनराज के ध्यान में लीन हुवा उसी समय उसे केवल ज्ञान उत्पन्न हुवा और वहीं देवताओं ने इसके उपलक्ष्य में पुष्पों की वर्षा की और साधू वेष लाकर उसे दिया जिसे धारण कर अनेक भव्य जीवों को सदुपदेश द्वारा तारते हुए इस असार संसार को त्याग मोक्ष पुरी को सिधाये। हे भव्य जीवों! आप लोग भी इसी प्रकार पर्युषण पर्व में यथाशक्ति तपस्या करें, जिनमंदिर में दर्शन पूजन करें, साधु वंदन, संवत्सरी प्रतिक्रमण इत्यादि धर्म क्रिया करते रहें, चोरासी लाख जीव योनी से परस्पर अपराध क्षमावें और जीव रक्षादि परोपकार से स्वपर को शांति दें।

———:-o-o-:———

Seth Bridhi Chand Daddha.

सेठ वृद्धिचंद डड्ढा.

लक्ष्मी आर्ट, भायखळा, बम्बई

श्रीदशाश्रुतस्कन्धे, श्रीपर्युषणाकल्पाख्यं स्वामिश्रीभद्रबाहु-
विरचितम्—

श्रीकल्पसूत्रम्.

❀ मंगलाचरण ❀

नवकार मंत्रः सूत्र (१)

ॐ श्रीवर्द्धमानाय नमः ॥ॐ॥ अर्हं ॥ नमो अरिहंताणं, नमो सिद्धाणं, नमो आयरियाणं, नमो उवज्झायाणं, नमो लोए सव्वसाहूणं ॥ एसो पंचनमुक्कारो, सव्वपावप्पणासणो, मंगलाणं च सव्वेसिं, पढमं हवइ मंगलं ॥[१] १ ॥

पहिले तीर्थंकर श्री ऋषभदेवजी का और अन्तिम तीर्थंकर श्री महावीर स्वामी का अर्थात् दोनों तीर्थंकरों का आचार एकसा है और इस समय के साधुओं को श्री महावीर स्वामी का आचार अधिक उपकारी है. इस सूत्र में तीर्थंकर गणधर सर्व का चरित्र और महान आचार्यों की पट्टावली दी है, इस वास्ते ये ग्रंथ सुनने वाले तथा सुनाने वाले को अधिक लाभ देने वाला है.

❀ महावीर चरित्र ❀

मूल सूत्र (२)

तेणं कालेणं तेणं समएणं समणे भगवं महावीरे पंच-हत्थुत्तरे हुत्था, तंजहा, हत्थुत्तराहिं चुए—चइत्ता गब्भं वक्कंते ?

---

१ सूत्रद्वयमेतदीय संख्यातम्

हत्थुत्तराहिं गब्भाओ गब्भं साहरिए २ हत्थुत्तराहिं जाए ३ हत्थुत्तराहिं मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारिअं पव्वइए ४ पडिपुन्न केवलवरनाणदंसणे समुप्पन्ने ५ साइणा परिनिव्वुए भयवं ६ ॥ २ ॥

इस सूत्र में श्रीमन् महावीर प्रभु को उत्तर फाल्गुनी नक्षत्र में पांच बातें हुई हैं वे बताई हैं.

माता के उदर (पेट) में आना वो च्यवन, एक स्थान से दूसरे स्थान में गर्भ ले जाना वो गर्भसाहरण, जन्म, दीक्षा, (साधूपण लेना) केवल ज्ञान और मोक्ष. इन छे बातों में प्रथम की पांच उत्तरा फाल्गुनी नक्षत्र में और छठी मोक्ष स्वाति नक्षत्र में हुआ.

कल्याणकः—तीर्थंकरों का माता के गर्भ में आना, जन्म लेना, दीक्षा लेना, केवल ज्ञान प्राप्त करना, और मोक्ष में जाना भव्य आत्माओं को कल्याणकारी होने से ये प्रत्येक तीर्थंकर के ५ कल्याणक माने जाते हैं. अन्तिम तीर्थंकर श्री महावीर प्रभु को गर्भापहार अधिक हुवा उसे भी कितने ही आचार्य्य कल्याणक मानते हैं और कितने ही नहीं मानते अपेक्षा पूर्वक तत्वज्ञानी गम्य हैं.

❀ श्रीमन महावीर प्रभु की कल्याणक तिथियें ❀

सूत्र (३)

तेणं कालेणं तेणं समएणं समणे भगवं महावीरे जे से गिम्हाणं चउत्थे मासे अट्ठमे पक्खे आसाढसुद्धे तस्सणं आसाढसुद्धस्स छट्ठीपक्खेणं महाविजयपुप्फुत्तरपवरपुंडरीयाओ महाविमाणाओ वीसंसागरोवमट्ठिइयाओ आउक्खएणं भवक्खएणं ठिइक्खएणं अणंतरं चयं चइत्ता इहेव जंबुद्दीवे दीवे भारहे वासे दाहिणड्ढभरहे इमीसे ओसप्पिणीए सुसमसुसमाए समाए विइक्कंताए १ सुसमाए समाए विइक्कंताए २ सुसमदुसमाए समाए विइक्कंताए ३ दुसमसुसमाए समाए बहुवि-

इक्कंताए—सागरोवमकोडाकोडीए बायालीसवेसाससहस्सेहिं ऊ-णिआए पंचहत्तरिवासेहिं अद्धनवमेहि य मासेहिं सेसेहिं—इ-क्कवीसाए तित्थयरेहिं इक्खागकुलसमुप्पन्नेहिं कासवगुत्तेहिं, दोहि य हरिवंसकुलसमुप्पन्नेहिं गोअमसगुत्तेहिं, तेवीसाए ति-त्थयरेहिं विइक्कंतेहिं, समणे भगवं महावीरे चरमतित्थयरे पुव्व-तित्थयरनिद्दिट्ठे, माहणकुंडग्गामे नयरे उसभदत्तस्स माहणस्स कोडालसगुत्तस्स भारिआए देवाणंदाए माहणीए जालंधरस-गुत्ताए पुव्वरत्तावरत्तकालसमयंसि हत्थुत्तराहिं नक्खत्तेणं जो-गमुवागएणं आहारवक्कंतीए भववक्कंतीए सरीरवक्कंतीए कुच्छि-सि गब्भत्ताए वक्कंते ॥ ३ ॥

आज से २४४२ वर्ष पहले महावीर प्रभु का निर्वाण हुवा उसके ७२ वर्ष पहिले के समय में ग्रीष्म (गर्मी) ऋतु के चोथे मास वा आठवें पक्ष के छट्ठे दिन अर्थात् आषाढ सुदि ६ के रोज श्रीमन् वीर प्रभु का जीव महा विजय पुष्पोत्तर पुंडरिक नाम के बड़े विमान से वीस सागरोपम की स्थिति पूरी करके अर्थात् देवभव पूरा करके सीधे देवलोक से इस जंबूद्वीप के भरतक्षेत्र के दक्षिण भाग में इस वर्तमान अवसर्पिणी काल के (१ सुखम सुखम्. २ सुखम ३ सु-खम दुखम् ४ दुखम सुखम इन चार आरों के वीत जाने में कुछ पिच्योत्तर वर्ष साडे आठ मास बाकी रहे तब [चार आरों का समय प्रमाणः १ चार कोड़ा कोड़ी सागरोपम का. २ तीन कोड़ा कोड़ी सागरोपम का. ३ दो कोड़ा कोड़ी सागरोपम का. ४ एक कोड़ा कोड़ी सागरोपम में बयालीस हजार वर्ष कम का]) चोथे आरे के अंत में माता के उदर में आये. उनके पहले २१ तीर्थकरोंने इक्ष्वा-कुकुल और काश्यप गोत्र में और २ तीर्थकरोंने हरिवंश कुल और गौतम गोत्र में जन्म लिया. इन २३ तीर्थकरों ने केवलज्ञान द्वारा पहले ही कहा था कि (२४) चौवीसवें तीर्थंकर श्री महावीर प्रभु ब्राह्मण कुंड नग्र में कोडाल गोत्र के ब्राह्मण ऋषभदत्त की जालंधर गोत्र की ब्राह्मणी देवानंदा नामी स्त्री के कूख में मध्य-

१-३ साए १ चरिमे.

रात के समय उत्तरा फाल्गुनी नक्षत्र में चंद्र योग में देवता के शरीर को छोड़कर मनुष्य सम्बन्धी आहार और भव ग्रहण कर (माता के उदर में) आवेंगे उसी मुजब महावीर स्वामी का जीव माता के उदर में आया.

सूत्र (४)

समणे भगवं महावीरे तिन्नाणोवगए आविहुत्था-चइस्सामित्ति जाणइ, चयमाणे न याणइ, चुएमि त्ति जाणइ ॥ जं रयणिं च णं समणे भगवं महावीरे देवाणंदाए माहणीए जालंधरसगुत्ताए कुच्छिंसि गब्भत्ताए वक्कंते, तं रयणिं च णं सा देवाणंदामाहणी सयणिज्जंसि सुत्तजागरा ओहीरमाणी २ इमेआरूवे उराले कल्लाणे सिवे धन्ने मंगल्ले सस्सिरीए चउद्दस महासुमिणे पासित्ताणं पडिबुद्धा, तंजहा, गय[1]-वसह[2]-सीह[3]-अभिसेअ[4]-दाम[5]-ससि[6]-दिणयरं[7]-झयं[8]-कुंभं[9] । पउमसर[10]-सागर[11]-विमाणभवण[12]-रयणुच्चय[13]-सिहिं[14] च ॥ १ ॥—॥ ४ ॥

महावीर स्वामी जिस समय माता के उदर में आये उसी समय उन्हें मति, श्रुति और अवधि ये तीन ज्ञान प्राप्त थे इसलिये च्यवन होने की और होगया ये दो बात वे जानते थे परन्तु च्यवता हूं वो "समय" मात्र काल होने से केवल ज्ञान न होने से वो बात नहीं जानते थे जिस रात को भगवान् महावीर प्रभु देवानंदा की कूख में आये उसी रात को देवानंदा ने पलंग पर सोते हुवे अल्प निद्रा में (अर्थात् आधी नींद और आध जागते ऐसी अवस्था में) उदार कल्याणकारी उपद्रव हरनेवाले धन देने वाले मंगलीक सोभायमान उत्तम १४ स्वप्न देखे. जो इस प्रकार हैं:—१ गज (हाथी) २ वृषभ (बैल) ३ सिंह (शेर) ४ अभिषेक (लक्ष्मी देवी का स्नान) ५ पुष्पों की माला का जोड़ा. ६ चंद्र. ७ सूर्य. ८ ध्वजा. ९ कलश. १० पद्म सरोवर. ११ क्षीर सागर. १२ विमान. (भवन) १३ रत्नों का ढेर १४ निर्धूम अग्नी. इस प्रकार के चवदह स्वप्न देखे. (यह स्वप्न सब तीर्थंकरों की अपेक्षा से कहे हैं)

१-२ कयंयपुष्फतोपित्र.

❀ चौवीस तीर्थंकरों की माताओं के स्वप्नों का भेद ❀

प्रथम तीर्थंकर श्री ऋषभदेव स्वामी की माता ने प्रथम स्वप्न में वृषभ (वैल) देखा और अंतिम तीर्थंकर श्री महावीर प्रभु की माता ने प्रथम स्वप्न में सिंह देखा और जो तीर्थंकर स्वर्ग में से आते हैं उनकी माता १२ वें स्वप्न में विमान देखती है और जो नरक में से आते हैं उनकी माता भुवन देखती है.

सूत्र (५)

तएणं सा देवाणंदा माहणी इमे एयारूवे उराले कल्लाणे सिव धरणे मंगल्ले सस्सिरीय चउद्दस महासुमिणे पासित्ताणं पडिबुद्धा समाणी, हट्ठतुट्ठचित्तमाणंदिआ पीअमणा परमसोमणसिआ हरिसवसविसप्पमाणहियया धाराहयकलंबुगं पिव समुस्ससिअरोमकूवा सुमिणुग्गहं करेइ, सुमिणुग्गहं करित्ता सयणिज्जाओ अब्भुट्ठेइ, अब्भुट्ठित्ता अतुरिअमचवलमसंभंताए अविलंबिआए रायहंससरिसाए गईए, जेणेव उसभदत्ते माहणे, तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता उसभदत्तं माहणं जएणं विजएणं वद्धावेइ, वद्धावित्ता सुहासणवरगया आसत्था वीसत्था करयलपरिग्गाहियं दसनहं सिरसावत्तं मत्थए अंजलिं कट्टु एवं वयासी ॥ ५ ॥

महावीर प्रभु की माता ऊपर लिखे चवंदह स्वप्न देख कर जागृत हुई. स्वप्नों से संतुष्ट मन में आनन्द प्राप्त करती हुई परम आल्हाद से प्रफुल्लित हृदय वाली (जैसे मेघ धारा से कदंब वृक्ष के फूल खिलते हैं ऐसे ही वो देवानंदा भी दिव्य स्वरूप धारण कर रोमांच से प्रफुल्लित होकर जिसके रोम २ हर्षायमान होरहे हैं) अपने श्रेष्ठ स्वप्नों को याद करती हुई अपनी शय्या से उठकर एक सरखी राजहंसी समान चाल से चलती हुई अपने स्वामी ऋषभदत्त ब्राह्मण के शयनगृह (सोने की जगह) में गई और जय विजय शब्द से संतुष्ट

१-२ महासण १-२ सुहासणवरगया क०

कर भद्रासन पर बैठ कर विश्राम लेती हुई सुखासन पर बैठी हुई दश अंगुली मिला कर अंजली शिर में घुमा कर वंदन नमस्कार करती हुई इस प्रकार विनय पूर्वक बोली.

सूत्र (६-७-८)

एवं खलु अहं देवाणुप्पिआ ! अज्ज सयणिज्जंसि सुत्त-जागरा ओहीरमाणी २ इमेआरूवे उराले जाव सस्सिरीए चउद्दस महासुमिणे पासित्ताणं पडिबुद्धा, तंजहा, गय-जाव-सिहिं च ॥ ६ ॥

एएसिं णं उरालाणं[1,2] जाव चउदसण्हं महासुमिणाणं के मन्ने कल्लाणे फलवित्तिविसेसे भविस्सइ ? तएणं से उसभदत्ते माहणे देवाणंदाए माहणीए अंतिए एअमट्ठं सुच्चा निसम्म हट्ठतुट्ठ जाव हिअए धाराहयकलंबुअंपिव समुस्ससियरोमकूवे सुमिणुग्गहं करेइ, करित्ता ईहं अणुपविसइ, अणुपविसित्ता अप्पणो साभाविएणं मइपुव्वएणं बुद्धिविन्नाणेणं तेसिं सुमिणाणं अत्थुग्गहं करेइ, करित्ता देवाणंदं माहणिं एवं वयासी ॥ ७ ॥

ओरालाणं तुमे देवाणुप्पिए ! सुमिणा दिट्ठा, कल्लाणा सिवा धन्ना मंगल्ला सस्सिरिआ आरोग्गतुट्ठिदीहाउकल्लाण-मंगल्लकारगाणं तुमे देवाणुप्पिए ! सुमिणा दिट्ठा, तंजहा—अत्थलाभो देवाणुप्पिए ! भोगलाभो देवाणुप्पिए ! पुत्तलाभो देवाणुप्पिए ! सुक्खलाभो देवाणुप्पिए ! एवं खलु तुमं देवाणुप्पिए ! नवण्हं मासाणं बहुपडिपुन्नाणं अद्धट्ठमाणं राइंदिआणं विइक्कंताणं सुकुमालपाणिपाय अहीणपडिपुन्नपंचिंदिय-

---

१-२ देवाणुप्पिआ ! इ०

सरीरं लक्खणवंजणगुणोववेअं माणुम्माणपमाणपडिपुन्नसुजायसव्वंगसुदरंगं ससिसोमाकारं कंतं पिअदंसणं सुरूवं देवकुमारोवमं दारयं पयाहिसि ॥ ८ ॥

हे स्वामी! आज मैंने अल्प निद्रा लेते हुवे हस्ती इत्यादि के १४ स्वप्न देखे, हे स्वामी, हे देवानुप्रिय, इन स्वप्नों का क्या फल है ? वो कृपया बताइये. ये वचन सुनकर ब्राह्मण ऋषभदत्त मन में बहुत खुश होकर एकाग्रचित्त से अपनी बुद्धि अनुसार शुभ स्वप्नों का फल विचार कर अपनी भार्या देवानंदा से इस प्रकार कहने लगा, कि हे भद्रे! तुमने अति उत्तम कल्याण के करने वाले, मंगलीक धन के देने वाले स्वप्न देखे हैं जिन सब का फल यह है कि नव मास और साढे सात दिन पूरे होने पर तुम्हारे एक सुकुमाल हाथ पांव वाला पांच इन्द्रिय पूर्ण शरीर में सुलक्षण धारण करने वाला गुणों का भंडार मान उनमान प्रमाण से सम्पूर्ण सुन्दर अंग वाला चन्द्र समान मनोहर कांति से प्रिय दर्शन स्वरूप वाला पुत्र रत्न होगा,

❀ बत्तीस लक्षणों का स्वरूप ❀

छत्रं तामरसं धनू रथवरो दंभोलि कूर्म्मां कुशौ, वापी स्वस्तिक तोरणानि चसरः पंचाननः पादपः; चक्रं शंख गजौ समुद्र कलशौ प्रासाद मत्स्यायवा, यूपः स्तूप कमंडलू न्यवनिभृत् सचामरो दर्पणः (१) उक्षा पताका कमलाभिषेकः सुदाम केकी घन पुण्य भाजाम्.

ऊपर के शार्दूल विक्रीडित छंद में और इन्द्र वज्रा छंद के दो पदों में यह बताया है कि यह बत्तीस लक्षण पुण्यवान् पुरुष के होते हैं उनके नाम ये हैं. १ छत्र. २ वींजणा. ३ धनुष. ४ रथ. ५ वज्र. ६ काछुवो. ७ अंकुश. ८ बावड़ी. ९ स्वस्तिक. १० तोरण. ११ तालाव. १२ सिंह. १३ वृक्ष. १४ चक्र. १५ शंख. १६ हाथी. १७ समुद्र. १८ कलश. १९ प्रासाद. २० मत्स्य. २१ यव. २२ यज्ञ का स्तंभ. २३ पादुका. २४ कमंडल. २५ पर्वत. २६ चंवर. २७ काच. २८ बैल. २९ पताका. ३० लक्ष्मी. ३१ माला. ३२ मयूर.

बत्रीस लक्षण और भी हैं:-(सात लाल, छे ऊंचे, पांच सूक्ष्म, पांच दीर्घ, तीन विशाल, तीन लघू, तीन गम्भीर) जिस पुरुष के नाक पांव हाथ जीभ डाढ तालु आंखों के कोणे लाल हों उसे लक्ष्मीवान समझना चाहिये, कांख छाती,

गले का मिणिया (कीरका टीका) नासिका नख और मुख यह ६ जिसके ऊंचे हों वो सर्व प्रकार से उन्नति करने वाला होवे और दांत चमडी बाल अंगुली के पैरवे और नख यह पांच जिसके सूक्ष्म अर्थात् पतले हों वो धनाढ्य होवे. आंख स्तन का बीचका भाग नाक हनु (ठोडी) और भुजा जिस की दीर्घ अर्थात् लम्बी होवे वो पुरुष दीर्घ आयु, धनाढ्य और महा बलवान होवे, कपाल छाती और मुख जिसका विशाल (बडा) होय वो पुरुष राजा होवे, गर्दन जांघ और पुरुष चिन्ह (पुलिङ्ग) जिसके लघु हो वो पुरुष राजा होवे, स्वर (आवाज) नाभी और सत्व यह तीन जिसके गंभीर हों वो समुद्र और पृथ्वी का मालिक हो.

श्रेष्ठ पुरुषों के ऊपर कहे हुए ३२ लक्षण होते हैं, किन्तु श्रेष्ठ पुरुषों में प्रधान बलदेव और वासुदेव के १०८ और चक्रवर्ती तीर्थंकर भगवान् के १००८ लक्षण शरीर पर होते हैं परन्तु शरीर के भीतरी भाग में ज्ञानी गम्य (जिनको ज्ञानी महाराज जान सक्ते हैं) अनेक लक्षण होते हैं ऐसा निशीथ चूर्णी ग्रंथ में कहा है.

❀ शरीर की सुन्दरता ❀

सम्पूर्ण मनुष्य देह में मुख प्रधान है, मुख में नाक श्रेष्ठ है और नासिका से नेत्र अधिक श्रेष्ठ है, नेत्रों द्वारा मनुष्य का शील (सदाचार) मालुम होता है, नासिका द्वारा सरलता और रूप (खुबसूरती) द्वारा धन संपत्ती प्रगट होती है शील से गुण, गति से वर्ण. वर्ण से स्नेह. स्नेह से स्वर, स्वर से तेज और तेज से सत्व मालुम होता है.

❀ सत्व गुण की प्रशंसा ❀

इस संसार में मनुष्य नव प्रकार के होते हैं अर्थात सात्विक, सुकृति, दानी, राजसी, विषयी, क्रोधी, तामसी, पातकी, लोभी. सात्विक पुरुष स्वपर को इस लोक और परलोक में सुख देने वाला होता है, कारण वो दयावान, धीरजवान, सत्यवादी, देवगुरु का भक्त, काव्य, और धर्म में प्रसन्न चित्त और शूरता में नायक होता है.

सत्व गुण या तो बहुत छोटे में, वा बहुत बड़े में, बहुत पुष्ट में वा बहुत दुर्बल में, बहुत काले में वा बहुत गोरे में होता है.

चार गतियों में आने जाने के लक्षण धर्म रागी, सौभाग्यी, निरोगी सुस्वप्न,

नीति पर चलने वाला और कवि. इतने प्रकार के गुण वाला पुरुष प्रायः स्वर्ग में से आया हुवा प्रतीत होता है और इस यौनी को पूरी करके स्वर्ग में जाने वाला है ऐसा शास्त्रों में कहा है. दंभ रहित दयावान दानी इन्द्रियों को दमन करने वाला, चतुर, जिन देव पूजक, जीव मनुष्य यौनी से आया है और फिर मनुष्य यौनी ही प्राप्त करेगा.

मायावी, लोभी, मूर्ख, आलसी, और बहुत आहार करने वाला पुरुष कोई शुभ कर्म के उदय से पशु योनी में से आकर मनुष्य हुवा है और फिर पशु योनी में जावेगा.

अत्यन्तरागी, अतिद्वेषी, अविवेकी, कटू वचन बोलने वाला, मूर्ख और मूर्खों की संगति करने वाला, प्राणी नर्क से आया है और फिर नर्क में जावेगा.

जिस मनुष्य के नाक, आंख, दांत होठ, हाथ, कान और पैर इत्यादि पूर्ण और सुन्दर हैं वो मनुष्य उत्तम गुण प्राप्त कर के योग्य होते हैं इनसे विपरीत अर्थात् जिस मनुष्य के अंगोपांग खराब हैं वो अयोग्य हैं.

मजबूत हड्डी से धन प्राप्त होता है, मांस पुष्टि से सुख, गोरी चमड़ी से भोग, सुन्दर आंखों से स्त्री, अच्छी चाल से वाहन प्राप्त होता है, मधुर कंठ वाला आज्ञा करने वाला होसक्ता है किंतु यह सर्व सत्व गुणी मनुष्य के लिये है अर्थात् ऊपर लिखे अनुसार उत्तम फल प्राप्त करना अथवा प्रतिकुल यानी खराब को छोड़ना वो सत्व विना नहीं होता है.

मनुष्य के जीवणे भाग पर दक्षिण आवर्त हो तो शुभ है और यदि वाम भाग में उलटा हो तो अशुभ है, इत्यादि अनेक लक्षण शुभाशुभ के शास्त्रों में बताये हैं, परन्तु तीर्थंकर देव सर्व से अधिक पुण्य वाले होने से सर्व उत्तमोत्तम लक्षण उन में होते हैं. लक्षणों का विशेष स्वरूप अन्य टीकाओं से जान लेना.

व्यञ्जन मसा तिल इत्यादि तीर्थंकरों के योग्य भाग में होते हैं पुरुष जितनी नाप की कूंडी में जल भर के एक युवा पुरुष को उस जल में विठाया जावे और यदि उस कूंडी में से एक द्रोण भर जल बाहिर निकले तो मनुष्य मान (नाप) बरोबर समझना चाहिये.

उन्मान से मनुष्य का वजन यदि अर्द्धभार होवे तो उत्तम समझना. उत्तम पुरुष १०८ अंगुल प्रमाण का होता है परन्तु तीर्थंकर मस्तक ऊपर शिखर की तरह बारह अंगुल अधिक होने से १२० अंगुल प्रमाण होते हैं.

ऋषभदत्त ब्राह्मण वेद वेदान्त का अच्छा विद्वान् था जिसने अपनी विद्या द्वारा सुन्दर रूपवान बालक होने का बताकर सर्व उत्तमोत्तम बाह्य लक्षण भी बताये.

सूत्र (९)

सेविअणं दारए उम्मुक्कबालभावे विन्नायपरिणयमित्ते जुव्वणगमणुपत्ते, रिउव्वेअ-जउव्वेअ-सामवेअ-अथव्वणवेअ इतिहासपंचमाणं निघंटुछट्ठाणं संगोवंगाणं सरहस्साणं चउण्हं वेआणं सारए पारए धारए, सडंगवी, सट्ठितंतविसारए, संखाणे सिक्खाणे सिक्खाकप्पे वागरणे छंदे निरुत्ते जोइसामयणे अन्नेसु अ बहुसु बंभएणएसु परिवायएसु नएसु सुपरिनिट्ठिए आविभविस्सइ ॥ ६ ॥

बालक के विद्वान् होने के सम्बंध में ऋषभदत्त ब्राह्मण कहता है कि हे भद्रे जिस समय यह बालक विद्या पढ़कर युवा अवस्था को ग्रहण करेगा उस समय चार वेद और वेदान्त का पारंगामी होगा.

(नोट—ऋग्वेद, यजुर्वेद, श्यामवेद, अथर्ववेद ये चार वेदों के नाम हैं) (वेद के साथ इतिहास और निघंटु जोड़ने से ६ होते हैं और अंग उपांग भी होते हैं).

उनका रहस्य जानेगा. और दूसरों को विद्याध्ययन करावेगा. अशुद्ध उच्चारण से रोकेगा. और भूलने वालों को फिरसे समझा कर विद्वान् बनावेगा. शिक्षा, कल्प, व्याकरण, छंद, ज्योतिष, निरयुक्ति. इन छे अंगों में धर्मशास्त्र मीमांसा, तर्क विद्या, पुरान इत्यादि उपांगों में षष्ठी तंत्र इत्यादि कपिल ऋषि के मत के शास्त्रों का पारंगामी अर्थात् पूर्ण ज्ञानी होगा. ब्राह्म सूत्रों का और परिव्राजक के ग्रंथों का भी पूर्णतया जानने वाला होगा. अर्थात् संसार में जितने दर्शन और मत विद्यमान है उन सर्व का पंडित होगा. और सर्व प्राणियों को यथार्थ मार्ग बनावेगा और सर्वज्ञ होकर सर्व जीवों के संशय निवारण करेगा.

सूत्र (१०)

तं उराला णं तुमे देवाणुप्पिए ! सुमिणा दिट्ठा, जाव

आरुग्गतुट्ठिदीहाउयमंगल्लकल्लाणकारगा णं तुमे देवाणु-प्पिए ! सुमिणा दिट्ठत्ति कट्टु भुज्जो भुज्जो अणुवूहइ ॥ १० ॥

इस प्रकार बालक की विद्या बुद्धि की प्रशंसा करते हुवे अपनी भार्या देवानंदा से कहता है कि हे देवानुप्रिये जो तुमने स्वप्न देखे हैं वो सर्व उत्तम २ फल देने वाले हैं. इसलिये मैं उनकी वार २ प्रशंसा करता हूं.

सूत्र (११-१२)

तएणं सा देवाणंदा माहणी उसभदत्तस्स अंतिए एअ-मट्ठं सुच्चा निसम्म हट्ठतुट्ठ जाव हियया जाव करयलपरिग्ग-हियं दसनहं सिरसावत्तं मत्थए अंजलिं कट्टु उसभदत्तं माहणं एवं वयासी ॥ ११ ॥

एवमेयं देवाणुप्पिआ ! तहमेयं देवाणुप्पिआ ! अवितह-मेयं देवाणुप्पिआ ! असंदिद्धमेयं देवाणुप्पिआ ! इच्छियमेअं देवाणुप्पिआ ! पडिच्छिअमेअं देवाणुप्पिआ ! इच्छियपडि-च्छियमेअं देवाणुप्पिआ ! सच्चे णं एसमट्ठे, से जहेयं तुब्भे वयहत्ति कट्टु ते सुमिणे सम्मं पडिच्छइ, पडिच्छित्ता उसभद-त्तेणं माहणेणं सद्धिं उरालाइं माणुस्सगाइं भोगभोगाइं भुंज-माणी विहरइ ॥ १२ ॥

देवानंदा अपने स्वामी के ऐसे वचन सुनकर हाथ जोड़ मस्तक नवा कर बोली कि हे स्वामिन् ! आप कहते हो वो सर्व सत्य है. मेरी इच्छानुसार है और आपके बताये हुवे फल में मुझे किंचित्मात्र भी संदेह नहीं है. मैं इसलिये प्रार्थना करती हूं. इस प्रकार विनय पूर्वक कह कर और स्वप्नों को फल सहित मन में याद रखती हुई अपने स्वामी ऋषभदत्त ब्राह्मण के साथ पुन्य संपदा अनुसार मनुष्य जन्म के अनुकूल सुख भोग में अपने दिन व्यतीत करने लगी.

सूत्र (१३)

तेणं कालेणं तेणं समएणं सक्के देविंदे देवराया वज्ज-पाणी पुरंदरे सयक्कऊ सहस्सक्खे मघवं पागसासणे दाहिणड्ढ लोगाहिवई बत्तीसविमाणसयहस्साहिवई एरावणवाहणे सुरिंदे अरयंवरवत्थधरे आलइअमालमउडे नवहेमचारुचित्तचंचल-कुंडलविलिहिज्जमाणगल्ले महिड्ढिए महज्जुइए महाबले महा-यसे महाणुभावे महासुक्खे भासुरबुंदी पलंववणमालधरे सोह-म्मे कप्पे सोहम्मवडिंसए[1] विमाणे सुहम्माए सभाए सक्कंमि सींहासणंसि, से णं तत्थ बत्तीसाए विमाणवाससयसाहस्सीणं, चउरासीए सामाणिअसाहस्सीणं, तायत्तीसाए तायत्तीसगाणं, चउण्हं लोगपालाणं, अट्ठण्हं अग्गमहिसीणं सपरिवाराणं, तिण्हं परिसाणं, सत्तण्हं अणीआणं, सत्तण्हं अणीआहिवईणं चउण्हं चउरासीए[2] आयरक्खदेवसाहस्सीणं, अन्नेसिं च बहूणं सोहम्मकप्पवासीणं वेमाणिआणं देवाणं देवीणं य आहेवच्चं पोरेवच्चं सामित्तं भट्टित्तं महत्तरगत्तं आणाईसरसेणावच्चं कारे-माणे पालेमाणे महयाहयनट्टगीयवाइ अतंतीतलतालतुडिय-घणमुइंगपडुपडहवाइयरवेणं दिव्वाइं भोगभोगाइं भुंजमाणे विहरइ ॥ १३ ॥

सौधर्म देवलोक में इन्द्र को भगवान के दर्शन होना और उनको नमस्कार करना.

बयासी दिनों के बाद शक्रेन्द्र (अर्थात् देवताओं का राजा इन्द्र) हाथ में वज्र धारण करने वाला राक्षसों की नगरियों को तोड़ने वाला श्रावक की पंचम प्रतिमा की (तप विशेष) को १०० समय आराधन करने वाला १००० आंखों वाला (५०० देवता इन्द्र के मंत्री काम करने वाले हर समय उसके पास

---

१ वडंसए १-२ सं

रहते हैं इस कारण इन्द्र सहस्राक्ष कहलाता है) मेघों का स्वामी, पाक दैत्य को शिक्षा करने वाला मेरू पर्वत की दक्षिण दिशा का अर्धलोक का स्वामी ऐरावत हाथी पर बैठने वाला, सुरों का इन्द्र, बत्तीस लाख विमान का स्वामी, आकाश समान निर्मल वस्त्र धारण करने वाला, योग्य स्थान पर नव माला मुकुट धारण करने वाला, नये सोने के मनोहर झूलने वाले कुंडलों से देदीप्यमान गालों वाला महान ऋद्धि, महान कांति, महाबल, महायश महानुभाव महासुख लम्बी पुष्पों की माला को ऊपर से नीचे तक धारण करने से जिसका शरीर देदीप्यवान होरहा ऐसा इन्द्र सौधर्म देवलोक में सौधर्म अवतंसक विमान में सौधर्म सभा में शक्र नामी सिंहासन पर बैठा हुवा जिसकी सेवा में बत्तीस लाख वैमानिक (विमानों में रहने वाले) देव हैं चोरासी हजार सामानिक देव हैं; तेतीश त्रायत्रिंशक बड़े मंत्री देव हैं सोम, यम, वरुण, कुबेर यह चार जिसके लोकपाल हैं आठ अग्र महिषी (मुख्य देवियां) सपरिवार, बाह्य, बिचली और भीतर की ऐसी तीन परखदा और सात सेना (गंधर्व नट, हय हाथी, रथ, भट्ट, वृषभ) ऐसी सात प्रकार की सेना का स्वामी. चार दिशा में चोरासी हजार देवों से रक्षित अनेक सौधर्म वासी देवों से विभूषित और सर्व देव देवियों का स्वामी अग्रेसर अधिपति, पालने वाला महत्व पद पाकर उनको आज्ञा करने वाला, रक्षक, इन्द्र पणे के तेज से अपनी इच्छानुसार सर्व देवों से कार्य कराने वाला बड़े वाजिंत्र श्रेणी जिसमें नाटक, गीत, वाजिंत्र तंत्री, कांसी, तृटीत (एक प्रकार का वाजा) धनमृदंग पट इत्यादि वाजों की और गाने की आवाज से दिव्य सुख भोगने वाला इन्द्र देवलोक में बैठा है.

सूत्र (१४)

इमं च णं केवलकप्पं जंबुद्दीवं दीवं विउलेणं ओहिणा आभोएमाणे २ विहरइ. तत्थणं समणं भगवं महावीरं जंबुदीवे दीवे भारहे वासे दाहिणड्ढभरहे माहणकुंडगामे नयरे उसभदत्तस्स माहणस्स कोडालसगुत्तस्स भारियाए देवाणंदाए माहणीए जालंधरसगुत्ताए कुच्छिंसि गब्भत्ताए वक्कंतं पासइ, पासित्ता हट्ठतुट्ठचित्तमाणदिए णंदिए परमानंदिए पीअमणे

परमसोमणस्सिए हरिसवसविसप्पमाणहियए धाराहयनीवसुर-भिकुसुमचंचुमालइयऊससियरोमकूवे विकसियवरकमलनयणे पयलियवरकडगतुडियकेऊरमउडकुंडलहारविरायंतवच्छे पालं-वपलंबमाणघोलंतभूसणधरे ससंभमं तुरिअं चवलं सुरिंदे सीहासणाओ अब्भुट्टेइ, अब्भुट्ठित्ता पायपीढाओ पच्चोरुहइ, पच्चोरुहित्ता वेरुलियवरिट्ठरिट्ठंजणनिउणोवि(वचि)अमिसिमिसिं-तमणिरयणमंडिआओ पाउयाओ ओमुअइ, ओमुइत्ता एग-साडिअं उत्तरासंगं करेइ, करित्ता अंजलिमउलिअग्गहत्थे तित्थयराभिमुहे सत्तट्ठ पयाइं अणुगच्छइ, सत्तट्ठपयाइं अणु-गच्छित्ता वामं जाणुं अंचइ, अंचित्ता दाहिणं जाणुं धरणि अलंसि साहट्टु तिक्खुत्तो मुद्धाणं धरणियलंसि निवेसेइ, निवे-सित्ता ईसिं पच्चुन्नमइ, पच्चुण्णमित्ता कडगतुडिअथंभिआ-ओ भुआओ साहरेइ, साहरित्ता करयलपरिग्गहिअं दसनहं सिरसावत्तं मत्थए अंजलिं कट्टु एवं वयासी ॥ १४ ॥

ऊपर लिखे अनुसार इन्द्र महाराज देवताओं की सभा में बैठे हुए अपने विपुल अवधि ज्ञान द्वारा जंबू द्वीप में देवानंदा की कूंख में श्रमण भगवंत श्रीमन महावीर स्वामी को देखकर अर्थात् अपने इच्छित पूज्य जिनेश्वर देव के दर्शन से मन में अति आनंदित हुए हृदय में बहुत हर्षायमान हुए उनके रोम २ कदंब के फूल के समान विकस्वर हुवे कमल के समान नेत्र और वदन को प्रफुल्लता प्राप्त हुई. भगवान के दर्शन से जिनको ऐसा हर्ष हुवा है कि जिस के द्वारा उसके कंकण, बाहु रक्षक (कडा) बाजु बंध, मुकुट, कुंडल, हार इत्यादि हिलने लगगये हैं. ऐसा इन्द्र तुरंत सिंहासन से खड़ा होकर मणि रत्नों से जड़े हुवे बाजोट पर से नीचे उतर कर वैडूर्य श्रेष्ठ अंजन रत्नों से जडित् अति मनोहर मणि रत्नों से शोभित पावड़ियों को त्याग कर अर्थात् पगों में से निकाल कर एक अखंड निर्मल अमूल्य वस्त्र का उतरासन कर मस्तक में दोनों हाथ की अंगुली रखकर अर्थात् दोनों हाथ जोड़ कर तीर्थंकर प्रभु के सन्मुख सात

आठ कदम जाकर दावें पैर को ऊंचा रखख कर जीवने पांव को धरती पर रख कर बैठा हुवा तीन समय मस्तक को जमीन से लगाकर थोड़ासा ऊंचा होकर अपनी कंकण और भुजबंध इत्यादि बहुमूल्य आभूषणों से शोभित भुजा को ऊंची करके दोनों हाथ की अंगुलियों की अंजली मस्तक में लगाकर इन्द्र महाराज इस प्रकार भगवान श्रीमत् वीर प्रभू की स्तुती करने लगे.

सूत्र (१५)

नमुत्थु णं अरिहंताणं भगवंताणं, आइगराणं तित्थयराणं सयंसंबुद्धाणं, पुरिसुत्तमाणं पुरिससीहाणं पुरिसवरपुंडरीयाणं पुरिसवरगंधहत्थीणं, लोगुत्तमाणं लोगनाहाणं लोगहियाणं लोगपइवाणं लोगपज्जोअगराणं, अभयदयाण चक्खुदयाणं मग्गदयाणं सरणदयाणं जीवदयाणं बोहिदयाणं, धम्मदयाणं धम्मदेसयाणं धम्मनायगाणं धम्मसारहीणं धम्मवरचाउंरतचक्कवट्टीणं, दीवो ताणं सरणं गइ पइट्ठा अप्पडिहयवरनाणदंसणधराणं विअट्टछउमाणं, जिणाणं जावयाणं तिन्नाणं तारयाणं बुद्धाणं बोहयाणं मुत्ताणं मोअगाणं, सव्वण्णूणं सव्वदरिसीणं, सिवमयलमरुअणंतमक्खयमव्वाबाहमपुणरावत्तिसिद्धिगइनामधेयं ठाणं संपत्ताणं, नमो जिणाणं जियभयाणं ॥ नमुत्थुणं समणस्स भगवओ महावीरस्स आइगरस्स चरमतित्थयरस्स पुव्वतित्थयरनिद्दिट्ठस्स जाव संपाविउकामस्स ॥ वंदामिणं भगवंतं तत्थगयं इहगयं, पासइ मे भगवं तत्थगए इहगयंति कट्टु समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ, वंदित्ता नमंसित्ता सीहासणवरंसि पुरत्थाभिमुहे सन्निसन्ने ॥ तएणं तस्स सक्कस्स देविंदस्स देवरन्ने अयमेआरूवे

अभयदयाणं चक्खुदयाणं मग्गदयाणं सरणदयाणं जीवदयाणं बोहिदयाणं धम्मदयाणं धम्मदेसयाणं धम्मनायगाणं धम्मसारहीणं ...

अन्भत्थिए चिंतिए पत्थिए मणोगए संकप्पे समुप्पज्जित्था ॥१५॥

नमस्कार हो अरिहंत भगवंत को जो तीर्थ स्थापित करने वाले, स्वयम् बोध पाने वाले, पुरुषों में उत्तम, पुरुषों में सिंह समान, पुरुषों में वर पुंडरिक (श्रेष्ठ कमल समान), और वर गंध हस्ति समान हैं अर्थात् विपत्ति में धैर्य रखने वाले, श्रेष्ठ वचन बोलने वाले, और कुतर्क वादी को हटाने वाले हैं, लोगों में उत्तम, लोगों के नाथ, लोगों के हित करने वाले, लोगों में प्रदीप (दीपक) समान, लोगों में प्रद्योत करने वाले, अभय देने वाले, हृदय चक्षु देने वाले, सीधा मार्ग बताने वाले, शरण देने वाले, जीव के स्वरूप बताने वाले, धर्म की श्रद्धा कराने वाले, धर्म्म प्राप्ती कराने वाले, धर्म्मोपदेशक, धर्मनायक, धर्म सारथी आप हैं. इससे आपको नमस्कार है.

❀ मेघ कुमार की कथा ❀

(मेघ कुमार की नीचे दी हुई कथा से मालुम होगा कि भगवान् महावीर ने मेघ कुमार को उपदेश देकर किस प्रकार धर्म में दृढ़ किया इसलिये भगवान् धर्मोपदेशक, धर्म के सारथी हैं).

भगवान् महावीर प्रभू जिस समय (दीक्षा ग्रहण करने तथा कैवल्य प्राप्त करने के पश्चात) ग्रामानुग्राम विहार करते हुवे राजगृही नगरी के बाहिर के उद्यान में पधारे तो देवताओं ने आकर समवसरण की रचना की अर्थात् व्याख्यान मंडप बनाया. उद्यान के रक्षक ने नगरी में जाके राजा श्रेणिक को भगवान् के पधारने के शुभ समाचार सुनाये. राजा श्रेणिक राणी, पुत्र, और सर्व नगरवासी लोग भगवान् का व्याख्यान सुनने के हेतु समवसरण में आकर यथायोग्य स्थान पर बैठे. उपदेश सुनने से राजकुमार मेघ कुमार को वैराग्य उत्पन्न हुवा और उसने अपने माता पिता से दीक्षा ग्रहण करने के लिये आज्ञा मांगी. पुत्र के यह हृदयभेदक वचन सुन कर राजा श्रेणिक और धारणी राणी ने पुत्र को अनेक प्रकार से समझाया कि अभी दीक्षा लेने का समय नहीं है किन्तु राज्य करने का समय है परन्तु मेघ कुमार को तो पूर्ण और दृढ़ वैराग्य होगया था इसलिये उसने एक भी न मानी और आज्ञा के लिये अत्यन्त आग्रह किया. माता पिता भी उसकी वैराग्य दशा को देख कर आज्ञा

---

१ अध्यवसाय

देना ही उचित समझा. आज्ञा पाकर अपनी आठों स्त्रियों को छोड़ कर भगवान के पास दीक्षा अंगीकार करी. भगवान ने उसे दीक्षित कर एक स्थिविर (विद्वान्) साधू को उसे पढ़ाने के लिये आज्ञा दी. मेघ कुमार नवदीक्षित् और सर्व से छोटा होने के कारण रात्री में अपना सोने का संथारा (बिछोना) बिछा कर दरवाजे के समीप ही सोया. साधुओं के मात्रा इत्यादि के लिये बाहर जाने और भीतर आने से उसके बिस्तर धूल से भर गये. मेघ कुमार जो आज के पहले फूलों की शय्या में शयन करता था आज ऐसे धूल से भरे हुवे संथारे में निद्रा न आने के कारण बहुत घबराया और मन में विचारने लगा कि निरंतर मुझ से तो ऐसा कष्ट सहन नहीं हो सकेगा. इसलिये प्रातःकाल ही भगवान से आज्ञा लेकर घर वापिस जाऊंगा. साधू के नियमानुसार प्रातःकाल ही उठ कर प्रभू को वंदना करने गया. भगवान तो केवलज्ञानी थे उनसे तीन लोक की कोई बात छिपी नहीं थी. रात के मेघ कुमार के विचार जान लिये और इस कारण उसके कहने के पहले ही कहने लगे कि हे मेघ कुमार ! रात को तूनें जो साधुओं की पैरों की रेत के कारण जो दुर्ध्यान किया है वो ठीक नहीं किया. जरा सोच तो कि पूर्व भव में तूंने पशु योनी में कैसे २ असह्य कष्ट भोगे हैं जिससे तूने राजऋद्धि पाई है और अब इस उत्तम मनुष्य भव में केवल साधुओं के पैरों की रज से जो सर्व पापों और दुःखों को क्षय करने वाली है उससे इतना घबराता है जरा ध्यान पूर्वक सुन कि तूं पूर्व भव में कौन था और कैसे कैसे दुःख सहे हैं.

इस भव के पूर्व के तीसरे भव में, हे मेघ कुमार ! तेरा जीव वैताढ्य पर्वत के पास के वनों में सफेद रंग का सुमेरू प्रभ नाम का हाथी था तेरे (हस्ती की योनी में) ६ दांत थे और हजार हथनियों का स्वामी था. एक समय उस जंगल में आग लगी देख और उसके भय से अपने प्राणों की रक्षा करने के हेतु अपनी सर्व हस्तनियों को छोड़ कर भागा. गर्मी के कारण प्यास से पीड़ित होकर एक तालाव में पानी पीने को उतरा. उस तालाव में पानी कम होने और कीचड जादा होने से तु दलदल में फस गया तूने निकलकर वाहिर आने की बहुत कोशिश की परन्तु नहीं निकले सका, उसी समय एक अन्य हाथी जो कि तेरा पूर्व भव का वैरी था वहां आगया और तेरे को दांतों द्वारा इतनी पीड़ा पहुंचाई के जिससे वहीं कीचड में फसे फसे. ७ रोज बाद एकसो

बीस वर्ष की आयुष्य पूरी कर कर तेरे प्राण पखेरू उस हाथी की योनी में से अत्यन्त दुःख पाकर निकल गये और फिर विंध्याचल पर्वत पर चार दांत वाला सात सौ हथनीयों का स्वामी तू हाथी हुवा वहां भी दावानल लगा देख कर तुझे जाति स्मरण ज्ञान हुवा जिससे तूने अपने पूर्व भव को देख और उस में सही हुई आपदाओं का स्मरण कर वहां से नहीं भगा किन्तु वहीं ४ कोस तक की पृथ्वी को घास रहित कर कर रहने लगा दूसरे वन के अनेक पशु उस जगह के निर्विघ्न अर्थात् जहां दावानल नहीं पहुंच सकेगा ऐसी जानकर तेरे समीप आकर बैठ गये इतने पशु वहां आगये कि चार कोस में एक तिल भर जगह भी खाली नहीं बची तूने खाज कुचरने के लिये अपने एक पग को ऊंचा लिया परन्तु एक खरगोश तेरे पैर की जगह आकर उसी समय बैठ गया उसे देखकर तुझे दया उत्पन्न हुई और उसकी रक्षा करने के हेतु अपने पैर को नीचे न रखकर अधर रक्खा जब तीन दिन के पश्चात दावानल शांत हुई और सब पशु वहां से चले गये तो अपने तीन रोज तक अधर रक्खे हुए पैर को नीचे रखना चाहा परन्तु पग के अकड़ जाने से तू एकदम गिर गया और इतना कमजोर होगया कि वहां से न उठ सका भूख प्यास से पीड़ित होकर कृपालु हृदय वाला तेरा जीव सौ वर्ष की आयुष्य पूरी करके उस हाथी की योनि को छोडकर राणी धारणी के कुंख में उत्पन्न हुवा इस प्रकार से भगवान मेघकुमार को उसके पूर्व के तीन भव की कथा कहकर कहने लगे कि हे मेघ-कुमार ऐसा दुर्ध्यान करना तेरे योग्य नहीं, नर्क तिर्यंच के तेरे जीवने अनेक बार दुःख सहे जिसके मुकाबिले में ये दुःख किञ्चित् मात्र भी नहीं ऐसा कौन मूर्ख संसार में होगा जो चक्रवर्ती की ऋद्धि को छोडकर दासपणे की इच्छा करे हे शिष्य मरना उत्तम है परन्तु चारित्र त्याग करना बहुत बुरा है- अब जो व्रत भंग कर घर को जावेगा तो प्राप्त हुई अमूल्य लक्ष्मी को हार जावेगा ऐसे वीर भगवान के मीठे वचन सुनने से अपने मनमें पूर्व में सहे हुवे कठिन दुखों को विचारता हुवा और फिर ऐसे दुःख न सहने पडे इसवास्ते स्थिर मन होकर चक्षु सिवाय सर्व शरीर की मूर्छा छोड़ता हुवा पूर्णतया चारित्र पालने लगा और आयु समाप्त कर विजय विमान में अनुत्तरवासी देव हुवा.

ऊपर की कथा से यह स्पष्ट है कि भगवान धर्म के उपदेशक और सारथी अवश्यमेव है.

पहला व्याख्यान कितनेक आचार्य यहां पर समाप्त करते हैं.

धर्म के चार भेद दान, शील, तप, भाव, अथवा चार प्रकार का साधू साध्वी श्रावक. श्राविकाओं का कर्तव्य शासन स्वरूप बताने वाले धर्म में चक्रवर्ती समान, भव समुद्र में दीपक समान, शरण लेने योग्य आधारभूत ॥ कोई भी कारण से न हटने वाला श्रेष्ठ केवल ज्ञान और केवल दर्शन के धारक, दूर होगया है अज्ञान जिनका ऐसे पूर्ण ज्ञानी, रागद्वेष को जीतने वाला और भव्य प्राणियों को जीतने का मार्ग बताने वाले आप तर गये हैं और दूसरों को तारने वाले आप बोध पाये हुवे हैं और दूसरों को बोध देने वाले आप मुक्त हैं और दूसरों को मुक्ति देने वाले, हे जिनेश्वर आप सर्वज्ञ हैं और सब देखने वाले हैं आप शिव, अचल, निरोग, अनंत अक्षय, अव्याबाध, अपुनरावर्ति सिद्धी नाम की गति के स्थान को प्राप्त हुए है इसलिये, हे जिनेश्वर आपको नमस्कार है आपने भय जीत लिया है (इस प्रकार से सर्व तीर्थंकरों को जो मोक्ष में गये है इन्द्र महाराज नमस्कार करते हैं)

नमस्कार हो श्रमण भगवंत श्रीमत् महावीर प्रभू को कि जो धर्म की शरूआत करेंगे जिनमें सर्व उत्तमोत्तम गुण है । पूर्व के २३ तीर्थंकरों के कहे अनुसार ही आप २४ वा तीर्थंकर अर्थात् वर्तमान चौवीसी के अन्तिम तीर्थंकर उत्पन्न हुए है आप इसी भव में कर्म क्षय करके मोक्ष प्राप्त करोगे और दूसरे अनेक प्राणियों की अभिलाषा पूर्ण करोगे इसलिये मैं आपको नमस्कार करता हूं आप भरत क्षेत्र में देवानंदा की कूंख में है और मैं सौधर्म देवलोक में हूं कृपया आप मुझे सुधा दृष्टि से देखें ऐसे विनय पूर्वक वचन बोलकर और फिर दूसरी दफा नमस्कार करकर इन्द्र अपने सिंहासन पर पूर्व दिशा की तर्फ मुख करके बैठा और विचार करने लगा तो नीचे लिखे हुवे संकल्प विकल्प उसके (इन्द्र के) दिल में उत्पन्न हुएं.

सूत्र (१६)

न खलु एयं भूअं, न एयं भव्वं, न एयं भविस्सं, जं णं अरिहंता वा चक्कवट्टी वा बलदेवा वा वासुदेवा वा अंतकुलेसु

वा पंतकुलेसु वा तुच्छकुलेसु वा दरिद्दकुलेसु वा किवणकुलेसु वा भिक्खागकुलेसु वा माहणकुलेसु वा, आयाइंसु वा, आयाइंति वा, आयाइस्संति वा ॥ १६ ॥

अद्यपि पर्यंत ऐसा कभी न तो हुवा न ऐसा होता है न ऐसा होना सम्भव है कि तीर्थंकर, चक्रवर्ती, बलदेव, वासुदेव-शूद्रकुल अधम कुल, तुच्छकुल, कृपण कुल, भिक्षाचर के कुल अथवा ब्राह्मण के कुल में उत्पन्न हुवे हो होते हों वा होवेंगे (न आने का कारण यही है कि ऐसे कुल के पुरुषों से जन्म महोत्सव इत्यादि यथोचित नहीं हो सकते हैं)

सूत्र (१७)

एवं खलु अरहंता वा चक्कवट्टी वा बलदेवा वा वासुदेवा वा, उग्गकुलेसु वा भोगकुलेसु वा राइण्णकुलेसु वा इक्खागकुलेसु वा खत्तियकुलेसु वा हरिवंसकुलेसु वा अन्नयरेसु वा तहप्पगारेसु विसुद्धजाइकुलवंसेसु आयाइंसु वा आयाइंति वा आयाइस्संति वा ॥ १७ ॥

किन्तु अरिहंत, चक्रवर्ति, बलदेव, वासुदेव हर समय उग्रकुल, भोगकुल राजन्यकुल, इक्ष्वाकुकुल क्षत्रियकुल, हरिवंश कुल, वा अन्य ऐसे ही उत्तमकुल विशुद्ध जाति वंश में उत्पन्न हुए है होते है और होवेंगे (क्योंकि ऐसे कुलों में जन्म महोत्सव इत्यादि अच्छी प्रकार से हो सकते हैं)

कुलों की स्थापना ऋषभ देव स्वामी के समय में इस प्रकार से हुई. जो भगवान के आरक्षक थे वे उग्रकुल में माने गये जो गुरु पदमें थे वो भोगकुलमें जो मित्र थे वो राजन्य कुल में जो भगवान के वंशके थे वो इक्ष्वाकु कुलमें हरि वर्ष क्षेत्र के युगलियों का परिवार हरिवंश कुलमें और जो भगवान की प्रजाके मनुष्य थे. सर्व क्षत्रिय कुलमें माने गये.

परन्तु महावीर स्वामी ब्राह्मण कुलमें उत्पन्न हुए यह एक आश्चर्य जनक घटना हुई.

सूत्र १८.

अत्थि पुण एसे वि भावे लोगच्छेरयभूए अणंताहिं उस्सपिणीओसप्पिणीहिं विइक्कंताहिं समुप्पज्जइ, (ग्रं, १००) नामगुत्तस्स वा कम्मस्स अक्खीणस्स अवेइअस्स अणिज्जिणस्स उदएणं जंणं अरहंता वा चक्कवट्टी वा बलदेवा वा वासुदेवा वा, अंतकुलेसु वा पंतकुलेसु वा तुच्छ० दरिद्द० भिक्खाग० किवण०, आयाइंसु वा आयाइंति वा आयाइस्संति वा, कुच्छिसि गब्भत्ताए वक्कमिंसु वा वक्कमंति वा वक्कमिस्संति वा, नो चेव णं जोणीजम्मणनिक्खमणेणं निक्खमिंसु वा निक्खमंति वा निक्खमिस्संति वा ॥ १८ ॥

किन्तु कोई २ समय में ऐसे आश्चर्य रूप, कर्म भोगने बाकी रहने से एक चौवीसी में १० आश्चर्य जनक घटना होना सम्भव है.

दस बड़े आश्चर्यों का वर्णन ।

वर्त्तमान अवसरप्पिणी कालमें जो दस आश्चर्य जनक बातें हुई उनका वर्णन.

१—उपसर्ग, २ गर्भहरण, ३ स्त्रीतीर्थंकर, ४ अभावित्तपारिषदा, ५ कृष्णवासुदेव का अपरकंकामें जाना ६ मूल विमान में चन्द्र सूर्य का आना ७ हरिवंश कुल की उत्पत्ति, ८ चमरेन्द्र का उपर जाना, ९ बड़ी कायावाले १०८ की एक साथ सिद्धि होना १० असंयति की पूजा होना.

१—तीर्थंकर को प्रायः अशाता वेदनी कम होती है और केवल ज्ञान होने के पश्चात तो शातावेदनी का ही उदय होता है यह मर्यादा है किन्तु महावीर प्रभु को केवल ज्ञान होने के पहले ही वहुत उपसर्ग हुवे और वाद भी गोशाले का उपसर्ग हुवा. उसका वर्णन इस प्रकार है. एक समय श्रीमन् महावीर स्वामी ग्रामानुग्राम विहार करते हुये श्रावस्ती नामकी नगरी में पधारे और उसी समय में गोशाला भी वहीं आगया. और लोगो में कहने लगा कि मैं भी तीर्थंकर हूं श्री गौतम स्वामी नगरीमें गोचरी लेनेको गये तो वहां लोगों के मुख से सुना कि इस

नगरी में एक महावीर और दूसरा गोशाला ऐसे दो तीर्थंकर आये हैं. इस शंका को निवारण करने के हेतु श्री गौतमस्वामी ने वापिस आकर भगवान से गोशाला की उत्पति पूछी. तो भगवान ने कहा कि हे गौतम, गोशाला शरवण ग्राम के मंखली नाम के ब्राह्मण की पत्नी सुभद्रा का पुत्र है. इसका जन्म च्यूंकि गोशाला में हुवा था. इसलिये इसके माता पिताने इसका नाम गोशाला रक्खा. ब्राह्मणवृत्ति अनुसार यह गोशाला भी भिक्षा मांगता फिरता था. कारणवश आकर मेरा शिष्य हुवा. और छद्मस्थावस्था में मेरे पास ६ साल तक रहकर विद्या पढी. तेजोलेश्यापण सीखी है और फिर मुझसे जुदा होकर पार्श्वनाथ के शिष्यों से अष्टांग निमित्त सीखा. और अब केवल ज्ञानी नहीं होने परभी अपने तई तीर्थंकर कहता है. ऐसे भगवान के मुख से सुनकर वहां बैठे हुवे श्रावकों ने नगरी में यत्र तत्र ये बात फैलादी. यहांतक की गोशाले के कानों में भी ये बात पहुंची यह सुनकर उसे बड़ा क्रोध हुवा उसी समय आनन्द नाम के भगवान के शिष्य को गोचरी निमित्त रास्ते में जाते हुवे देखकर बुलाकर कहने लगा कि भो आनन्द मैं तुझे एक दृष्टांत कहता हूं सो सुन.

किसी समय में बहुत से व्योपारी मिलकर माल लाने के निमित्त सवारियां इत्यादि लेकर विदेश जाने लगे. रास्ते में प्यास लगी परन्तु जंगल में बहुत ढूंढने परभी कहीं पानी न मिला परन्तु ४ मिट्टी के बड़े २ ढिगले नजर आये. व्यांपारियों ने सोचाकि इनमें अवश्यमेव पानी होना चाहिये. इसवास्ते उनमें से एक को फोड़ा तो उसमें से निर्मल ठंडा जल निकला जिसके द्वारा सर्व ने अपनी प्यास बुझाई. और भविष्यत में ऐसी आपदा नहो, इसवास्ते बहुत से वर्तनों में भी जल भरलिया. परन्तु लोभ वश दूसरे को भी फोड़ना चाहा. तो उनमें से एक जो वृद्ध था कहने लगा कि हे भाईयों अपना कामतो होगया. अब दूसरे को फोड़ने से कोई काम नहीं. चलो इसे मत फोड़ो. परन्तु उन्होंने उसका कहना न मान दूसरे को फोड़डाला उसमें से सुवर्ण मिला. अबतो वे सर्व बहुत खुश हुऐ और वृद्धको चिड़ाने लगे. फिर भी वृद्धने जो अलोभी था कहा कि खैर अब चलो पर उन सब का तो सुवर्ण मिलने से लोभ और ज्यादा बढगया. उनने तीसरे को भी फोड़ा जिसमें से रत्न मिले तो सब खुशी से कूदपड़े और चौथे को भी फोड़ने के लिये तय्यार हुए, वृद्ध ने फिर ना कही पर अबतो उसकी सुने ही कौन तुरंत चौथे

को फोड़ा उसमें से महा विकराल भयंकर दृष्टि विष सर्प निकला और उस सर्पने अपने विषद्वारा सूर्यके सन्मुख देखकर सर्व को जलाने लगा. और सर्व को तो जलाकर भस्म कर दिये परन्तु उस हित शिक्षा देने वाले वृद्ध को बचा दिया. इस दृष्टांत द्वारा हे आनन्द तुं हित शिक्षक होकर तेरे गुरु को समझादे कि मेरी ईर्षा न करे और अपनी सम्पदा में संतोष करे जो लोभ के वश होकर मेरा कहना न मानेगा और करेगा तो मैं सर्प की तरह मेरी लब्धी द्वारा जला दूंगा किन्तु तेरे को बचा दूंगा ऐसे गौशाला के कोप भरे वचन सुनकर आनन्द साधू भगवान के पास जाकर गौशाला के कहे हुवे सर्व वचन अक्षरशः कहे जिसको सुनकर तथा सर्व वार्ता को केवलज्ञान द्वारा जानकर अपने सर्व शिष्यों को वहां से हटा दिये अर्थात् अपने पास न बिठला कर दूसरी जगह जाकर बैठने की आज्ञा दी और गोशाले से कोई प्रकार का उत्तर प्रत्युत्तर न करें ऐसा समझा दिया गोशाला इतने ही समय में वहां आ उपस्थित् हुवा और कोपायमान होता हुवा जोर से कहने लगा कि हे प्रभु आप मेरी उत्पति ऐसी न जाहिर करे कि मैं गौशाला हूं आपका शिष्य गोशाला मरचुका है मैं तो उसके शरीर को अधिक ताकतवर देखकर धारण कर लिया है मैं दूसरा हूं और आपका शिष्य गोशाला दूसरा था यह सुनकर भगवान मीठे वचनों से बोलने लगे कि हे गोशाला ऐसा करने से सत्यवार्ता नहीं छुप सकती और तूं गोशाला ही है इसमें किंचित् मात्र भी संदेह नहीं हो सकता ऐसे भगवान के वचन सुनकर गोशाला अत्यन्त क्रोधित हुवा और महावीर स्वामी को अनेक अपशब्द कहने लगा महावीर स्वामी ने तो उत्तर प्रत्युत्तर करना अघटित समझकर मौन धारण की परन्तु सर्वानुभूति और सुनक्षत्र नाम के दो शिष्यों को वो गोशाले के वचन सहन नहीं हुए और उसे उत्तर देने लगे गोशाला ने क्रोध में आकर उन दोनों साधुओं पर तेजूलेश्या का व्यवहार किया जिस द्वारा जलकर दोनों शिष्य देवलोक गये भगवान गोशाले के हित के लिये उपदेश करने लगे परन्तु जिस प्रकार सर्प को दूध पिलावे तो भी विषही होता है उसी प्रकार गोशाला भगवान के अनेक उपकारों को भूलता हुवा भगवान पर तेजुलेश्या का व्यवहार किया भगवान तो अत्यन्त पराक्रमी और तीर्थंकर थे इसलिये तेजूलेश्या भी उनकी तीन प्रदक्षिणा कर कर वापिस आकर गोशाले के शरीर में ही प्रवेश करगई-भगवान को भी उसकी गर्मी से ६ महिने

तक अवश्य तकलीफ हुई परन्तु गोशाला ने तो उसकी गर्मी से सातवें ही दिन प्राण छोड़दिये.

(इस अछेरे का विशेष अधिकार सूत्र में है सो वहां से देखलें)

❁ महावीर प्रभु का गर्भापहरण ❁

महावीर प्रभु को देवानन्दा ब्राह्मणी की कूंख में से देवता ने राणी त्रिशलादेवी की कूंख में लेजाकर रक्खें ये महावीर प्रभू का गर्भापहरण नामक दूसरा आश्चर्य बात हुई कारण पूर्व में कोई भी तीर्थंकर का इस प्रकार से गर्भापहरण नहीं हुवा.

❁ स्त्री तीर्थंकर ❁

धर्म में पुरुष को प्रधान माना है और उसका कारण भी यही है कि धर्म नायक जो तीर्थंकर हैं वो सर्वदा पुरुष ही होते हैं परन्तु १९ वें तीर्थंकर श्रीमत् मल्लिनाथ स्वामी स्त्रीवेद में उत्पन्न हुवे (पूर्व भव में पूर्णतया चारित्र आराधन कर कर तीर्थंकर गोत्र बांध लिया किन्तु मित्रों से अधिक ऊंचा पद पाने की लालसा से तपश्चर्या में कपट किया अर्थात् तपस्या जादा की और मित्रों को कम बताई इसके कारण तीर्थंकर के भव में स्त्रीवेद ग्रहण किया)

अभावित्त पर्षदा ।

ऐसी मर्यादा है कि तीर्थंकर का उपदेश कभी निष्फल नहीं जाता अर्थात्. तीर्थंकर के उपदेश से अवश्यमेव किसी नकिसी को सम्यकत्व की प्राप्ती होती है अथवा कोई शिक्षा ग्रहण करता है वा व्रत पचक्खाण करता हैं. परन्तु जिस समय महावीर स्वामी को ऋजुवालिक नदी के किनारे केवल ज्ञान प्राप्त हुवा और देवताओं ने आकर समव सरण की रचना की और भगवान ने समव सरण में विराजमान होकर प्रथम देशना दी उस समय श्रोतागणों की एक बडी भारी संख्या होते हुवे भी भगवान के उपदेश का असर प्रगट में किसी पर नहीं हुवा. यानी कोई भी प्राणीने न तो दीक्षा ली न समकित प्राप्त किया और न व्रत पचक्खाण किये. इसवास्ते यह भी एक आश्चर्य जनक बात हुई.

कृष्ण वासुदेव का अपर कंका में जाना

एक द्वीप का वासुदेव दूसरे द्वीप में नहीं जावे ऐसी मर्यादा है परन्तु श्री-कृष्ण वासुदेव पांडवों की स्त्री द्रोपदी जिसके रूप की प्रशंसा नारद मुनि के मुख से सुन कर धातकी खंड के भरत क्षेत्र की अपर कंका नाम की नगरी का राजा पद्मनाभ मोहित होगया और देवता द्वारा जो उसका मित्रथा हस्तिनापुर से अपने पास मंगवाली जिस को वापिस लाने के हेतु पांडवो के साथ लवण समुद्र के अधिष्टायक सुस्थित नामी देवकी सहायता से समुद्रपार कर अपरकंका नगरी गये यह नगरी कपिल वासुदेव के खंडमें थी. पद्मनाभ राजा को हराकर और द्रोपदी को साथ लेकर वापिस आते समय अपना शंख वजाया. शंख की आवाज सुनकर कपिल वासुदेव जो उस समय मुनि सुव्रत स्वामी के पास वैठा था. आश्चर्यान्वित होकर भगवान मुनि सुव्रत से पूछने लगा कि हे भगवान ये इतने जोर की किस चीज की आवाज हुई तब भगवान ने कहा कि हे वासुदेव अपरकंका नामी नगरी के राजा का मान मर्दन कर भरत-खंड के श्रीकृष्ण नामी वासुदेव पीछे भरतखंड को यहां से जारहे हैं ये उनके शंख की आवाज है. भगवान से ये वात सुनकर और अपने समान दूसरे वासुदेव को अपने खंडमें आया हुवा सुन मिलने की इच्छा करता हुवा भगवान की आज्ञा ले समुद्र तटपर आया परन्तु श्रीकृष्ण वासुदेव पहिले ही आगे पहुंच चुके थे इसवास्ते मिलाप करने के हेतु वापिस बुलाने के वास्ते कपिल वासुदेव ने शंखकी आवाज की. श्रीकृष्ण वासुदेव अपने शंख की माफी (क्षमा) चाहने के हेतु आवाज की. दो वासुदेवों का एक क्षेत्र में इस प्रकार से मिलना वा एक दूसरे के शंखकी ध्वनी सुनना आजतक कभी नहीं हुवा. इस लिये यह भी आश्चर्य जनक वात हुई.

सूर्य चन्द्र का मूल विमान से आना ।

भगवान महावीर स्वामी को वंदना करने के लिये सूर्य चन्द्र मूल विमान से आयेपरन्तु ऐसा पूर्व में कभी नहीं हुवा. इसलिये यह भी आश्चर्य जनक वात हुई.

हरिवंश की उत्पति और युगलियों का नर्क जाना ।

युगलिक नर्क में कभी नहीं जाते ऐसी मर्यादा है परन्तु हरि वर्ष क्षेत्र का युगलिक का जोड़ा नर्क गया. उसका वर्णन इस प्रकार है. ऊपर कहे हुवे

युगलिक के जोड़े को उनके पूर्व भवके वैरी देवने युगलिक क्षेत्र से उठाकर भरत क्षेत्र में रक्खे और मदिरा मांस इत्यादि अभक्ष्य पदार्थ का खान पान सिखाया जिस कारण से मरकर दोनों नर्क गये. उनकी सन्तान हरिवंश कहलाई.

उत्कृष्ट काया वाले १०८ का एक साथ मोक्ष में जाना।

पांच सो धनुष की काया वाले प्रथम तीर्थंकर श्रीऋषभदेव स्वामी के नवाणु (९९) पुत्र आठ भरत महाराज के पुत्र और स्वयं ऋषभदेव स्वामी सर्व १०८ एक साथ मोक्ष गये मध्यम काया वाले १०८ सौ पूर्व भी एक साथ मोक्ष गये परन्तु उत्कृष्ट काया वाले पूर्व में कभी नहीं गये इसलिये यह भी एक आश्चर्य जनक बात हुई.

असंयति की पूजा

ऋषभदेव स्वामी के समय ब्राह्मण लोग देश विरति और अल्प परिग्रह वाले होने के कारण पूजे जाते थे किन्तु आठमे और नवमें तीर्थंकर बीच के काल में ब्राह्मण निरंकुश होकर (तीर्थंकर का अभाव होने से) पुजाने रहे हैं एक आश्चर्य जनक बात हुई कारण त्यागी की ही बहु मानता होती है.

ऐसे दस आश्चर्य रूपी बात इस वर्तमान चौवीसी के समय में हुई.

श्रीमन् महावीर प्रभु का ब्राह्मण गोत्र में आना भी एक आश्चर्य जान कर इन्द्र विचार करता है कि ऐसे आश्चर्य होना सम्भव है.

नाम कर्म गोत्र अर्थात् गोत्र नाम का जो कर्म है वो यदि भोगना वेदना जीर्ण होना बाकी रहा हो तो उदय होने के कारण तीर्थंकर भी भोगने वास्ते ऐसे नीच गोत्र में आसक्ते हैं महावीर प्रभू के नाम कर्म गोत्र इत्यादि २७ भवों का वर्णन इस प्रकार है १ भवः पश्चिम महाविदेह में क्षिति प्रतिष्ठित नामी नगरी में राजा का नयसार नाम का जमींदार थे और वो राजाज्ञानुसार लकडीयें लेने के हेतु अन्य कई चाकरों को लेकर और गाडयों लेकर जंगल में गया वहां कई साधू मार्ग भूल कर उस जंगल में आ निकले उन्हें देख कर हर्षायमान होता हुवा उनके सन्मुख जाकर विनय पूर्वक वंदना की और अपने साथ लाकर गोचरी वहराई उन साधूओं ने उसे धर्मोपदेश दिया जिसे सुनने से उसे समकित हुवा साधूओं को सीधा मार्ग बतलाया जिससे

साधू निर्विघ्नतया नगर में पहुंचे वो सम्यकत्व से धर्म में रक्त होकर आयु विताई मरते समय पंच परमेष्ठी मंत्र स्मरण करने से वो पहला भव पुरा कर दूसरे भव में सौधर्म देवलोक में एक पल्योपम की आयु वाला देव हुवा तीसरे भव में मरिचि नाम का भरत महाराज का पुत्र हुवा प्रथम तीर्थंकर श्रीऋषभदेव स्वामी के उपदेश सुनने से वैराग्य उत्पन्न हुवा जिससे उसने दीक्षा ली परन्तु एक समय गर्मी की मोसीम में रात्री की जलकी अत्यन्त प्यास लगी परन्तु चारित्र धर्म के अनुसार रातको जल नहीं पी सका इससे पिड़ित होकर घर जाने की मन में ठानी पर लज्जावश घर नहीं जासका। और स्व इच्छानुसार साधू भेप को त्याग कर नया भेप (वाना) पहन लिया साधू तीन दंड से रहित हैं पर मैं तीन दंड सहित हूं इसलिये त्रिदंडि साधू अर्थात् मेरे पास ३ दंड का चिन्ह हो, साधू द्रव्य भाव से लोच करे पर मैं ऐसा नहीं कर सका इसलिये शिखा रखूंगा और बाकी सिर मुड़वाऊंगा साधू सव प्राणी की रक्षा करते हैं पर मैं अशक्त होने से देश विरती हूं साधू शीलव्रत पालन करने से सुगन्धित है पर मैं ऐसा नहीं इसलिये बावना चंदन इत्यादि का लेपन करूंगा साधू सर्वथा मोह रहित है पर मैं ऐसा नहीं इसलिये मुझे छत्र और पग में पावडी हो, साधू क्रोधादि कपाय रहित हैं, और मैं क्रोधादि कपाय सहित हुं इसलिये मुझे गैरुवे रंग का वस्त्र हो साधू निर्वद्य हैं पर मैं ऐसा नहीं इसलिये स्नान इत्यादि करूंगा इस प्रकार से लोगों में अपने स्वरूप प्रकट करता हुवा ग्रामानुग्राम विचरने लगा, भोले लोग आकर धर्म पूछते तो उन्हें सत्य धर्म का स्वरूप बताता और अपना असमर्थ पन प्रगट करता, वैराग्य जिनको उपदेश सुनने से होता तो उन्हें उत्तम साधूओं के पास दीक्षा लेने को भेज देता कितनेक राजपुत्रों को उपदेश देकर उत्तम साधूओं के पास भेजदिये अर्थात् अपनी निन्दा करता हुवा सत्य धर्म प्रगट करता फिरता एक समय स्वयं भी ऋषभदेव स्वामी के साथ २ अयोध्या पहुंचा भरत महाराज ने प्रभू को नमस्कार कर विनय पूर्वक पूछा कि हे भगवान ! इस समय आपकी सभा में कोई ऐसा भी जीव है जो इस वर्तमान चोवीसी में तीर्थंकर होने वाला हो, तब भगवान ने कहा कि हे भरत ! तेरा मरीचि नाम का पुत्र जो त्रिदंडी भेप धारण किये बाहिर बैठा है वो इस वर्त्तमान चोवीसी का अन्तिम तीर्थंकर होगा बीच के काल में महाविदेह में मुका नगरी में प्रियमित्र नाम का चक्रवर्ती राजा होगा और भरत क्षेत्र में त्रिपृष्ट नाम पोतन नगरी का अधिपति

और पहिला वासुदेव भी होगा इस प्रकार प्रभू के मुख से मरिचि के भविष्य भव सुनकर भरत महाराज को अत्यन्त आनन्द हुवा और भगवान को वंदन नमस्कार कर बाहिर आकर मरीचि से कहने लगे कि भगवान ने तेरे भव इस प्रकार वर्णन किये हैं तू वासुदेव और चक्रवर्ती होगा इसकी मुझे खुशी नहीं है परन्तु आखरी तीर्थंकर इस वर्तमान चोवीसी का होगा इसका मुझे अति हर्ष है और इसी कारण से मैं तुझे नमस्कार करता हूं और नमस्कार कर कर अपने स्थान को गये मरीचि को इतनी खुशी हुई वो नाचने लगा और कहने लगा कि मेरा कुल सब से उत्तम है मेरे पिता और दादा तो चक्रवर्ती और तीर्थंकर के प्रथम पद पर है ही पर मैं स्वयम् वासुदेव चक्रवर्ती और तीर्थंकर होने वाला हूं इसलिये मेरा ही कुल सर्वोत्तम है ऐसा २ वारंवार कह कर कूदने लगा जिससे नीच गोत्र बांधा, शास्त्रों में कहा है कि कभी अहंकार न करना चाहिये जो पुरुष जाति, कुल, ऐश्वर्य बल, रूप, तप और ज्ञान का अहंकार करता है तो उसको दूसरे भवों में अहंकार का फल हीनता से हीनता से मिलता है और महावीर के भव में ब्राह्मण कुल में अर्थात् नीच कुल में आया मरीचि साधूओं के साथ २ ग्रामानुग्राम विहार करता फिरता था, ऋषभदेव स्वामी के मोक्ष होने के पश्चात् एक समय पूर्व संचित कर्मानुसार मरीचि बीमार हुवा और उस समय अन्य किसी भी साधू ने उसकी सेवा न की इसलिये उसने एक शिष्य बनाने का विचार किया कपिल राज पुत्र को उपदेश दिया जिससे उसे वैराग्य उत्पन्न हुवा और उसने दिक्षित होने के लिये मरिची से प्रार्थना की मरीचि ने उसे अन्य साधूओं के पास जाकर दीक्षा लेने को कहा तब राजपुत्र कहने लगा कि क्या आपके पास धर्म नहीं है ? जो आप मुझे दूसरों के पास जाने को कहते है ये सुनकर और ये समझ कर कि ये मेरा शिष्य होने योग्य है उसे दीक्षा दी और कहा कि दोनों जगह ही धर्म है, इस असत्य वचन के बोलने से शिष्य तो अवश्य मिला पर उसने कोडा कोडी सागरोपम का भ्रमण कर्म उपार्जन कर लिया इस प्रकार से विचरता हुवा अपनी चोरासी लाख पूर्व की आयु पूर्ण कर ब्रह्म देवलोक में दस सागरोपम की आयु वाला देव उत्पन्न हुवा कपिल शिष्य ने भी अपने अनेक शिष्य बनाये और षष्ठीतंत्र इत्यादि ग्रंथ भी बनाये और आयु पूर्ण कर ब्रह्म देवलोक में गया.

देवलोक से आयु पूर्ण कर ५ वे भव में कोलाक सन्नीवेश में अस्सीलाख पूर्व का आयू वाला कोशिक नामका ब्राह्मण हुवा अंतमें त्रीदंडी होकर सौधर्म देवता हुवा छठे भवमें स्थूणा नामी नगरी में वहोत्तर लाख पूर्वका आयु वाला पुष्र नामका ब्राह्मण हुवा त्रीदंडी होकर सातवें भवमें सौधर्म देवलोक में देवता हुआ आठमें भवमें चैत्य सन्निवेश नामकी नगरी में साठलाख पूर्वकी आयु वाला. अग्निद्योत नामी ब्राह्मण हुवा. अंतमें त्रीदंडी होकर नवमें भव में दूसरे देवलोक में देव हुवा. दसमे भवमें मंदिर सन्निवेश में पचास लाख पूर्वकी आयुवाला अग्निभूति नामका ब्राह्मण हुवा अग्यार में भवमें सन्नत कुमार देवलोक में मध्य स्थिति वाला देव हुवा वारवे भवमें श्वेताम्बी नगरी में चम्मालीस लाख पूर्व वाला भारद्वाज नामका ब्राह्मण हुवा. अंतमें त्रिदंडी होकर तेरमें भवमें महेन्द्र देवलोक में देव हुवा. चौदमे भवमें राज्यगृही में चोतीस लाख पूर्वकी आयु वाला स्थावर नामका ब्राह्मण हुवा अन्त में त्रिदंडी होकर पंद्रह में भवमें ब्रह्म देवलोक में देवहुवा सोलमे भवमें विशाख भूति क्षत्रीय की धारणी रानी का पुत्र कोटी वर्ष की आयुवाला विश्वभूति नामका क्षत्री हुवा साधू के पास दीक्षा ली और अत्यन्त तपस्या की जिससे दुर्वल होगया. ग्रामानुग्राम विहार करता हुवा पारणे के वास्ते मथुरा नगरी में आया. वहां विशाखनन्दी नाम के अपने रिश्तेदार से जो विवाह करने को वहां आया था. मिला, जिसने उसे दुर्वल देखकर और एक गाय के धक्के से गिरता हुवा देखकर कहा कि अरे विश्वभूति! तेरा वो वल कहां गया. पूर्व में तो हमारा चचेरा भाई होने पर भी हमें निर्दयता से मारता था. ये सुनकर साधूता को भूलकर मुनीने क्रोधवश नियाणा किया कि अपनी तपस्या के फल से दूसरे भवमें इससे वैर लेने वाला होऊ. सत्तरमें भव में चारित्र के फल से महा शुक्र देवलोक में उत्कृष्ट स्थिति वाला देव हुवा अठारमें भव में पोतनपुर नगर में प्रजापति नामका राजा की रानी मृगावती का पुत्र त्रिपृष्ठ नामका वासुदेव हुवा. ओगणीसमें भवमे सातवी नारकी का नारक हुवा. वीशमें भवमें सिंह हुवा. एकवीसमें भवमें चोथी नारकी में नारक हुवा. वावीसमें भवमें साधारण स्थिति वाला मनुष्य, तेवीस में भवमें मूंका राजधानी में धनंजय नामका राजा की राणी धारणी की कूख में चोरासी लाख पूर्व की आयु वाला प्रियमित्र नामका चक्रवर्ती हुवा. अन्त में पोटिलाचार्य के पास दीक्षा लेकर एक क्रोड वर्ष तक चारित्र पालकर चोवीस में भव में महाशुक्र नाम के देव

लोक में सतरह सागरोपम की आयुवाला सर्वार्थ नामक विमान में देव हुवा. पचीसवें भव में भरतक्षेत्र में छत्रिका नगरी में जित शत्रुराजा की राणी भद्रादेवी की कूख में पचीस लाख वर्ष की आयु वाला नन्दन नामका पुत्र हुवा. वो पोटिलाचार्य के पास दीक्षा लेकर मास क्षपण के तपसे निरंतर भूषित होकर वीस स्थानक की ओली कर तीर्थंकर गोत्र बांधा एक लाख वर्ष का चारित्र पालकर अन्तमें एकमास की संलेखन (अहार पानी शरीर ममत्व का त्याग) कर छव्वीसवें भवमे प्राणत कल्प में पुष्पोत्तर अवतंसक विमान में वीस सागरोपम की आयु वाला देव हुवा. वहां से आयुष्य पूरा कर सत्तावीस में भवमें ऋषभदत्त ब्राह्मण के घर देवानंदा ब्राह्मणी की कूखमें आये (तीसरे भवमें जो नीच गोत्र का कर्म बांधा वो सत्तावीस वे भवमें उदयमें आया)

अयं च णं समणे भगवं महावीरे जंबुद्दीवे दीवे भारहे वासे माहणकुंडग्गामे नयरे उसभदत्तस्स माहणस्स कोडालसगुत्तस्स भारियाए देवाणंदाए माहणीए जालंधरसगुत्ताए कुच्छिसि गब्भत्ताए वक्कंते ॥ २० ॥

तजीअमेअं तीअपच्चुप्पन्नमणागयाणं सक्काणं देविंदाणं देवरायाणं, अरहंते भगवंते तहप्पगारेहिंतो अन्तकुलेहिंतो पंत० तुच्छ० दरिद्द० भिक्खाग० किवणकुलेहिंतो तहप्पगारेसु उग्गकुलेसु वा भोगकुलेसु वा रायन्न० नायखत्तियहरिवंसकुलेसु वा अन्नयरेसु वा तहप्पगारेसु विसुद्धजाइकुलवंसेसु वा साहराविचए, तं सेयं खलु ममवि समणं भगवं महावीरं चरमतित्थयरं पुव्वतित्थयरनिद्दिट्ठं माहणकुंडग्गामाओ नयराओ उसभदत्तस्स माहणस्स कोडालसगुत्तस्स भारियाए देवाणंदाए माहणीए जालंधरसगुत्ताए कुच्छीओ खत्तियकुंडग्गामे नयरे नायाणं खत्तियाणं सिद्धत्थस्स खत्तियस्स कासवगुत्तस्स भा-

रियाए तिसलाए खत्तिआणीए वासिट्ठसगुत्ताए कुच्छिसि गब्भत्ताए साहरावित्तए। जेवियणं से तिसलाए खत्तियाणीए गब्भे तंपियणं देवाणंदाए माहणीए जालंधरगुत्ताए कुच्छिसि गब्भत्ताए साहरावित्तएत्तिकट्टु एवं संपेहेइ, एवं संपेहित्ता हरि-णेगमेसिं [1]अ[2]ग्गाणीयाहिवइ देवं सद्दावेइ, सद्दावेत्ता एवं वयासी ॥ २१ ॥

इंद्र विचार करता है कि कोई कर्म भोगना बाकी रहा जिस कारण से तीर्थंकर भी ऐसे नीच कुलमें आते है और महावीर प्रभू भी इसी कारण से ब्राह्मणी की कूंख में आये हैं.

इसलिये इन्द्र आचारानुसार कि जिस समय जो इन्द्र होय वो यदि अ-रिहंत, चक्रवर्ती, बलदेव वासुदेव पूर्व संचित कर्मानुसार दरिद्र कुल में उत्पन्न होयतो उनको उसगर्भ में से निकाल कर उच्च कुलों में स्थापन करें अर्थात् नीच कुल में जन्म नहीं होने दे अब मुझे भी यहां से अर्थात् देवानन्दा की कूख से उठाकर क्षत्रियकुंड ग्राम के राजा सिद्धार्थ की रानी त्रिशला देवी की कूखमें स्थापन करना आवश्यक है. और रानी त्रिशला के गर्भ को देवानंदा ब्राह्मणी के गर्भ में रखना ऐसा. विचार कर हरिणगमेषी नामका देवता जो प्यादल सेना का अधिपति है उसे बुलाकर इस प्रकार से कहा.

एवं खलु देवाणुप्पिआ ! न एअं भूअं, न एअं भव्वं, न एअं भविस्सं, जणं अरिहंता वा चक्कवट्टी वा बलदेवा वा वासुदेवा वा अंत० पंत० किवण० दरिद० तुच्छ० भिक्खाग० आयाइंसु वा ३ एवं खलु अरिहंता वा चक्क० बल० वासुदेवा वा उग्गकुलेसु वा भोग० राइन्न० नाय० खत्तिय० इक्खाग० हरिवंसकुलेसु वा अन्नवरेसु वा तहप्पगारेसु विसुद्धजाइकुल-वंसेसु आयाइंसु वा ३ २२ ॥

१-२ पायत्ताणीया०

अत्थि पुण एसे वि भावे लोगच्छेरयभूए अणंताहिं उस्सप्पिणीओसप्पिणीहिं विइक्कंताहिं समुप्पज्जति, नामगुत्तस्स वा कम्मस्स अक्खीणस्स अवेइअस्स अणिज्जिणस्स उदएणं, जंणं अरिहंता वा चक्कवट्टी वा बलदेवा वा वासुदेवा वा अंतकुलेसु वा पंतकुलेसु वा तुच्छ० किवण० दरिद्द० भिक्खाग-कुलेसु वा आयाइंसु वा ३ नो चेव णं जोणीजम्मणनिक्खमणेणं निक्खमिंसु वा ३ ॥ २३ ॥

हे सेनापति ! ऐसा कभी हुवा न होगा कि अरिहंत तीर्थंकर चक्रवर्ती कभी अंत पंत कृपण नीच कुल में उत्पन्न होवे पर यदि कोई नाम गोत्र कर्म भोगना बाकी रहने के कारण उत्पन्न हो ही जावें तो वो आश्चर्य रूप समझना होगा किन्तु मर्यादानुसार नीच कुल में आवे तो सही पर जन्म कदापि न हो.

अयं च णं समणे भगवं महावीरे जंबूद्दीवे दीवे भारहे वासे माहणकुंडग्गामे नयरे उसभदत्तस्स माहणस्स कोडालस-गुत्तस्स भारियाए, देवाणंदाए माहणीए जालंधरसगुत्ताए कुच्छिसि गब्भत्ताए वक्कंते ॥ २४ ॥

तं जीअमेअं तीअपच्चुप्पन्नमणागयाणं सक्काणं देविंदाणं देवराईणं अरहंते भगवंते तहप्पगारेहिंतो अन्तकुलेहिंतो पंत० तुच्छ० किवण० दरिद्द० वणीमग० जाव माहणकुलेहिंतो तहप्पगारेसु उग्गकुलेसु वा भोगकुलेसु वा राइण्ण० नाय० खत्तिय० इक्खाग० हरिवं० अन्नयरेसु वा तहप्पगारेसु विसुद्ध जाइकुलवंसेसु साहराविसए ॥ २५ ॥

तं गच्छणं तुमं देवाणुप्पिआ ! समणं भगवं महावीरं माहणकुंडग्गामाओ नयराओ उसभदत्तस्स माहणस्स कोडा-

लस गुत्तस्स भारियाए देवाणंदाए माहणीए जालंधरसगुत्ताए कुच्छिओ खत्तियकुंडग्गामे नयरे नायाणं खत्तियाणं सिद्धत्थस्स खत्तियस्स कासवगुत्तस्स भारियाए तिसलाए खत्तियाणीए वासिट्ठसगुत्ताए कुच्छिसि गब्भत्ताए साहराहि, जेविअणं से तिसलाए खत्तियाणीए गब्भे तंपिअणं देवाणंदाए माहणीए जालंधरसगुत्ताए कुच्छिसि गब्भताए साहराहि, साहरित्ता ममेयमाणत्तिअं खिप्पामेव पच्चप्पिणाहि ॥ २६ ॥

इस समय श्रीमत् श्रीमहावीर प्रभु ऊपर कहे आश्चर्य रूप देवानन्दा ब्राह्मणी के कूख में आये हैं और इन्द्र को आचारानुसार अब उन्हें उस गर्भ से निकाल उच्च गोत्र में स्थापन करना चाहिये इसलिये तुम अब जाओ और देवानन्दा की कूख में से निकालकर महावीर स्वामी को त्रिशलारानी की कूख में स्थापन करो और त्रिशला के गर्भ को उसके गर्भ में अर्थात् उलटा पलटा करो और मेरे कहे अनुसार कर कर मेरे को सूचित करो कि सर्व आज्ञानुसार कर दिया.

तएणं से हरिणेगमेसी अग्गाणीयाहिवई देवे सक्केणं देविंदेणं देवरन्ना एवं वुत्ते समाणे हट्ठे जाव हयहियए करयल जावत्तिकट्टु एवं जं देवा आणवेइत्ति आणाए विणएणं वयणं पडिसुणेइ, पडिसुणित्ता उत्तरपुरच्छिमं दिसीभागं अवक्कमइ, अवक्कमित्ता वेउव्विअसमुग्घाएणं समोहणइ, वेउव्विअसमुग्घाएणं समोहणित्ता संखिज्जाइं जोअणाइं दंडं निसिरइ, तंजहा—रयणाणं वइराणं वेरुलिआणं लोहिअक्खाणं मसारगल्लाणं हंसगब्भाणं पुलयाणं सोगंधियाणं जोईरसाणं अंजणाणं अंजणपुलयाणं रयणाणं जायरूवाणं सुभगाणं अंकाणं फलिहाणं रिट्ठाणं अहाबायरे पुग्गले परिसाडेई,

१ परिसाडिअ क० २ छेआए क०

परिसाडित्ता अहासुहुमे पुग्गले परिश्रादियइ ॥ २७ ॥

ऐसी इन्द्र महाराज की आज्ञा सुनकर और सर्व बातों से जानकार होकर आनन्द संतोष से प्रफुल्लित हृदय वाला सेनाधिपति हाथ जोड़ कहने लगा कि ऐसा ही होगा अर्थात् आपने जैसा कहा है वैसेही करुंगा इस प्रकार कहकर और इन्द्र की आज्ञा शिर चढ़ाकर ईशान कौन में जाकर वैक्रिय समुद्घात से अपने शरीर को बड़ा बनाकर (समुद्घात की व्याख्याः—जीव के प्रदेशों को फैलाकर एक संख्याता जोजन का दंड बनावे और उस दंड को उत्तम जाति के रत्न जैसे कर्केतन, वैडूर्यनील, वज्र, लोहिताक्ष, मसारगल, हंसगर्भ पुलक, सौगंधिक, ज्योतिःसार, अंजनरत्न, अंजनपुलक, जातरूप, सुभग, अंक, स्फटिक, अरिष्ट इस प्रकार के सोलह जाति के रत्न उनके सूक्ष्म पुद्गल अर्थात् उत्तम पुद्गलों को लेकर सुशोभित करे और बादर पुद्गलों को धूलि की समान छोड़ देवे वैक्रिय समुद्घात कर कर) उत्तर समुद्घात किया.

परियाइत्ता दुच्चंपि वेउव्विअसमुग्घाएणं समोहणइ, समोहणित्ता उत्तरवेउव्वियरूवं विउव्वइ, विउव्वित्ता ताए उक्किट्ठाए तुरियाए चवलाए चंडाए जइणाए उद्धुआए सिग्घाए दिव्वाए देवगईए वीईवयमाणे २ तिरिअमसंखिज्जाणं दीवसमुद्दाणं मज्झंमज्झेणं जेणेव जंबुद्दीवे दीवे, जेणेव भारहे वासे, जेणेव माहणकुंडग्गामे नयरे, जेणेव उसभदत्तस्स माहणस्स गिहे, जेणेव देवाणंदा माहणी, तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता आलोए समणस्स भगवओ महावीरस्स पणामं करेइ, करित्ता देवाणंदाए माहणीए सपरिजणाए ओसोवणिं दलइ ओसोवणिं दलित्ता असुभे पुग्गले अवहरइ, अवहरित्ता सुभे पुग्गले पक्खिवइ, पक्खिवित्ता अणुजाणउ मे भयवंतिकट्टु समणं भगवं महावीरं अव्वाबाहं अव्वाबाहेणं दिव्वेणं पहाव्वेणं करयलसंपुडेणं गिह्णइ,

समणं भगवं महावीरं० गिरिहता जेणेव खत्तिअकुंडग्गामे नयरे, जेणेव सिद्धत्थस्स खत्तिअस्स गिहे, जेणेव तिसला खत्तियाणी, तेणेव उवागच्छइ, तेणेव उवागच्छित्ता तिसलाए खत्तिआणीए सपरिजणाए ओसोअणिं दलइ, ओसोअणिं दलित्ता असुभे पुग्गले अवहरइ, अवहरित्ता सुभे पुग्गले अवहरइ, अवहरित्ता सुभे पुग्गले पक्खिवेइ, पक्खिवित्ता समणं भगवं महावीरं अव्वाबाहं अव्वाबाहेणं तिसलाए खत्ति-आणीए कुच्छिसि गब्भत्ताए साहरई, जेविअणं से तिसलाए खत्तिआणीए गब्भे तंपिअणं देवाणंदाए माहणीए जालंधर-सगुत्ताए कुच्छिसि गब्भत्ताए साहरइ, साहरित्ता जामेव दिसिं पाउब्भूए तामेव दिसिं पडिगए ॥ २८ ॥

और उत्कृष्ट, त्वरित, चंचल, चंडा, जयणा, इत्यादि अधिकाधिक शीघ्र दिव्य देव गति द्वारा चलकर तिर्यग् दिशा में असंख्याता द्वीप समुद्र को पार कर जंबूद्वीप के भरतक्षेत्र के कुंड ग्राम में अर्थात् जहां देवानंदा की कूख में महावीर प्रभु विराजमान हैं वहां आया और भगवान के दर्शन कर नमस्कार किया देवानंदा ब्राह्मणी को अवसर्पिणी नामकी अचेत निद्रा में लीन कर अशुभ पुद्गलदूर कर शुभ पुद्गल रख कर तथा भगवान से आज्ञा मांगता हुवा हरिण गमेषी देवता ने भगवान को किंचित्मात्र भी वाधा न होवे इस तरह के दिव्य प्रभाव से करतल संपुट में गर्भ को लेकर अर्थात् भगवान महावीर को लेकर क्षत्रिय कुंड में त्रिशला क्षत्रियाणी के राज्य महल में गया वहां भी सर्व परिवार को तथा त्रिशला रानी को अवसर्पिणी निद्रा देकर शुभ पुद्गलों को रखता हुवा अशुभ पुद्गलों को दूर करता हुवा त्रिशला के गर्भ को निकालकर उसके स्थान में महावीर प्रभु को स्थापन किये सर्व को सचेत करता हुवा अर्थात् जो विद्या द्वारा निद्रा आगई थी उसको हरता हुवा त्रिशला के गर्भ को लेजाकर देवानंदा की कूख में रक्खा इस प्रकार से सर्व कार्य्य यथोचित पूरा कर हरिणगमेषी देव अपने स्थान को पीछा गया.

उक्किट्ठाए तुरिआए चवलाए चंडाए जवणाए उद्धुआए सिग्घाए दिव्वाए देवगइए, तिरिअमसंखिज्जाणं दीवसमुद्दाणं मज्झंमज्झेणं जोअणसाहस्सिएहिं विग्गहेहिं उप्पयमाणे २ जेणामेव सोहम्मे कप्पे सोहम्मवडिंसए विमाणे सक्कंसि सीहासणंसि सक्के देविंदे देवराया, तेणामेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता सक्कस्स देविंदस्स देवरन्नो एअमाणत्तिअं खिप्पामेव पच्चप्पिणइ ॥ २९ ॥

हरिणी गमेषी देवता पूर्व में कहे अनुसार ही असंख्यात द्वीपों और समुद्रों को पार करता हुवा दिव्य गति द्वारा सौधर्म देव लोक में जहां इन्द्र बैठा था वहां आया और इन्द्र महाराज को सर्व अपने कार्य की वार्ता सुनादी.

तेणं कालेणं तेणं समएणं समणे भगवं महावीरे तिन्नाणोवगए आवि हुत्था, तंजहा—साहरिज्जिस्सामित्ति जाणइ, साहरिज्जमाणे न जाणइ, साहरिएमित्ति जाणइ ॥ ३० ॥

जिस समय भगवान महावीर को देवानन्दा की कूंख में से उठाये उस समय उत्तरा फालगुनी नक्षत्र था भगवान तो उस समय भी तीन ज्ञान के धारक थे इस से उठाने की बात तथा उठाकर दूसरी जगह रख दिया ये सर्व जानते थे किन्तु उठाने का समय न जाने इस बार में टीकाकार कहते हैं कि उठाने का समय ज्यादे होने से अवधि ज्ञानी जान सक्ते हैं परन्तु हरिणगमेषी का कौशल्य बताया है कि भगवान को ऐसी चातुर्यता से उठाया कि उनको उठाये जाने की मालुम भी नहीं हुई.

तेणं कालेणं तेणं समएणं समणे भगवं महावीरे जेसे वासाणं तच्चे मासे पंचमे पक्खे आसोअबहुले, तस्सणं असोअबहुलस्स तेरसीपक्खेणं बासीइराइंदिएहिं विइक्कंतेहिं तेसीइमस्स राइंदिअस्स अंतरा वट्टमाणे हिआणुकंपएणं देवेणं हरिणेगमिसिणा सक्कवयणसंदिट्ठेणं माहणकुंडग्गामाओ नय-

राओ उसभदत्तस्स माहणस्स कोडालसगुत्तस्स भारिआए देवाणंदाए माहणीए जालंधरसगुत्ताए कुच्छीओ खत्तियकुंडग्गामे नयरे नायाणं खत्तिआणं सिद्धत्थस्स खत्तिअस्स कासवगुत्तस्स भारिआए तिसलाए खत्तिआणीए वासिट्ठसगुत्ताए पुव्वरत्तावरत्तकालसमयंसि हत्थुत्तराहि नक्खत्तेणं जोगमुवागएणं अव्वाबाहं अव्वाबाहेणं कुच्छिंसि गब्भत्ताए साहरिए ॥ ३१ ॥

वर्षाऋतुका तीसरा महिना पांचमा पक्ष अर्थात् आसोज वदि १३ के दिवस भगवान महावीर को एक गर्भ से निकाल कर दूसरे गर्भ में रखा था भगवान बयासी रात और दिन देवानंदा की कूंख में रहे और तयासीवीं रात्री को भगवान पर अन्तःकरण की भक्ति होने से इन्द्र महाराज की आज्ञानुसार हरिण गमेषी देव ने देवानंदा की कुख से निकाल कर भगवान को सिद्धार्थ राजा की रानी त्रिशला देवी की कूंख में रक्खा।

जं रयणिं चणं समणे भगवं महावीरे देवाणंदाए माहणीए जालंधरसगुत्ताए कुच्छीओ तिसलाए खत्तीआणीए वासिट्ठसगुत्ताए कुच्छिंसि गब्भताए साहरिए, तं रयणिं चणं सा देवाणंदा माहणी सयणिज्जंसि सुत्तजागरा ओहीरमाणी २ इमयारूवे उराले कल्लाणे सिवे धन्ने मंगले सस्सिरीए चउद्दस महासुमिणे तिसलाए खत्तियाणीए हडेत्ति पासित्ताणं पडिबुद्धा, तंजहा—गय० गाहा ॥ ३२ ॥

उस समय देवानन्दा ने उत्तम गर्भ के चले जानेसे आधी निद्रा लेती हुई स्वप्न में ऐसा देखा कि उसके पूर्व में देखे हुवे १४ स्वप्न रानी त्रिशला देवी उससे लेरही है और ऐसा देखकर वो एकदम जागृत हुई.

जं रयणिं चणं समणे भगवं महावीरे देवाणं-

दाए माहणीए जालंधरसगुत्ताए कुच्छीओ तिसलाए खत्तिआणीए वासिट्ठसगुत्ताए कुच्छिंसि गब्भत्ताए साहरिए, तं रयणिं च णं सा तिसला खत्तिआणी तंसि तारिसगंसि वासघरंसि अब्भिंतरओ सचित्तकम्मे बाहिरओ दूमिअघट्ठमट्ठे विचित्तउल्लोअचिल्लिअतले मणिरयणपणासिअंधयारे बहुसमसुविभत्तभूमिभागे पंचवन्नसरससुरभिमुक्कपुप्फपुंजोवयारकलिए कालागुरुपवरकुंदुरुक्कतुरुक्कडज्झंत धूवमघमघंतगंधुद्धुयाभिरामे सुगंधवरगंधिए गंधवट्टिभूए तंसि तारिसगंसि सयणिज्जंसि सालिंगणवट्टिए उभओ बिब्बोअणे उभओ उन्नए मज्झे णयगंभीरे गंगापुलिणवालुअउद्दालसालिसए ओअविअखोमिअदुगुल्लपट्टपडिच्छन्ने सुविरइअरयत्ताणे रत्तंसुयसंवुए सुरम्मे आईणगरूयबूरनवणी अतूलतुल्लफासे सुगंधवरकुसुमचुन्नसयणोवयारकलिए, पुव्वरत्तावरत्तकालसमयंसि सुत्तजागरा ओहीरमाणी २ इमेआरूवे उराले जाव चउद्दस महासुमिणे पासित्ताणं पडिबुद्धा, तंजहा गय[1]-वसह[2]-सीह[3]-अभिसेय[4] दाम[5]-ससि[6]-दिणयरं[7] झयं[8] कुंभं[9]। पउमसर[10]-सागर[11]-विमाणभवण[12] रयणुच्चय[13]-सिहिं[14] च ॥ १ ॥ तएणं सा तिसला खत्तिआणी इप्पढमयाए तओअचउद्दंतमूसिअविपुलजलहरहारनिकरखीरसागरससंककिरणदगरयरययमहासेलपंडुरतरं समागयमहुयरसुगंधदाणवासियकपोलमूलं देवरायकुंजरं (र) वरप्पमाणं पिच्छइ सजलघणविपुलजलहरगज्जियगंभीरचारुघोसं इभं सुभं सव्वलक्खणकयंबिअं वरोरुं १ ॥ ३३ ॥

जिस रात्री को श्रीमत् महावीर प्रभु को देवानन्दा की कूंख में से निकाल कर त्रिशलारानी की कूंख में रक्खे उस रात्री को त्रिशलाराणी जिस उत्तम शयनागार में सोती थी उसका किंचित् मात्र स्वरूप बताते हैं प्रथम तो वो शयनागार ऐसा मनोहर था कि जिसका वर्णन हो ही नहीं सक्ता शयनागार की भीतरी दीवारों पर उत्तमोत्तम चित्र बनाये हुवे थे और दीवारों का बाहरी भाग घिसकर सफेद चलकादार बनाया हुवा था ऊपर का भाग अर्थात् छत उत्तमोत्तम चित्रों द्वारा चित्रित थी और मणी रत्न इत्यादि जडे हुवे थे जिससे अंधकार दूर होता था नीचे की जमीन अर्थात् फर्श भी अति सुन्दर थी और जहां पांच वर्ण के उत्तम सुगंध वाले पुष्पों के ढेर रक्खे हुवे थे और फूल सजाये हुवे थे और जो कालागुरु प्रवर कुंदुरुक तुरूस्क इत्यादि अनेक प्रकार के सुगंधी पदार्थों को धूप किये जाने से बहुत सुगंधित होरहा था ऐसे शयनागार में शय्या जो सुगंधी चूर्णों द्वारा सुगंधी बनाई हुई थी जिसके दोनों बाजू पर शरीर प्रमाण के तकिये रक्खे हुवे थे और मस्तक और पैर की तर्फ भी तकिये रखे हुवे थे जिससे शय्या चारों तर्फ से ऊंची व बीच में ऊंडी थी गंगा नदी की रेती के समान जिसका बीच का भाग कोमल और नरम था और जो रेसम के उत्तम वस्त्र से (खाट पछेवड़े से) ढकी हुई थी जिसके ऊपर रज स्त्राण ढका हुवा था जिस पर मच्छरदानी रक्तवस्त्र की लगी हुई थी शय्या में चमड़ा लगा हुवा था अत्यन्त कोमल जैसे बूई अथवा एक जाति की कोमल वनस्पति समान, मक्खन समान वा आकड़े की रूई समान कोमल था ऐसी उत्तम कोमल शय्या में सोती हुई त्रिशला राणी कुछ जागृत अवस्था में चौदह महा स्वप्न देखकर जागृत हुई.

त्रिशलाराणी ने प्रथम स्वप्न में हाथी देखा वो हाथी कैसा है कि चार दांत वाला है मेघ के वरसने वाद के वादल समान उज्वल है मोती के हार के समान क्षीर सागर के जल के समान चंद्रकिरण समान चांदी का पहाड़ समान जिसका सफेद रंग है ऐसा धोला है जिसके कुंभ स्थल से मद चू रहा है जिसके मस्तक पर भवरों के झुंड बैठे हैं और इन्द्र के ऐरावत हाथी के समान जो बडा है और गाजते हुवे विपुल मेघ के समान गर्जारव व मधुर आवाज करने वाला है और सर्व शुभ लक्षणों से सुशोभित और श्रेष्ठ विशाल अंग वाला है.

नोट—आज भी सफेद रंग का हाथी ब्रह्मदेश में पूजनीक गिना जाता है.

तओ पुणो धवलकमलपत्तपयराइरेगरूवप्पभं पहासमुदओवहारेहिं सव्वओ चेव दीवयंतं अइसिरिभरपिल्लणाविसप्पंतकंतसोहंतचारुककुहं तणुसुइसुकुमाललोमनिद्धच्छविं थिरसुवद्धमंसलोवचिअलट्ठसुविभत्तसुंदरंगं पिच्छइ घणवट्टलट्ठउक्किट्ठविसिट्ठतुप्पग्गतिक्खसिंगं दंतं सिवं समाणसोहंतसुद्धदंतं वसहं अमिअगुणमंगलमुहं २ ॥ ३४ ॥

बैल का वर्णन ।

दूसरे स्वप्न में त्रिशला राणी ने बैल देखा वो बैल सफेद कमल के पत्तों के ढेर से अधिक रूप कांति वाला अपनी प्रभा के समुदाय (कांति कलाप) से चारों ओर प्रकाशक अति सुन्दरता से दूसरों को प्रेरणा करता हो ऐसा जिसका कुंध (धुआ) है और शुद्ध सुकुमाल रोमराजी से स्निग्ध चमड़ी वाला स्थिर सुवद्ध मांस से पुष्ट श्रेष्ठ यथायोग्य शरीर भाग वाला था उसके सींग घन वर्तुलाकार उत्कृष्ट उपर के भाग में तीक्ष्ण थे जिसका स्वभाव क्रूरता रहित और जो कल्याण करने वाला यथायोग्य शोभायमान स्वच्छ दांतवाला और बहुत गुण मंगल मुखवाला वो बैल था.

तओ पुणो हारनिकर खीरसागरससंककिरणदगरयरययमहासेलपंडुरंगं (ग्रं० २००) रमणिज्जपिच्छणिज्जंथिरलट्ठपउट्ठवट्टपीवरसुसिलिट्ठविसिट्ठतिक्खदाढाविडंबिअमुहं परिकम्मिअजच्चकमलकोमलपमाणसोहंतलट्ठउट्ठं रत्तुप्पलपत्तमउअसुकुमालतालु निल्लालियग्गजीहंमूसागयपवरकणगताविअआवत्तायतवट्टतडियविमलसरिसनयणं विसालपीवरवरोरुं पडिपुन्नविमलखंधं मिउविसयसुहमलक्खणपसत्थविच्छिन्नकेसराडोवसोहिअं ऊसिअसुनिम्मिअसुजायअप्फोडिअलंगूलं सोमं सोमाकारं लीलायंतं नहयलाओ ओवयमाणं नियगवयणम-

इवयंतं पिच्छइ सा गाढातिक्खग्गनहं सीहं वयणसिरीपल्लवपत्त-चारुजीहं ३ ॥ ३५ ॥

तीसरे स्वप्न में सिंह देखा वो मोती के हारोंका समूह क्षीरसागर चन्द्र-किरन इत्यादि वस्तुओं के समान बहुत सफेद रमणीय देखने योग्य स्थिर सुंदर पंजे वाला गोलाकार पुष्ट अच्छी तरह से मिली हुई तीक्ष्ण डाढों से शोभायमान मुंहवाला उत्तम जाति के कोमल कमल से शोभायमान होटवाला रक्त कमल के पत्ते के समान अति सुकुमाल तालूवाला जिसमें लपलपायमान जीभवाला सुनार के घर में जैसे मूंस में उत्तम जाति का सोना गर्म होकर पिघलता है और चक्कर खाता है ऐसे बिजली के समान विमल नेत्रवाला विशाल, पुष्ट, श्रेष्ठ साथल और संपूर्ण विमल खंधवाला, निर्मल सूक्ष्म, लक्षण से उत्तम विस्तीर्ण केसर के आटोप से शोभायमान ऊंचा.

ऐसा और अक्रूर सुंदर क्रीडा करने वाले सिंह को आकाश से उतर कर अपने मुख में प्रवेश करते हुवे रानी ने स्वप्न में देखा जो सिंह अति तीक्ष्ण नखवाला मुख की शोभा में पल्लव पत्ते की समान सुंदर जीभवाला था.

तओ पुणो पुन्नचंदवयणा, उच्चागयठाणलट्ठसंठिअं पसत्थरूवं सुपइट्ठिअकणगकुम्मसरिसोवमाणचलणं अच्चुन्नयपीणरइअमंसलउन्नयतणुतंबनिद्धनहं कमलपलाससुकुमालकरचरणकोमलवरंगुलिं कुरुविंदावत्तवट्टाणुपुव्वजंघं निगूढजाणुं गयवरकरसरिसपीवरोरुं चामीकररइअमेहलाजुत्तकंतविच्छिन्नसोणिचक्कं जच्चंजणभमरजलयपयरउज्जुअसमसंहिअतणुअआइज्जलडहसुकुमाल मउअ रमणिज्ज रोमराइं नाभीमंडलसुंदरविसालपसत्थजघणं करयलमाइअपसत्थतिवलियमज्झं नाणामणिकणगरयणविमलमहातवणिज्जाभरणभूसणविराइयंगोवंगिं हारविरायंतकुंदमालपरिणद्धजलजलितथणजुअलविमलकलसं आइयपत्तिअविभूसिएणं सुभगजालुज्जलेणं मुत्ताकलावएणं

उरत्थदीणारमालियविरइएण कंठमणिसुत्तएण य कुंडलजुअ-लुल्लसंतअंसोवसत्तसोभंतसप्पभेणं सोभागुणसमुदएणं आणण-कुडुंबिएणं कमलामलविसालरमणिज्जलोअणं कमलपज्जलं-तकरगहिअमुक्कतोयं लीलावायकयपक्खएणं सुविसदकसिण घणसण्हलंवंतकेसत्थं पउमद्दहकमलवासिणिं सिरिं भगवइं पिच्छइ हिमवंतसेलसिहरे दिसागइंदोरुपीवरकराभिसिच्चमाणिं ४ ॥ ३६ ॥

लक्ष्मीदेवी के अभिषेक का वर्णन ।

चौथे स्वप्न में त्रिशलाराणी ने लक्ष्मी देवी को देखा वो कैसी है कि पूर्णचंद्र-वदना ऊंचे स्थान में रहने वाली मनोहर अंगोपांग वाली प्रशस्य (सुंदर) रुप वाली प्रतिष्ठित सोनेका बनाहुवा कछुवे के समान शोभायमान पैर वाली, अति ऊंचे पुष्ट मांस से बनेहुवे अंगूठे इत्यादि वाली जो तांबे के समान लाल और चीकणे नख वाली, कमल के कोमल नये पत्ते के समान सुंदर हाथ पग वाली और कोमल अंगुलियों वाली कुरु विंद आवर्त भूषण के समान सुन्दर जांघ वाली मांस में दबगये है घुटने जिसके ऐसी सुंदर, हाथी की सूंड के समान साथल वाली और मनोहर सोने की बनीहुई मेखला से युक्त विस्तीर्ण कमलवाली उत्तमजाति के अंजन, भंवर, मेग समूह की तरह बहुत काली सरल समान मिलिहुई शो-भायमान सुकोमल मृदु रमणीय रोम राजी से युक्त नाभि मंडल वाली सुंदर विशाल प्रशस्त जघन (नाभि के नीचे का भाग) वाली हथेली में समाजावे ऐसी सुन्दर तीन सलवाली उदर वाली, और जुदी २ जाति के मणी रत्नों से शोभायमान सोने के ओप वाले सुन्दरता से निर्मल रक्त सोने के आभरण भूषण से विराजमान अंगोपांग वाली हारसे विराजित और कुंद के फूल की माल से देदीप्यमान है स्तन युगल जो कि दो निर्मल कलश की तरह शोभायमान है जिसके, और कंठमणी सूत्र से और शोभागुण समुदाय से युक्त देवी है सूत्र में मरकत (पन्ने) से शोभायमान है और मोती के समूह से शोभित है और सुवर्ण मोहरों के भूषण से भूषित है (ये भूषण सर्व कण्ठ से छाती तक के होते है उनका वर्णन है) कानमें कुंडल देदीप्यमान खंधे पर लटककर मुखकी शोभा बना रहे हैं और नि-

मेल कमल के समान विशाल रमणीय आंख वाली और कमल का शोभायमान सुंदर पंखा है जिसके हाथमें, जिसमें से रसका पानी निकल रहा है लीलासे विना पसीना भी पंखा हिला रही है और अति स्वच्छ भरे हुवे मेघ की समान काले चीकणे वाल की चोटी (वेणी) वाली और पद्म द्रह में कमल के घरमें श्रीभगवती देवी हिमवंत पर्वत के शिखर पर दिशारूप दो हाथियों की पुष्ट सूंडोसे जो स्नान कराती हुई वैठी है उसको त्रिशला देवी स्वप्न में देखती है.

पद्मद्रह का वर्णनः-१०५२ योजन १२ कला का हिमवंत पर्वत लम्बा है और सो योजन का ऊचा सोने का है उसके ऊपर दस योजन ऊंडा और ५०० योजन चोड़े और १००० योजन लम्बा वज्र रत्न का तला ऐसे पद्मद्रह अर्थात दीव्य कुंड है उसके मध्यभाग में दो कोसका ऊंचा एक योजन का चोड़ा वर्तुलाकार नील रत्न का दस योजन की नाल वाला वज्र रत्न का मूल रिष्ट रत्न का कुंद लाल सोने के वाहिर के पत्र और जंबूनद (सोने) के भीतर के पत्ते ऐसा सब से बड़ा एक कमल है उस कमल के २ कोसकी चोडी एक कोस की ऊंची रक्त सोने के सरे वाली रक्त सोनेकी कर्णिका है उसके वीचमें एक कोस लम्बी आधा कोस चौड़ी कोस से कुछ कम ऊंची ऐसी देवी की वास भूमी है उसमें पूर्व पश्चिम और उत्तर इन तीन दिशाओं मे तीन दरवाजे हैं उसके भीतर २५० धनुप की मणी रत्नों की वेदिका है उसके ऊपर श्री देवी के योग्य शय्या है इस मुख्य कमल के चारों ओर श्रीदेवी के आभरण के लिये १०८ कमल हैं उनका माप पूर्व कमल से लम्बाई चोड़ाई ऊंचाई आधी जाननी. उनके आजू बाजू दूसरे वलय आकार में वायव्य ईशान उत्तर दिशा में ४००० सामानिक देव के ४००० कमल है पूर्व दिशा में ४ महत्तरा देवी के ४ कमल है अग्नी कोणमें गुरु पदके अभ्यंतर पर्पदा के आठ हजार कमल है वो ८००० देवताओं के लिये है अग्नि कोण में मित्र स्थान के मध्य पर्पदा के १०००० देवताओं के १०००० कमल हैं नैऋत्य कोण में किंकर अर्थात् नोकर चाकर समान वाह्य पर्पदा के १२००० देवों के १२००० कमल है पश्चिम दिशा में घोड़ा रथ, पैदल भैसा, गांधर्व, नाटक ऐसी सात प्रकार की सेना के सेनापतियों के सात कमल हैं तीसरे वलय में १६००० अंगरक्षक देवों के १६००० कमल है. चौथे वलय में ३२००००० अभ्यंतर अभियोगिके (आज्ञापालक) देवों के ३२००००० कमल है पंचम वलय में ४०००००० कमल मध्यम अभियोगिक देवों के हैं. छठे वलय

में ४८०००० बाह्य अभियोगिक देवों के कमल हैं. इस प्रकार से सर्व कमलों की संख्या छेवलयों में एक क्रोड़ वीस लाख पचास हजार एकसो वीस होती है. उनके मध्यमें ऊपर कहे हुवे पद्मद्रह में रहती हुई लक्ष्मी देवी को त्रिशला-राणी ने स्वप्नमें देखी.

द्वितीय व्याख्यान समाप्तः ।

तओ पुणो सरसकुसुममंदारदामरमणिज्जभूअं चंपगासो-गपुन्नागनागपिअंगुसिरीससुग्गरगमल्लिआजाइजूहिअंकोल्ल-कोज्जकोरिंटपत्तदमणयनवमालिअवउलतिलयवासंतिअपउमु-प्पलपाडलकुंदाइमुत्तसहकारसुरभिगंधिं अणुवममणोहरेणं गं-धेणं दस दिसाओ वि वासयंतं सव्वोउअसुरभिकुसुममल्लधव-लविलसंतकंतवहुवन्नभत्तिचित्तं छप्पयमहुअरिभमरगणगुमगु-मायंतनिलिंतगुंजंतदेसभागं दामं पिच्छइ नहंगणतलाओ ओवयंतं ५ ॥ ३७ ॥

पंचम स्वप्न में त्रिशला देवी ने फूलों की दो माला देखी उन मालाओं में सुगंधी रसवाले फूल थे मंदार (कल्पवृक्ष) के फूलों की गुंथी हुई थी चंपा, अशोक, पुन्नाग, पीअंगु, शिरसें, मोगरा, मालतीका जाई, जूई, अकोलकोज्ञ, कोरिंट, दमनक, नवमालिका, बकोल, तिलक, वसंतिक, पद्मपत्र, पाटल, कुंद, अतिमुक्त, सहकार (आंब) इत्यादि अनेक जाति के फूलों की सुगंध से अनूप मनोहर गंध से दश दिशाओं सुगंधमय होगई थी और सर्व ऋतु के सुगंधी फूल की मालायें जिसमें धवलरंग ज्यादा है ऐसे मनोहर दूसरे भी रंगों से चित्रमय दीखती थी जिसमें छ पैर वाले मधुकर भंवर और भंवरियों गुंजार कर रही थी और माला को नीलेरंग की बना रही थी ऐसी अत्यन्त सुंदर दो मालाओं को त्रिशला देवी ने आकाश में से उतर कर अपनी तरफ आती हुई देखी.

ससिं च गोखीरफेणदगरयरययकलसपंडुरं सुभं हिअयन-यणकंतं पडिपुन्नं तिमिरनिकरघणगुहिरवितिमिरकरं पमाण-

पक्खंतरायलेहं कुमुअवणविबोहगं निसासोहगं सुपरिमहृद-
प्पणतलोवमं हंसपडुवन्नं जोइसमुहमंडगं तमरिपुं मयणसरा-
पूरगं समुद्ददगपूरगं दुम्मणं जणं दइअवज्जिअं पायएहिं
सोसयंतं पुणो सोमचारुरूवं पिच्छइ सा गगणमंडलविलास-
सोमचंकम्ममाणतिलगं रोहिणिमणहिअयवल्लहं देवी पुन्नचं-
दं समुल्लसंतं ६ ॥ ३८ ॥

चन्द्र का वर्णन.

छठे स्वप्न में त्रिशला राणी ने चंद्रमा देखा वो चंद्र गौ का दूध फीण पाणी का विंदु चांदी के कलश इत्यादि सफेद वस्तु के समान उज्वल था हृदय और नेत्रों को शांति देनेवाला मनोहर था और पूर्णिमा के चंद्र समान पूर्ण था अंधकार का समूह जो घन होकर गुफाओं में घुस जावे उसको दूर करने वाला दो पक्ष के वीच में अर्थात् शुक्ल पूर्णिमा के चंद्र समान पूर्ण था अंधकार का समूह जो घन होकर गुफाओं में घुसजावे उसको दूर करने वाला दो पक्ष के बीचमें अर्थात् शुक्ल पूर्णीमा के चंद्रमा का सा प्रभाव वाला, कुमुद (चंद्रविकाशी कमलों को जागृति करने वाला रात्री का भूषण. अच्छी प्रकार से मंजा हुवा दर्पण के तलेके समान हंसके समान सफेद ज्योतिषी देवों का भूषण अंधकार नाशक मदन के वाणों को पूरने वाला समुद्र में भरती (ज्वार भाटा) लाने वाला वियोगी स्त्री पुरुषों को दुख देने वाला. और उसकी किरणों से लोही सुकाने वाला. ऐसा मनोहर उत्तम रूपवाले चंद्रको जो गगन मंडल में विशाल मनोहर चलते तिलक के समान था. रोहिणी नक्षत्र के हृदय को वल्लभ उदयमान था. वो राणी ने देखा.

तओ पुणो तमपडलपरिप्फुडं चेव तेअसा पज्जलंतरूवं-
रत्तासोगपगासकिंसुअसुअमुहगुंजद्धरागसरिसं कमलवणालं-
करणं अंकणं जोइसस्स अंबरतलपईवं हिमपडलगलग्गहं गह-
गणोरुनायगं रत्तिविणासं उदयत्थमणेसु मुहुत्तसुहदंसणं दुन्नि-

रिक्खरूवं रत्तिसुद्धंतदुप्पयारपमद्दणं सीअवेगमहणं पिच्छइ मेरुगिरिसययपरियट्टयं विसालं सूरं रस्सीसहस्सपयलियदित्तसोहं ७ ॥ ३९ ॥

सूर्य का वर्णन.

इसके बाद सातवें स्वप्न में अंधकार के पडल को फोड़ने वाला तेजसे जाज्वल्यमान (जलाने वाला) रक्त अशोक, अंकुश, केसुडे लालचणोंठी (चिरमी) इत्यादि रंगकी वस्तु समान लाल, दिन विकासी कमल को प्रकाशक, बारै राशि को गिनती में लाने वाला, आकाश तलका प्रदीप (दीपक) हिम के पटलको फोड़ने वाला, ग्रह समुदाय का बडानायक, रात्रिका विनाशक, उदय और अस्त समय दो २ घड़ी सुख से देखने योग्य, बाकी के समय में दुःख से देखने योग्य, रात्री में भटकने वाले दुराचारीयों को रोकने वाला ठंड के वेगको शांत करने वाला, मेरुपर्वत के चारों ओर निरंतर फिरने वाला ऐसा विशाल सूर्य हजार किरण वाले को देखा जो देदीप्यमान था.

तओ पुणो जच्चकणगलट्ठिपइट्ठिअं समूहनीलरत्तपीयसुक्किलसुकुमालुल्लसियमोरपिच्छकयमुद्धयं धयं अहियसस्सिरीयं फालिअसंखंककुंददगरयरययकलसपंडुरेण मत्थयत्थेण सीहेण रायमाणेण रायमाणं भित्तुं गगणतलमंडलं चेव ववसिएणं पिच्छइ सिवमउयमारुयलयाहकंपमाणं अइप्पमाणं जणपिच्छणिज्जरूवं ८ ॥ ४० ॥

ध्वजा का वर्णन.

आठमें स्वप्न में त्रिशला राणी ने जो ध्वज देखा उस ध्वजको लटी उत्तम सोने की थी, और नील, राते, पीले धोले, मोरके सुकुमाल पीछों का शिखर जिसपर बना हुवा था, अधिक शोभायमान स्फटिक रत्न, शंख, अंक, कुंद पाणी के बिंदु, चांदीका कलश इत्यादि समान सफेद सिंह से शोभायमान और पवन से उड़ता कपड़ा में चित्र का सिंह उड़ता था, वो ऐसा दिखता था

कि मानों वो आकाश को भेदने को जाता है वो ऐसी ध्वजा शिव मृदु वायु में आकाश के अन्दर बहुत दूर तक उडती थी.

तश्रो पुणो जच्चकंचणुज्जलंतरूवं निम्मलजलपुण्णमुत्तमं दिप्पमाणसोहं कमलकलावपरिरायमाणं पडिपुण्णसव्वमंगलभेयसमागमं पवररयणपरायंतकमलट्ठिय नयणभूसणकरं पभासमाणं सव्वश्रो चेव दीवयंतं सोमलच्छीनिभेलणं सव्वपावपरिवज्जिश्रं सुभं भासुरं सिरिवरं सव्वोउयसुरभिकुसुम श्रासत्त मल्लदामं पिच्छइ सा रययपुण्णकलसं ६ ॥ ४१ ॥

कलश का वर्णन.

नवमें स्वप्न में त्रिशला राणी ने कलश देखा वो उत्तम जाति के सोनेका अथवा उत्तम चांदीका बना हुवा था देदीप्यमान रूपथा, निर्मल जल से पूरा भरा हुत्रा था, उत्तम कांति की शोभा वाला था, कमलों के समूह से विराजमान था, सर्व पूरे मंगलों के कारणों के एकत्र होनेका स्थान था, उत्तम जाति का प्रवर रत्न और अन्दर से सुगंधी कण उडाने वाले कमल में स्थापित किया हुवा था, नेत्रों का भूषण प्रकाशमान, सर्व दिशाओं में दीपता, सौम्य लक्ष्मी संयुक्त और सर्व पापों से रहित शुभ, भासुर, शोभा वाला, सर्व ऋतु के सुरभी कुसुमों से ऊपर से नीचेतक मालायें जिस में लगी थी ऐसा चांदीका पूर्ण कलश था.

तश्रो पुणो पुणरवि रविकिरणतरुणबोहियसहस्सपत्तसुरभितरपिंजरजलं जलचरपहकरपरिहत्थगमच्छपरिभुज्जमाणजलसंचयं महंतं जलंतमिव कमलकुवलयउप्पलतामरसपुंडरीयउरुसप्पमाणसिरिसमुदएणं रमणिज्जरूवसोहं पमुइयंतभमरगणमत्तमहुयरिगणुक्करोलि (ल्लि) ज्जमाणकमलं २५० कायंवगबलाहयचक्ककलहंससारस गव्विश्र सउणगणमिहुणसेविज्जमाणसलिलं पउमिणिपत्तोवलग्गजलबिंदुनिचयचित्तं पिच्छइ

मा हियय नयण कंतं पउमसरं नाम सरं सरुहाभिरामं १०
॥ ४२ ॥

पद्मसरोवर का वर्णन।

उसके पश्चात दशवें स्वप्न में त्रिसला राणीने पद्म सरोवर देखना जिसमें उगते रवि के किरणों से विकस्वर पद्म के पत्ते होगये हैं उससे सुगंधमय है और सूर्य की प्रभात की धूप से लाल पीला होगया है जल जिसमें ऐसा सरोवर और जल में चलने वाले जलचर प्राणी के समूह से पाणी का सर्वत्र उपयोग होता है जिसका पाणी कमल कुवलय, उत्पल, तामरस, पुंडरिक इत्यादि कई प्रकार के कमलों से जलता हुवा अग्नि के समान शोभायमान, रमणीय रूप वाला प्रत्यक्ष दीखता था और जिस सरोवर में आनन्दित भँवरों का समूह और मत्त भँवरियों का समूह गुंजार कर रहे थे [illegible] कमलों का समुदाय था और सरोवर में कादंबक, कलहंस, बगले, चकवाक सारस इत्यादि जलचर सुख से गर्विष्ठ थे और वे पक्षी अपनी २ मिथुन (नर मादा) साथ पाणी में क्रीडा करते थे और कमल के पत्तों पर उछलते जल के बिन्दु लग रहे थे वे ऐसे शोभायमान होते थे कि जैसे हरे रंग के पत्ते पर सच्चे मोती के दाणे लगे हों ऐसा पद्म सरोवर मनोहर, हृदय और नेत्र को आनन्द देने वाला त्रिशला राणी ने स्वप्न में देखा.

तओ पुणो चंदकिरणरासिसरिससिरिवच्छसोहं चउगमणपवड्ढमाणजलसंचयं चवलचंचलुच्चायप्पमाणकल्लोललोलंततोयं पडुपवणाहयचलियचवलपागडतरंगरंगंतभंगखोखुब्भमाणसोभंतनिम्मलुक्कडउम्मीसहसंबंधधावमाणोनियत्तभासुरतराभिरामं महामगरमच्छतिमितिमिंगिलनिरुद्धतिलितिलियाभिघायकप्पूरफेणपसरं महानईतुरियवेगसमागयभमगंगावत्तगुप्पमाणुच्चलंतपच्चोनियत्तभममाणलोलसलिलं पिच्छइ खीरोयसायरं सा रयणिकरसोमवयणा ११ ॥ ४३ ॥

क्षीर सागर का वर्णन ।

अग्यारमें स्वप्न में त्रिशला रानी ने क्षीर समुद्र देखा वह समुद्र कैसा है कि चंद्रमा की किरणों के समान शोभायमान हैं और चारों दिशाओं में से जिसमें जल समूह बढ रहा है और जिसमें चञ्चल से भी चञ्चल कल्लोलें बहुतसी उठरही हैं जिन कलोलों के कारण जल ज्यादा चञ्चल होरहा है और धीमी २ हवा के कारण कल्लोलें चलायमान होकर किनारे आकर टक्करें खाती है और उन का शब्द हो रहा है जिनसे समुद्र शोभायमान होरहा है उसमें एक कल्लोल के पीछे दूसरी कल्लोल दोड़ती है अर्थात् एक तरंग के पीछे दूसरी तरंग लग रही हैं. पहले एक छोटी तरंग उठती है तो उसके वाद वड़ी उठती है इस प्रकार की तरंगों की शोभा जिसमें है और जिसमें अनेक जलचर पशु जैसे मगरमच्छ, मच्छलियां, तिमि तिमिंगल, निरुद्ध तीलि तिलक इत्यादि आपस में जिस समय क्रीड़ा करते हैं उस समय उनकी पूंछों से उछले हुवे पाणी में जो फेण उत्पन्न होते हैं वह कल्लोलों के साथ किनारे पर आते हैं उनके समूह कपूर के ढेर के समान मालुम होते हैं और जिस समुद्र में गंगा इत्यादि नामी नदियों का पानी आता है और जिसमें दूसरी हजारों नदियों का जल आता है ऐसा क्षीरसागर त्रिशला राणी ने स्वप्न में देखा.

तओ पुणो तरुणसूरमंडलसमप्पहं दिप्पमाणसोभं उत्तमकंचणमहामणिसमूहपवरतेयअट्ठसहस्सदिप्पंतनहप्पईवं कणगपयरलंबमाणमुत्तासमुज्जलं जलंतदिव्वदामं ईहावि (मि) गउसभतुरगनरमगरविहगवालगकिन्नररुरुसरभचमरसंसत्तकुंजरवणलयपउमलयभत्तिचित्तं गंधव्वोपवज्जमाणसंपुण्णघोसं निच्चं सजलघणविउलजलहरगज्जियसद्दाणुणाइणा देवदुंदुहिमहारवेणं सयलमवि जीवलोयं पूरयंतं, कालागुरुपवरकुंदुरुक्कतुरुक्कडज्झंतधूववासंगउत्तममघमघंतगंधुद्धुयाभिरामं निच्चालोयं सेयं सेयप्पभं सुरवराभिरामं पिच्छइ सा सओवभोगं वरविमाणपुंडरीयं १२ ॥ ४४ ॥

देव विमान का वर्णन ।

बारहवें स्वप्न में त्रिशला देवी ने देव विमान देखा वो देव विमान चढ़ते हुवे सूर्य के समान प्रकाशमान दिव्य शोभा वाला उत्तम सोने के मणि माणिक से जड़ित १००८ खंभ जिसमें है और जिससे वो आकाश में दीपक के समान शोभायमान होरहा है सोने की जिसकी छतें हैं और जिन छतों में मोतियों के झुमके वा मालाओं के लगने से शोभा अधिक मालुम होती है और उसकी भींतों में रूहा मृग सिंह बैल घोड़ा मनुष्य हाथी इत्यादि अनेक चित्र हैं वनलता पद्मलता इत्यादि चित्रित हैं और जिस विमान में नाटक होरहे थे वाजित्र का राग मनोहर होरहा था जिसमें मेघ गर्जन के समान देव दुंदुभी का शब्द होरहा था जिसकी ध्वनी सर्वत्र आकाश में फैल रही थी और जहां कालागुरु उत्तम कुंदरुक इत्यादि अनेक उत्तम जाति के धूप होरहे थे ऐसा सुगंध से मघ मघायमान, सुंदर मनोहर देखने योग्य देवताओं से भरा हुवा श्रेष्ठ पुंडरिक विमान त्रिशला राणी ने देखा.

तओ पुणो पुलगवेरिंदनीलसासगकक्केयणलोहियक्खमरगयमसारगल्लपवालफलिहसोगंधियहंसगब्भअंजणचंदप्पहवररयणेहिं महियलपइट्ठियं, गगणमंडलंतं पभासयंतं, तुंगं मेरुगिरिसंनिकासं पिच्छइ सा रयणनिकररासिं १३ ॥ ४५ ॥

रत्नों का ढेर का वर्णन.

उसके बाद तेरहवें स्वप्न में त्रिशला राणी ने वैदुर्य रत्न वज्र, इन्द्र, नील शासक, कर्केतन, लोहिताक्ष मरकत मसारगल्ल प्रवाल स्फटिक सौगंधिक हंसगर्भ अंजण चन्द्रप्रभ इत्यादि अनेक जाति के श्रेष्ठ रत्नों का ढेर जो पृथ्वी से आकाश तक देदीप्यमान मेरु पर्वत के समान ऊंचा २ लगा हुवा था देखा.

सिहिं च-सा विउलुज्जलपिंगलमहुघयपरिसिच्चमाणनिद्धूमधगधगाइयजलंतजालुज्जलाभिरामं तरतमजोगजुत्तेहिं जालपयरेहिं अण्णुण्णमिव अणुप्पइण्णं पिच्छइ जालुज्जल-

एगअंबरं व कत्थइ पयंतं अइवेगचंचलं सिहिं ॥ १४ ॥ ४६ ॥

निर्धूम अग्नी.

चवदवें स्वप्न में त्रिशला देवी ने निर्धूम अग्नी देखी जो जलती थी और उसमें से लाल पीले रंग की ज्वालाएं निकलती थीं मधु और घी से सींची हुई निर्धूम अग्नी धगधगायमान जलती ज्वालाओं से मनोहर अत्यन्त ऊंची २ ज्वालाएं जाती हैं जिसकी ऐसी निर्धूम अग्नी देखी.

इमे एयारिसे सुभे सोमे पियदंसणेसुरूवे सुविणे दट्ठूण सयणमज्झे पडिबुद्धा अरविंदलोयणा हरिसपुलइअंगी ॥ एए चउद्स सुमिणे, सव्वा पासेइ तित्थयरमाया । जं रयणिं वक्कमई, कुच्छिसि महायसो अरहा ॥ ४७ ॥

चौदह स्वप्न.

पूर्व में कहे हुवे (विस्तार पूर्वक कहे हुवे) हाथी बैल सिंह लक्ष्मी देवी का अभिषेक पुष्पों की दो मालाएं चन्द्र, सूर्य, ध्वजा, कलश, पद्मसरोवर, क्षीरसागर, देव विमान रत्नों का ढेर निर्धूम अग्नी ऐसे शुभ सौम्य, प्रिय दर्शन अच्छे रूप वाले स्वप्न देखकर शय्या में जागी और विकस्वर कमल नेत्रवाली हर्ष से खिलती रोमराजी वाली त्रिशला राणी ने उत्तम चवदह स्वप्न देखे ऐसे ही सर्व तीर्थंकरों की माताएं देखती हैं जिस समय कि तीर्थंकर भगवान उदर में आते हैं क्योंकि तीर्थंकर भगवान महापुण्यात्मा यशस्वी पूजनीय होते हैं.

तएणं सा तिसला खत्तियाणी इमे एयारूवे उराले चउद्दस महासुविणे पासित्ता णं पडिबुद्धा समाणी हट्ठतुट्ठ-जाव हियया धाराहयकयंबपुप्फगं पिव समूससिअरोमकूवा सुविणुग्गहं करेइ, करित्ता सयणिज्जाओ अब्भुट्ठेइ, अब्भुट्ठित्ता पायपीढाओ पच्चोरुहइ, पच्चोरुहित्ता अतुरिअमचवलमसंभंताए

अविलंबियाए रायहंससरिसीए गईए जेणेव सयणिज्जे जेणेव सिद्धत्थे खत्तिए तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता सिद्धत्थं खत्तिअं ताहिं इट्ठाहिं कंताहिं पियाहिं मणुन्नाहिं मणोरमाहिं उरालाहिं कल्लाणाहिं सिवाहिं धन्नाहिं मंगल्लाहिं सस्सिरीयाहिं हिययगमणिज्जाहिं हिययपल्हायणिज्जाहिं मिउमहुरमंजुलाहिं गिराहिं संलवमाणी २ पडिबोहेइ ॥ ४८ ॥

ऐसे चौदह स्वप्न देखकर त्रिशला राणी जागृत होकर संतुष्ट होकर हृदय से कदंब वृक्ष के फूल मेघ के पाणी से जैसे विकस्वर होते हैं वैसे ही विकस्वर होकर स्वप्नों को अच्छी तरह विचार कर शैय्या से उठकर निःसरणी पर पैर रख कर अत्वरित, अचपल, असंभ्रात, अविलंबित, स्थिरता से राज हंस सरखी गति से चलकर जहां पर सिद्धार्थ राजा सोये हुए हैं वहां आई. और सिद्धार्थ राजा को, इष्ट, कांत प्रिय, मनोज्ञ, मनोरम, उदार, कल्याणकारी, शिव-धन मंगल शोभा देनेवाले हृदय प्रसन्न करने वाले वचनों द्वारा जागृत करती है.

तएणं सा तिसला खत्तिआणी सिद्धत्थेणं रएणा अब्भणुण्णाया समाणी नाणामणिकणगरयणभत्तिचित्तंसि भद्दासणंसि निसीयइ निसीइत्ता आसत्था सुहासणवरगया सिद्धत्थं खत्तिअं ताहिं इट्ठाहिं जाव संलवमाणी २ एवं वयासी ॥ ४९ ॥

एवं खलु अहं सामी ? अज्ज तंसि तारिसगंसि सयणिज्जंसि वएणओ जाव पडिबुद्धा, तंजहा—गयउसभ० गाहा । तं एएसिं सामी ! उरालाणं चउदसण्हं महासुमिणाणं के मन्ने कल्लाणे फलवित्तिविसेसे भविस्सइ ? ॥ ५० ॥

सिध्दार्थ राजा का जागृत होना ।

सिद्धार्थ राजा ने जागृत होकर त्रिशला देवी को बैठने को कहा उससे सन्मान की हुई विचित्र सुवर्ण का बना हुवा, रत्नों से जड़ा हुवा भद्रासन

पर बैठ कर, शांति विश्रांति लेकर सुखासन पर बैठी हुई राणी त्रिशला देवी इस प्रकार बोलने लगी.

हे नाथ ! आज रात्री में मैंने शय्या में अच्छी तरह सोते हुवे चौदह स्वप्न देखें हैं (जिसका वर्णन पूर्व में कहा है) कृपया कहें कि उनका क्या अच्छा फल मेरे को होगा.

तएणं से सिद्धत्थे राया तिसलाए खत्तिआणीए अतिएं एयमट्ठं सुच्चा निसम्म हट्ठतुट्ठचित्ते आणंदिए पीइमणे परमसोमणस्सिए हरिसवसविसप्पमाणहियए धाराहयनीवसुरभिकुसुमचंचुमालइयरोमकूवे ते सुमिणे ओगिण्हेइ, ते सुमिणे ओगिण्हेत्ता ईहं अणुपविसइ, ईहं अणुपविसित्ता अप्पणो साहाविएणं मइपुव्वएणं वुद्धिविन्नाणेणं तेसिं सुमिणाणं अत्थुग्गहं करेइ, करित्ता तिसलं खत्तिआणि ताहिं इट्ठाहिं जाव मंगल्लाहिं मियमहुरसस्सिरीयाहिं वग्गूहिं संलवमाणे २ एवं वयासी ॥ ५१ ॥

सिद्धार्थ राजाने त्रिशला राणी के मुख से यह रहस्य सुनकर, संतुष्ट होकर कदंब वृक्ष के पुष्प जिस प्रकार मेघ के जल से विकस्वर होते हैं उसी भांति विकस्वर होकर अच्छी तरह स्वप्नों को समझ कर अपनी स्वभाविक, मति, बुद्धि विज्ञान से स्वप्नों का अर्थ विशेष विचार करके त्रिशला राणी को अति उत्तम, मधुर वचनों से कहने लगा.

उराला णं तुमे देवाणुप्पिए ! सुमिणा दिट्ठा, कल्लाणा णं तुमे देवाणुप्पिए ! सुमिणा दिट्ठा, एवं सिवा, धन्ना, मंगल्ला, सस्सिरीया, आरुग्ग-तुट्ठि-दीहाउ-कल्लाण-(ग्रं,३००) मंगल्ल-कारगा णं तुमे देवाणुप्पिए ! सुमिणा दिट्ठा, तंजहा, अत्थलाभो देवाणुप्पिए ! भोगलाभो०, पुत्तलाभो० सुक्खलाभो० रज्जलाभो०-एवं खलु तुमे देवाणुप्पिए ! नवण्हं मासा-

णं बहुपडिपुरणाणं अद्धट्ठमाणं राइंदियाणं विइक्कंताणं अ-म्ह कुलकेउं, अम्हं कुलदीवं, कुलपव्वयं, कुलवडिंसयं, कुल-तिलयं, कुलकित्तिकरं, कुलवित्तिकरं, कुलदिणयरं, कुलाधारं, कुलनंदिकरं, कुलजसकरं, कुलपायवं, कुलविवद्धणकरं, सुकु-मालपाणिपायं, अहीणसंपुरणपंचिंदियसरीरं लक्खणवंजण-गुणोववेयं, माणुम्माणप्पमाणपडिपुरणसुजायसव्वंगसुंदरंगं, ससिसोमाकारं, कंतं, पियदंसणं, दारयं पयाहिसि ॥ ५२ ॥

हे देवानुप्रिय ! तुमने उदार स्वप्न देखे हैं, कल्याण करने वाले, शिव, धन, आरोग्यता, दीर्घ आयु को देने वाले उत्तम स्वप्न देखे हैं इनमे आप को अर्थ लाभ, भोग लाभ और पुत्र लाभ, नव मास और साढे सात दिन बाद होगा वो पुत्र हमारा कुल केतु कुल दीपक कुल पर्वत, कुल अवतन्स, कुलतिलक, कुल कीर्तिकर कुल दिनकर, कुल आधार, कुलनंदिकर, कुलजसकर, कुलपादप (वृक्ष) कुल वर्द्धनकर, सुकुमाल हाथ पग वाला, योग्य संपूर्ण पांच इन्द्रिय शरीर वाला, लक्षण व्यञ्जन गुणयुक्त, मान उन्मान प्रमाण और प्रतिपूर्ण, सुजात, सर्वांग सुन्दर, चन्द्र समान सौम्य, कान्त, प्रियदर्शन, स्वरूप वाला, होगा अर्थात् तुझे उत्तम गुण, लक्षण वाला सुन्दर पुत्र होगा.

सेविय णं दारए उम्मुक्कबालभावे विन्नायपरिणयमित्ते जुव्वणगमणुपत्ते सूरे वीरे विक्कंते विच्छिन्नविउलबलवाहणे र-ज्जई राया भविस्सइ ॥ ५३ ॥

और वह बालक बाल्यावस्था समाप्त कर जिस समय युवान् होगा उस समय विज्ञान का परिणमन (प्राप्ति) होने से अर्थात् विज्ञान विद्या में पारंगामी होने से शूर, वीर, विक्रांत (तेजस्वी) विस्तीर्ण, विपुल बलवाहन धारक और राज्याधीश होगा (क्षत्रिय पुत्र के लक्षण सिद्धार्थ राजा ने बताये)

तं उराला णं तुमे देवाणुप्पिया ! जाव दुच्चंपि तच्चंपि अणुवूहइ ॥ तएणं सा तिसला खत्तियाणी सिद्धत्थस्स रगणो

अंतिए एयमट्ठं सुच्चा निसम्म हट्ठतुट्ठा जाव–हियया करयल-परिग्गहिअंदसनहं सिरसावत्तं मत्थए अंजलिं कट्टु एवं वयासी ॥ ५४ ॥

इसलिये हे राणी ! तुमने अति उत्तम स्वप्न देखे हैं ऐसी वारंवार प्रशंसा की, त्रिशला राणी सिद्धार्थ राजा के इस प्रकार के वचन सुनकर हर्ष, संतोष से प्रसन्न चित्त वाली होकर हाथ मस्तक को लगाकर (हाथ जोड कर) बोली.

एवमेयं सामी ! तहमेयं सामी ! अवितहमेयं सामी ! असंदिद्धमेयं सामी ! इच्छिअमेअं सामी ! पडिच्छिअमेयं सामी ! इच्छिअपडिच्छिअमेयं सामी ! सच्चेणं एसमट्ठे–से जहेयं तुब्भे वयह त्तिकट्टु ते सुमिणे सम्मं पडिच्छइ, पडिच्छित्ता सिद्धत्थेणं रराणा अब्भणुगणाया समाणी नाणामणिरयणभत्तिचित्ताओ भद्दासणाओ अब्भुट्ठेइ, अब्भुट्ठेत्ता अतुरियमचवलमसंभताए अविलंविआए रायहंससरिसीए गईए, जेणेव सए सयणिज्जे, तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता एवं वयासी ॥ ५५ ॥

हे स्वामी ! ऐसा ही है आपके कहे हुवे फल सत्य हैं, उसमें लेश मात्र भी झूठ नहीं है वे निभ्रान्त हैं मेरी इच्छानुसार हैं मैं वही चाहती थी और ऐसा ही हुवा है इसलिये हे स्वामी आपका कथन सर्वथा सत्य है ऐसे कहकर स्वप्नों को अच्छी तरह से विचार कर सिद्धार्थ राजा की आज्ञा लेकर सन्मानित हुई राणी मणि रत्न और सुवर्ण के बने हुवे भद्रासन से उठकर मंदगति मे स्थिरता से, राज हंसी की चालके समान चलकर अपने शयनागार में जाकर ऐसे विचार करने लगी.

मा मे ते उत्तमा पहाणा मंगल्ला सुमिणा दिट्ठा अन्नेहिं पावसुमिणेहिं पडिहम्मिस्संति त्तिकट्टु देवयगुरुजणसंवद्धाहिं

पसत्थाहिं मंगल्लाहिं धम्मियाहिं लट्ठाहिं कहाहिं सुमिणजा-
गरिअं जागरमाणी पडिजागरमाणी विहरइ ॥ ५६ ॥

मैंने जो उत्तम प्रधान, मांगलिक स्वप्न देखे हैं अब यदि सोऊं और फिर कोई पाप स्वप्न देखने में आवे तो (नियमानुसार) उन अच्छे स्वप्नों का उत्तम फल नाश होजावे इसलिये मुझे अब नींद न लेना चाहिये. वरञ्च देव गुरुजन इत्यादि पुण्यात्मा पुरुषों की उत्तम, कल्याणकारी, धार्मिक, श्रेष्ठ कथाओं सुनकर शेष रात्री व्यतीत करना चाहिये ऐसा विचार कर रात्री जागृत अव-स्था में गुजारी.

तएणं सिद्धत्थे खत्तिए पच्चूसकालसमयंसि कोडुंबिअपु-
रिसे सद्दावेइ, सद्दाविता एवं वयासी ॥ ५७ ॥

सिद्धार्थ राजाने कुछ रात्री बाकी रही तब अर्थात् प्रभातकाल में अपने कुनबे के सेवकों को बुलाकर यह आज्ञा दी.

खिप्पामेव भो देवाणुप्पिआ! अज्ज सविसेसं बाहिरिअं
उवट्ठाणसालं गंधोदयसित्तं सुइअसंमज्जिओवलित्तं सुगंधवर-
पंचवएणपुप्फोवयारकलिअं कालागुरुपवरकुंदुरुक्कतुरुक्कडज्झं-
तधूवमघमघंतगंधुद्धुयाभिरामं सुगंधवरगंधियं गंधिवट्टिभूअं
करेह कारवेह, करित्ता कारवित्ता य सीहासणं रयावेह,
रयावित्ता ममेयमाणत्तियं खिप्पामेव पच्चप्पिणह ॥ ५८ ॥

हे देवानुप्रिय आप लोग शीघ्रता से बाहर के सभा मंडप में सर्वत्र गंधो-दक छिड़क कर स्वच्छ कराकर पवित्र करके नीपण चूपण कराकर सुगंधी श्रेष्ठ पांच वर्ण के फूलों से शोभायमान मंडप बना दो कालागुरु कुंदरुक तुरुस्क के धूप से मघमघायमान करो, अर्थात् सुगंधमय, मनोहर, सुगंध व्याप्त मंडप को सर्वत्र करो वा दूसरे अनुचरों द्वारा कराओ इस प्रकार तय्यार होने के पश्चात् सिंहासन स्थापन करके मेरी आज्ञानुसार सर्व होजाने बाद यहां सूचना दो.

तएणं ते कोडंबिअपुरिसा सिद्धत्थेणं रएणा एवं वुत्ता समाणा हट्ठतुट्ठ जाव हियया करयल जाव अंजलिं कट्टु एवं सामित्ति आणाए विणएणं वयणं पडिसुणंति, पडिसुणित्ता सिद्धत्थस्स खत्तिअस्स अंतिआओ पडिनिक्खमंति, पडिनिक्खमित्ता जेणेव बाहिरिआ उवट्ठाणसाला तेणेव उवागच्छंति, तेणेव उवागच्छित्ता खिप्पामेव सविसेसं बाहिरियं उवट्ठाणसालं गंधोदगसित्तं जाव–सीहासणं रयाविंति, रयावित्ता जेणेव सिद्धत्थे खत्तिए तेणेव उवागच्छंति, उवागच्छित्ता करयलपरिग्गहियं दसनहं सिरसावत्तं मत्थए अंजलिं कट्टु सिद्धत्थस्स खत्तिअस्स तमाणत्तिअं पच्चप्पिणंति ॥ ५६ ॥

इस प्रकार की सिद्धार्थ राजा की आज्ञा सुनकर और उससे सन्मान पाकर हर्षित प्रसन्न हृदय वाले होकर हाथ जोड़ कहने लगे कि हे नाथ ! आपकी आज्ञानुसारही होगा राजाज्ञा को नम्रता से बरोबर सुनकर राजा के कहने का अभिप्राय समझकर कार्य करने को राजा के पास से रवाना हुवे और बाहिर के सभा मंडप में आकर शीघ्रता से सभा मंडप में सर्वत्र गंधोदक का छिटकाव कर पवित्र बनाकर राजा की आज्ञानुसार सर्वत्र सजाकर और सिंहासन स्थापित करके सिद्धार्थ राजा के पास आकर के विनय पूर्वक मस्तक में अंजली लगाकर अर्थात् हाथ जोड़कर जैसा किया था वो सर्व राजा को कहकर संतुष्ट किया.

तएणं सिद्धत्थे खत्तिए कल्लं पाउप्पभायाए रयणीए फुल्लुप्पलकमलकोमलुम्मीलियंमि अहापंडुरे पभाए, रत्तासोगप्पगासकिंसुअसुअमुहगुंजद्धरागबंधुजीवगपारावयचलणनयणपरहुअसुरत्तलोअजासुअणकुसुमरासिहिंगुलनिअरातिरेअरेहंतसरिसे कमलायरसंडबोहए उट्ठिअंमि सूरे सहस्सरस्सिंमि दिणयरे तेअसा जलंते, तस्स य करपहरापरद्धंमि अंधयारे

वालायवकुंकुमेणं खचिअ व्व जीवलोए, सयणिज्जाओ अ-
ब्भुट्ठेइ ॥ ६० ॥

सिद्धार्थ राजा रात्री वीत जाने पर सूर्योदय के समय प्रकाश होने पर सूर्य विकाशी कमल खिलने के लिये जो प्रभात का समय होता है उस समय पर रक्त अशोक के प्रकाश के समान केसूके फूल, तोते का मुख, गुंजे का आधा भाग बंधुजीवके (एकजात का पुष्प) कबूतर के पैर और नेत्र, कोयल के लोचन (क्रोध से लाल होते हैं) जासूद के फूलों का ढेर, हिंगल इत्यादि लाल वस्तुओं से अधिक लाल प्रकाशवाला कमलों को जागृत करने वाला एकहजार किरणों वाला तेज से जलता हुवा जिस समय उदय होने वाला था अंधकार का नाश होगया था प्रभात समय में सर्व लाल पीला प्रकाश होरहा था और जिस समय लोग सब जागृत होगये थे ऐसे समय पर सिद्धार्थ राजा अपनी शय्या से उठा.

अब्भुट्ठित्ता पायपीढाओ पच्चोरुहइ पच्चोरुहित्ता जेणेव अट्टणसाला तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता अट्टणसालं अ-णुपविसइ, अणुपविसित्ता अणेगवायामजोगवग्गणवामद्दणम-ल्लजुद्धकरणेहिं संते परिस्संते सयपागसहस्सपागेहिं सुगंधवर-तिल्लमाइएहिं पीणणिज्जेहिं मयणिज्जेहिं विंहणिज्जेहिं दप्प-णिज्जेहिं सव्विंदियगायपल्हायणिज्जेहिं अब्भंगिए समाणे तिल्लचम्मंसि निउणेहिं पडिपुण्णपाणिपायसुकुमालकोमल-तलेहिं पुरिसेहिं अब्भंगणपरिमद्दणुव्वलणकरणगुणनिम्माएहिं छेएहिं दक्खेहिं पट्ठेहिं कुसलेहिं मेहावीहिं जिअपरिस्समेहिं अट्ठिसुहाए मंससुहाए तयासुहाए रोमसुहाए चउव्विहाए सु-हपरिकम्मणाए संवाहणाए संवाहिए समाणे अवगयपरिस्समे अट्टणसालाओ पडिनिक्खमइ ॥ ६१ ॥

उठ करके पयडी पर पैर रखकर नीचे उतर कर अपनी कसरत शाला में गया और अनेक प्रकार की कसरत, व्यायाम, अंगमोडन मल्लयुद्ध करने पर जिस समय शरीर से पसीना निकलने लगा उस समय, शत पाक सहस्र पाक (हजार वनस्पति, औषधी का बना) नामी तेल से निपुण मर्दन कारों से मालिश कराई वो तेल रस लोहू धातु वीर्य इत्यादि को पुष्ट करने वाला था, उदर की गरमी पाचन शक्ती वढाने वाला था, काम शक्ति वढाने वाला था मांस वढाने वाला पराक्रम देने वाला था और अंग के सर्व भागों में आनन्द उत्पन्न करने वाला था और मर्दनकार अर्थात् मालिश करने वाले वड़े चतुर प्रवीण कुशल पुरुष थे जो समय पर कष्ट परिसह की परवाह नहीं करते थे. ऐसे पुरुषों से हड्डीके सुख के लिये मांस चमड़ी रोम राजी के सुख के लिये शरीर रक्षा के निमित्त शांति होने के लिये, मर्दन कराया थोड़े समय शांति से ठहर कर फिर कसरतशाला से निकल कर स्नानागार में गया।

पडिनिक्खमित्ता जेणेव मज्जणघरे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता मज्जणघरं अणुपविसइ अणुपविसित्ता समुत्तजालाकुलाभिरामे विचित्तमणिरयणकुट्टिमतले रमणिज्जे राहाणमंडवंसि नाणामणिरयणभत्तिचित्तंसि राहाणपीढंसि सुहनिसरणे पुप्फोदएहि अ गंधोदयएहि अ उराहोदएहि अ सुहोदएहि अ सुद्धोदएहि अ, कल्लाणकरणपवरमज्जणविहीए मज्जिए, तत्थ कोउअसएहिं वहुविहेहिं कल्लाणगपरमज्जाणावसाणे पम्हलसुकुमालगंधकासाइअलूहिअंगे अहेयसुमहग्घदूसरयणसुसंवुडे सरससुरभिगोसीसचंदणाणुलित्तगत्ते सुइमालावराणगविलेवणे आविद्धमणिसुवराणे कप्पियहारद्धहारतिसरयपालंवपलंवमाणकडिसुत्तसुकयसोभे पिणद्धगेविज्जे अंगुलिज्जगललियकयाभरणे वरकडगतुडिअथंभिअभुए अहिअरूवसस्सिरीए कुंडलउज्जोइआणणे मउडदित्तसिरए हारोत्थयसुकयरइअवच्छे मुद्दिआपिंगलंगुलीए पालंवपलंवमाणसुकयपडउत्तरिज्जे ना-

णामणिकणगरयणविमलमहरिहनिउणोवचिअमिसिमिसिंतविरइअसुसिलिट्ठविसिट्ठलट्ठआविद्धवीरवलए, किंबहुणा ? कप्परुक्खए चेव अलंकिअविभूसिए नरिंदे, सकोरिंटमल्लदामेणं छत्तेणं धरिज्जमाणेणं सेअवरचामराहिं उद्धुव्वमाणीहिं मंगलजयसद्दकयालोए अणेगगणनायगदंडनायगराईसरतलवरमाडंबिअकोडंबिअमंतिमहामंतिगणगदोवारियअमच्चचेडपीढमद्दनगरनिगमसिट्ठिसेणावइसत्थवाहदूअसंधिवाल सद्धिं संपरिवुडे धवलमहामेहनिग्गए इव गहगणदिप्पंतरिक्खतारागणाण मज्झे ससिव्व पिअदंसणे नरवई नरिंदे नरवसहे नरसीहे अब्भहिअरायतेअलच्छीए दिप्पमाणे मज्जणघराओ पडिनिक्खमइ ॥ ६२ ॥

वह स्नानागार मोतियों की मालाओं से और झरुखों से शोभायमान था जिसकी फर्श अनेक जाति के मणि रत्नों से सुसज्जित थी और जहां अनेक उत्तम रत्नों से जडी स्नान के करने की चौकी रक्खी थी उस पर बैठकर फूलों के द्वारा सुगन्धमय किये हुवे जलसे, गंधोदक से तीर्थ जलसे निर्मल, ठंडा और कल्याणकारी जल से विधी अनुसार स्नान करने लगा और कौतुक कृत्य करके स्नान पूरा होने पश्चात् उत्तम वस्त्र से जो लाल रंग का अगोछा होता है उस द्वारा शरीर को पूंछ करके उत्तम जाति के गोशीर्ष चंदन से शरीर पर लेपकर सुगन्धी तेल इत्यादि लगा कर बहुमूल्य उत्तम जाति के वस्त्र पहनकर, फूल माला धारण कर ललाट पर उत्तम केसर का तिलक कर अनेक जाति के उत्तमोत्तम बहुमूल्य आभूषण पहरे जिनमें मणिरत्न सुवर्ण में जड़े हुवे थे ऐसे आभूषणों में हार, अर्द्धहार तीन सरके हार मोतियो के झमके वाली कटी सूत्र अर्थात् कणकती से कमर शोभायमान थी, कंठ में भी कंठ इत्यादि अनेक आभूषण थे. अंगुलियों में अंगूठियें पहरी थी भुजा पर भुज बन्ध और हाथों में कड़े पहने हुवे थे जिससे अधिक रूप वाला और शोभायमान मालुम होता था मुख कुंडलों से शोभायमान हो रहा था मस्तक पर मुकुट था और हार लटकने से छाती का

भाग सुन्दर मालुम होता था. मुद्रिका से अंगुली पीली होगई थी और सर्व के ऊपर दुपट्टा दोनों तरफ लटक रहा था. ऐसे अनेक आभूषण होने पर भी सुवर्ण का मणि रत्नों से जटित निपुण कारीगर का बनाया हुवा प्रधान वीरवलय (जो दूसरा यदि कोई मुझे हरावे तो उसे लेवे ऐसा बनाने वाला भूपण) हाथ में धारण करा हुवा था उसकी अधिक प्रशंसा न कर इतना ही लिखना काफी होगा कि जैसे कल्पवृक्ष शोभायमान होता है उसी प्रकार राजा सिद्धार्थ भी वस्त्राभूषण से सुसज्जित, कोरंट वृक्षों के पुष्पों की माला से शोभायमान माथे पर छत्र धराकर जिसके दोनों बाजू चामर डुल रहे हैं जिसके दर्शन से मंगल जय की ध्वनीयें होरही हैं और अपने अनेक प्रधान मंत्री पोलिस नायक राजेश्वर तलवर (राजाने जिस को प्रसन्न होकर पट्ट बंध दिया है) जमीदार, चोधरी, मंत्री, महामंत्री, ज्योतिषी, सिपाई अमात्य दास, सोवती, नगर निवासी प्रतिष्ठित पुरुष) व्योपारी, नगर सेठ, सेनापति, सार्थवाह, दूत संधिपाल, (Ambassador) के साथ जैसे मेघ के खुल जाने के पश्चात् प्रकाश होने पर आकाश में तारों के मंडल के बीच चन्द्रमा शोभायमान होता है वैसे ही सर्व में शोभायमान होता हुवा राजा नर वृषभ, नरसिंह, राज तेज लक्ष्मी में सुन्दर शोभायमान स्नानागार से निकट सभा मंडप में आया और पूर्व दिशा सन्मुख मुख कर सिंहासन पर विराजमान हुवा.

मज्जणघराओ पडिनिक्खमित्ता जेणेव बाहिरिआ उवट्ठाणसाला तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता सीहासणंसि पुरत्थाभिमुहे निसीअइ, निसीइत्ता अप्पणो उत्तरपुरच्छिमे दिसीभाए अट्ठ भद्दासणाइं सेअवत्थपच्चुत्थयाइं सिद्धत्थयकयमंगलोवयाराइं रयावेइ, रयावित्ता अप्पणो अदूरसामंते नाणामणिरयणमंडिअं अहिअपिच्छणिज्जं महग्घवरपट्टणुग्गयं सण्हपट्टभत्तिसयचित्तताणं ईहामिअउसभतुरगनरमगरविहगवालगकिन्नररुरुसरभचमरकुंजरवणलयपउमलयभत्तिचित्तं अब्भितरिअं जवणिअं अंछावेइ, अंछावेत्ता नाणामणिरयणभत्तिचित्तं

अत्थरयमिउमसूरगुत्थयं सेअवत्थपच्चुत्थअं सुमउअं अंगसुह-फरिसं विसिट्ठं तिसलाए खत्तिआणीए भद्दासणं रयावेइ ॥६३॥

रयाविता कोडुंबिअपुरिसे सद्दावेइ, सद्दावेत्ता एवं व-यासी ॥ ६४ ॥

राजा ने सिंहासन पर बैठ ईशान कोण में आठ भद्रासन सफेद वस्त्रों से शोभित बनवाये और उसे सफेद सरसों और दोब से मंगल उपचार कर उस से थोड़ीसी दूर अनेक जाति के मणि रत्नों से विभूषित बहुत देखने योग्य उत्तम जाति का स्निग्ध, बड़े शहर में बना हुवा कोमल वस्त्र बिछाया उस आ-सण में अनेक जाति के चित्र थे. जैसे इहा, मृग, बैल, घोड़ा, आदमी, मगर, पक्षी, सांप, किन्नर, रुरु, सरभ, चवरी गाय, हाथी वनलता, पद्मलता आदि उत्तम चित्रों से वह आसन शोभायमान था जैसा राणी का शरीर कोमल था और संपदायुक्त था वैसा ही उसके हेतु पट्ट वस्त्र से ढका हुवा भद्रासन एक सुन्दर पड़दे के भीतर रखवाया अर्थात् वह आसन राणी को सुख से स्पर्श करने योग्य बनाया गया इतना करा के सिद्धार्थ राजाने अपने कुटुम्ब के पुरुषों को बुलाकर इस प्रकार कहा.

खिप्पामेव भो देवाणुप्पिआ! अट्ठंगमहानिमित्तसुत्तत्थ-धारए विविहसत्थकुसले सुविणलक्खणपाढए सद्दावेह॥ तएणं ते कोडुंबिअपुरिसा सिद्धत्थेणं रण्णा एवं वुत्ता समाणा हट्ठतुट्ठ जाव-हियया, करयल जाव-पडिसुणंति ॥ ६५ ॥

भो देवानुप्रिय! आप लोग आठ प्रकार का महा निमित्त (ज्योतिष) सूत्रार्थ जानने वाले दूसरे शास्त्रों के पंडित, स्वप्न लक्षण बताने में निपुण पंडितों को बुलाओ. ऐसी राजाज्ञा सुनकर विनय से हाथ जोड़ कर आज्ञा सिर पर चढा कर वे लोग (पंडितों की खोज में) निकले.

पडिसुणित्ता सिद्धत्थस्स खत्तियस्स अंतिआओ पडिनि-क्खमंति कुंडपुर नगरं मज्झंमज्झेणं जेणेव सुविणलक्खण-

पाढगाणं गेहाइं, तेणेव उवागच्छंति, उवागच्छित्ता सुविणल-क्खणपाढए सद्दाविंति ॥ ६६ ॥

सिद्धार्थ राजा के पास से रवाने होकर नोकर लोग क्षत्रिय कुंड शहर के मध्यभाग में होकर जहां पर स्वप्न पाठक ज्योतिषियों के घर थे वहां आये.

ज्योतिषियों को बुलाकर राजाज्ञा सुनाई जिसे सुनकर वे लोग राज्य मान से खुश होकर स्नान कर देव पूजन कर तिलक कौतुक मंगल शकुन देखकर, स्वच्छ वस्त्र पहन, विविध आभूषण धारण कर आभूषण जिनमें वजन कम हो पर जिन का मूल्य ज्यादा हो सफेद सरसव और द्रोव से मस्तक भूषित कर अपने २ घरों से निकल कर शहर के मध्य भाग में होकर राज्य महल के समीप आये और राज्य ड्योढी पर सर्व ने मिलकर अपना एक २ नायक वनाया.

दृष्टांत.

एक समय ५०० सुभट मिलकर नोकरी के वास्ते एक शहर के राजा के पास गये वे सर्व अर्थात् ५०० ही स्वतन्त्र थे उन में से कोई भी एक को नायक नहीं स्वीकार करना चाहता था राजाने उनकी परीक्षा करने के हेतु सर्व के लिये सिर्फ एक शय्या रात्री में सोने को भेजी उनमें तो सर्व अपने को बराबर समझने वाले थे. एक शय्या पर सर्व किस प्रकार से सोवें आखिर सब में यह निश्चय हुवा कि सर्व अपना एक २ पैर इस शय्या पर रख कर सोवें और इसी प्रकार सर्व सोगये. राजाने यह वार्ता सुनकर और मन में यह विचार किया कि यदि यह लोग लड़ाई में जावें तो अफसर के आधीन कदापि नहीं रहसक्ते उन लोगों को अर्थात् ५०० ही सुभट्टों को नोकरी देने से अनिच्छा प्रकट कर वहां से निकाल दिये.

तएणं ते सुविणलक्खणपाढया सिद्धत्थस्स खत्तिअस्स कोडुंविअपुरिसेहिं सद्दाविआ समाणा हट्ठतुट्ठ जावहियया राहाया कयवलिकम्मा कयकोउअमंगलपायच्छित्ता सुद्धप्पा-वेसाइं मंगल्लाइं वत्थाइं पवराइं परिहिआ अप्पमहग्घभरणा-लंकियसरीरा सिद्धत्थयहरिआलिआकयमंगलमुद्धाणा सएहिं २

गेहेहिंतो निग्गच्छंति, निग्गच्छित्ता खत्तियकुंडग्गामं नगरं मज्झंमज्झेणं जेणेव सिद्धत्थस्स रएणो भवणवरवडिंसगपडिदुवारे, तेणेव उवागच्छंति, उवागच्छित्ता भवणवरवडिंसगपडिदुवारे एगओ मिलंति, मिलित्ता जेणेव बाहिरिआ उवट्ठाणसाला, जेणेव सिद्धत्थे खत्तिए, तेणेव उवागच्छंत्ति, उवागच्छित्ता करयलपरिग्गहिअं जावकट्टु, सिद्धत्थं खत्तिअं जएणं विजएणं वद्धाविंति ॥ ६७ ॥

इस ऊपर लिखे दृष्टांत को याद कर सर्व ज्योतिषियों ने अपने में से एक एक को नायक बना लिया और उसी के पीछे २ सर्व राजसभा में आये हाथ जोड़कर राजा को आशीर्वाद दिया आपकी जय हो "तीसरा व्याख्यान समाप्त हुवा"

तएणं ते सुविणलक्खणपाढगा सिद्धत्थेणं रएणा वंदियपूइअसक्कारिअसम्माणिआ समाणा पत्तेअं २ पुव्वन्नत्थेसु भद्दासणेसु निसीयंति ॥ ६८ ॥

राजा ने उनको नमस्कार किया सत्कार, सन्मान पूजन कर यथोचित आसन पर बिठाये जब सर्व ज्योतिषी लोग पूर्व में लगाये हुवे आठ भद्रासन पर बैठ गये तब पीछे.

तएणं सिद्धत्थे खत्तिए तिसलं खत्तियाणिं जवणिअंतरियं ठावेइ, ठावित्ता पुप्फफलपडिपुएणहत्थे परेणं विणएणं ते सुविणलक्खणपाढए एवं वयासी ॥ ६९ ॥

सिद्धार्थ राजा ने त्रिशला राणी को पूर्व कथित पड़दे के भीतर बुलाकर भद्रासन पर बिठाई और हाथ में फल फूल लेकर हाथ जोड़कर उन सर्व ज्योतिषियों से कहने लगा (नीतिशास्त्र में ऐसा कहा है कि जिस समय राजा देवता, गुरु वा ज्योतिषी के पास जावे उस समय खाली हाथ कभी भी नहीं जावे)

एवं खलु देवाणुप्पिया! अज्ज तिसला खत्तियाणी तंसि तारिसगंसि जाव सुत्तजागरा ओहीरमाणी २ इमे एयारूवे उराले चउद्दस महासुमिणे पासित्ता णं पडिबुद्धा ॥ ७० ॥

हे ज्योतिषी महाराज! आज हमारी राणी ने सुख शय्या में सोते हुवे थोड़ी निद्रा लेते हुवे १४ चवदह बड़े स्वप्न देखे हैं और फिर पूर्णतया जागृत हुई.

तंजहा, गयगाहा—तं एएसिं चउद्दसण्हं महासुमिणाणं देवाणुप्पिया! उरालाणं के मन्ने कल्लाणे फलवित्तिविसेसे भविस्सइ? ॥ ७१ ॥

हाथी से सिंह तक के चवदह स्वप्न सुनाकर राजा बोला कि बतलाइये इन उत्तम स्वप्नों का क्या फल होगा.

तएणं ते सुमिणलक्खणपाढगा सिद्धत्थस्स खत्तियस्स अंतिए एयमट्ठं सोच्चा निसम्म हट्ठतुट्ठ जाव-हयहियया. ते सुमिणे ओगिण्हंति, ओगिण्हित्ता ईहं अणुपविसंति, अणुपविसित्ता अन्नमन्नेणं सद्धिं संचालेंति, संचालित्ता तेसिं सुमिणाणं लद्धट्ठा गहिअट्ठा पुच्छिअट्ठा विणिच्छियट्ठा अभिगयट्ठा सिद्धत्थस्स रण्णो पुरओ सुमिणसत्थाइं उच्चारेमाणा २ सिद्धत्थं खत्तियं एवं वयासी ॥ ७२ ॥

राजा के मुख से स्वप्नों का वृत्तान्त सुनकर प्रसन्न होते हुवे सर्व ज्योतिषियों ने अपने २ मनमें फलों का विचार किया और फिर परस्पर फलों के सम्बन्ध में वार्तालाप कर कर सर्व एकमत होकर फल का निश्चय कर पूर्व में जिसको नायक बनाया है वो निःशंक होकर खड़ा होकर बोला.

स्वप्नों का फल।

हे राजन् सुनिये स्वप्न दिखने के नव कारण हैं १ अनुभव से, २ सुनने

से, ३ देखने से, ४ प्रकृति बिगड़ने से, ५ स्वभाविक, ६ चिन्ता से, ७ देवता के उपदेश से, ८ धर्म पुण्य के प्रभाव से ९ पाप उदय से इन नव कारणो से स्वप्न दीखते हैं जिनमें से प्रथम के छै कारणों से यदि स्वप्न दीखे तो उसे निष्फल समझना चाहिये और बाकी के तीन कारणों से दीखे और वो उत्तम हों तो उत्तम फल देते हैं और यदि बुरे हो तो बुरा फल देते हैं.

यदि रात्री के पहिले प्रहर अर्थात् सूर्यास्त से ३ घंटे बाद तक स्वप्न आवे तो उसका फल १२ मास पीछे मिले, दूसरे प्रहर में यदि आवे तो ६ मास पर्यन्त तीसरे प्रहर में आवे तो ३ मास और चौथे प्रहर में आवे तो एक मास पीछे और यदि सूर्योदय से २ घड़ी पहिले आवे तो १० दिन मे और सूर्योदय के समय ही आवे तो शीघ्र ही फल मिलता है.

यदि एक रात्रि में लगातार बहुत से स्वप्न देखे तो निष्फल जाते हैं अथवा रोगादि कारण से अथवा मूत्रादि रोकने से जो स्वप्न दीखे वो भी कुछ फल नहीं देते.

धर्म में रक्त, निरोगी स्थिर चित्त, जितेन्द्रिय और दयावान पुरुष स्वप्न द्वारा इच्छित, वस्तु प्राप्त कर सका है.

यदि कुस्वप्न देखने में आवे तो किसी को कहना नहीं परन्तु उत्तम स्वप्न योग्य पुरुष को अवश्य कहना और यदि योग्य पुरुष न मिले तो गाय के कान में कहना.

उत्तम (अच्छा) स्वप्न देखकर फिर निद्रा नहीं लेना चाहिये कारण यदि फिर कोई कुस्वप्न देखने में आवे तो वो उत्तम स्वप्न व्यर्थ जाता है इसलिये उत्तम स्वप्न देखने पश्चात रात्री बहुत होवे तो धर्म कथा इत्यादि शुभ कार्य कर रात्री व्यतीत करना चाहिये.

कुस्वप्न देखकर यदि सोजावे अर्थात् निद्रा ले लेवे थोड़े से समय के लिये और किसी को भी न कहे तो वो व्यर्थ होजावे अर्थात् उसका बुरा फल न मिले.

कुस्वप्न के पश्चात् यदि फिर उत्तम स्वप्न देखने में आवे तो उत्तम का फल मिले कुस्वप्न व्यर्थ जावे इसी प्रकार उत्तम के पश्चात् बुरा देखे तो बुरे का फल मिले उत्तम व्यर्थ जावे.

स्वप्नों का फल ।

स्वप्न में जो मनुष्य, सिंह, हाथी, घोड़ा, बैल और गाय के साथ अपने को रथ में बैठकर जाता देखे तो वो राजा होवे अर्थात् उसे राज्य प्राप्ती होवे.

जो मनुष्य स्वप्न में अपना घोड़ा, हाथी, वाहन, आसन, घर निवसन को चोरी जाता देखे तो उसे राज्य का भय अथवा शोक का कारण अथवा बन्धुओं में क्लेश होवे.

जो मनुष्य स्वप्न में सूर्य चन्द्र का बिंब आखाही निगल जावे तो वो गरीब होगा तो भी सुवर्ण से भरी समुद्र पर्यन्त पृथ्वी का स्वामी होवे स्वप्न में यदि शस्त्र, मणि, माणिक, मोती, चांदी, तांबा की चोरी देखे तो उस मनुष्य का धन, मान की हानी होवे और बहुत दुःख भोगना पड़े.

स्वप्न में सफेद हाथी पर चढ़कर नदी के किनारे जाकर चावल का भोजन करे तो वो मनुष्य दीन होने पर भी धर्मात्मा होकर राज्य लक्ष्मी का भोग करे.

स्वप्न में यदि अपनी स्त्री (भार्या) का हरण देखे तो द्रव्यों का नाश होवे, और स्त्री का परिभव अर्थात अपमान देखे तो क्लेश होवे और यदि गोत्र की स्त्री का हरण देखे तो बंधुओं को वध बंधन की पीड़ा होवे.

स्वप्न में यदि दक्षिण हाथ को भूरे सर्प से काटा देखे तो उस मनुष्य को ५ रात्रि में १००० सुवर्ण मुद्रा की प्राप्ति होवे.

स्वप्न में जो पुरुष अपने जूते शयन चुराते देखे तो उसकी स्त्री की मृत्यु होवे और उसके खुद के शरीर में बहुत पीड़ा हो.

स्वप्न मे यदि प्रभु की प्रतिमा का दर्शन पूजन करे तो सर्व संपदा की वृद्धि होवे.

स्वप्न में सफेद वस्तु देखे तो अच्छा और यदि काली देखे तो बुरा फल मिले परन्तु कपास, रुई, नमक सफेद होने पर भी यदि स्वप्न में दिखाई दें तो बुरा फल मिले और गाय, घोड़ा, हाथी और देव ये यदि काले रंग के भी दिखे तो उत्तम फलदाई हो.

स्वप्न में यदि अपने ताई बुरा वा उत्तम हुवा देखे तो खुद को और दूसरे को देखे तो दूसरे को फल मिलता है.

बुरा स्वप्न देखकर प्रभात में देवगुरु की सेवा में रक्त रहे तो बुरा स्वप्न भी उत्तम फल देने वाला होजाता है.

इत्यादि लौकिक शास्त्रों में स्वप्न फल बताये हैं.

जैन शास्त्रानुसार स्वप्न फल ।

जो स्त्री वा पुरुष स्वप्न में एक बड़ा क्षीर वा घी का घड़ा वा मधु का घड़ा देखे वा उसे शिरपर चढ़ाया देखे तो वो प्राणी उसी भव में बोध पाकर मोक्ष में जावे अर्थात् जन्म मरण से मुक्त होजावे और रत्नों का ढेर वा सुवर्ण का ढेर पर चढ़ना देखे तो उसी भव में मुक्ति पावे किन्तु तूपुवा तांबा के ढेर पर चढना देखे तो दो भव में बोध पाकर मुक्ति पावे.

स्वप्न में रत्नों से भरा हुवा घर देखे और भीतर जाकर अपना कब्जा करना देखे तो उसी भव में मुक्ति जावे इत्यादि जैनशास्त्रों में भी स्वप्न फल लिखा है

एवं खलु देवाणुप्पिया ! अम्हं सुमिणसत्थे बायालीसं सुमिणा तीसं महासुमिणा बावत्तरि सव्वसुमिणा दिट्ठा, तत्थ णं देवाणुप्पिया ! अरहंतमायरो वा चक्कवट्टिमायरो वा अरहंतंसि (ग्रं० ४००) वा चक्कहरंसि वा गब्भं वक्कममाणंसि एएसिं तीसाए महासुमिणाणं इमे चउद्दस महासुमिणे पासित्ता णं पडिवुज्झंति ॥ ७३ ॥

तंजहा, गयगाहा—॥ ७४ ॥

वासुदेवमायरो वा वासुदेवंसि गब्भं वक्कममाणंसि एएसिं चउद्दसण्हं महासुमिणाणं अन्नयरे सत्त महासुमिणे पासित्ता णं पडिवुज्झंति ॥ ७५ ॥

बलदेवमायरो वा बलदेवंसि गब्भं वक्कममाणंसि एएसिं चउचद्दसण्हं महासुमिणाणं अन्नयरे चत्तारि महासुमिणे पासित्ता णं पडिवुज्झंति ॥ ७६ ॥

मंडलियमायरो वा मंडलियंसि गब्भं वक्कममाणंसि एएसिं चउद्दसण्हं महासुमिणाणं अन्नयरं एगं महासुमिणं पासित्ता णं पडिबुज्झंति ॥ ७७ ॥

हे राजन् हमारे स्वप्न शास्त्र में ७२ स्वप्न कहे हैं ४२ जघन्य हैं ३० उत्तम हैं उन तीस स्वप्नों में से चक्रवर्ती वा तीर्थंकर की माता जिस वक्त यह उत्तम पुरुष माता की कुक्षि पवित्र करते हैं उस समय १४ स्वप्न देखती हैं और वे हाथी से लेकर निर्धुम अग्नि तक हैं.

वासुदेव की माता इसी तरह सात स्वप्न और बलदेव की माता वो पुत्र रत्न आने पर ४ स्वप्न पूर्व के १४ स्वप्नों में से देखती हैं. और देखकर पीछे संपूर्ण जागती हैं. सामान्य राजा की माता एक प्रधान स्वप्न देखती है.

इमे य णं देवाणुप्पिया ! तिसलाए खत्तिआणीए चोद्दस महासुमिणा दिट्ठा, तं उराला णं देवाणुप्पिया ! तिसलाए खत्तियाणीए सुमिणा दिट्ठा, जाव मंगल्लकारगा णं देवाणुप्पिआ ! तिसलाए खत्तिआणीए सुमिणा दिट्ठा, तंजहा अत्थलाभो देवाणुप्पिया ! भोगलाभो० पुत्तलाभो० सुक्खलाभो० देवाणुप्पिया ! रज्जलाभो देवाणु० एवं खलु देवाणुप्पिया ! तिसला खत्तियाणी नवण्हं मासाणं बहुपडिपुण्णाणं अद्धट्ठमाणं राइंदिआणं वइक्कंताणं, तुम्हं कुलकेउं कुलदीवं कुलपव्वयं कुलवडिंसगं कुलतिलयं कुलकित्तिकरं कुलवित्तिकरं कुलदिणयरं कुलाहारं कुलनंदिकरं कुलजसकरं कुलपायवं कुलतन्तुसंताणविवद्धणकरं सुकुमालपाणिपायं अहीणपडिपुण्णपंचिंदियसरीरं लक्खणवंजणगुणोववेअं माणुम्माणपमाणपडिपुण्णसुजायसव्वंगसुंदरंगं ससिसोमाकारं कंतं पियदंसणं सुरूवं दारयं पयाहिसि ॥ ७८ ॥

हे राजन्! त्रिशला देवीने प्रधान स्वप्न १४ देखे वे वहुत उत्तम फल वृत्ति का लाभ देंगे आपको अर्थ भोग पुत्र सुख राज्यादि संपदाओं का लाभ होगा और ९ मास ७॥ दिन वाद आप के कुल में केतु समान और कुल दीपक, कुल पर्वत, कुलअवतंसक, कुलतिलक कुलकीर्तिकर कुलवृत्तिकर, कुलदिनकर कुलाधार कुलनंदिकर (आनंद देने वाला) कुल यश वर्धन कुलपादप (वृक्ष) कुल वृद्धिकर इत्यादि गुणों वाला सुकुमाल हाथ पेरवाला, अहीन प्रतिपूर्ण पांचेंद्रिय शरीर वाला लक्षण व्यंजन गुणों से युक्त मान उन्मान प्रमाण (जिस का वर्णन पूर्व में पृष्ट पर कहा है) प्रतिपूर्ण सर्वांग वाला चंद्र समान सौम्य कांत प्रिय दर्शन अच्छे रूपवाला खूबसूरत पुत्र रत्न की प्राप्ति होगी.

सेविय णं दारए उम्मुक्कवालभावे विन्नायपरिणयमित्ते जुव्वणगमणुप्पत्ते सूरे वीरे विक्कंते विच्छिन्नविपुलवलवाहणेचाउरंतचक्कवट्टी रज्जवई राया भविस्सइ. जिणे वा तिलोगनायगे धम्मवरचाउरंतचक्कवट्टी ॥ ७९ ॥

वह पुत्र वालावस्था छोड कर युवक होनेपर विज्ञान की प्राप्ति से शूरवीर विस्तीर्ण विपुल सेना वाहन का मालिक होगा और वह चक्रवर्त्ती राजा की पदवी पावेगा अथवा तीन लोक के नाथ धर्म चक्रवर्त्ती तीर्थंकर प्रभु होंगे.

तं उराला णं देवाणुप्पिया! तिसलाए खत्तियाणीए सुमिणा दिट्ठा, जाव आरुग्गतुट्ठिदीहाऊकल्लाणमंगल्लकारगा णं देवाणुप्पिआ! तिसलाए खत्तियाणीए सुमिणा दिट्ठा॥ ८०॥

इसलिये पुण्यवती त्रिशला देवी ने जो स्वप्न देखे हैं वे निरोगता दीर्घायु संतोष देने वाले कल्याण मंगल करने वाले स्वप्न देखे हैं.

तएणं सिद्धत्थे राया तेसिं सुमिणलक्खणपाढगाणं अंतिए एयमट्ठं सोचा निसम्म हट्ठे तुट्ठे चित्तमाणंदिते पीयमणे परमसोमणसिए हरिसवसविसप्पमाणहिअए करयलजाव ते सुमिणलक्खणपाढगे एवं वयासी ॥ ८१ ॥

ऐसा स्वप्नों का फल सुनकर सिद्धार्थ राजा संतुष्ट होकर स्वप्नों के शास्त्रों को जानने वाले पंडितों के पास आकर हाथ जोड़ प्रसन्न चित्त से बोला.

एवमेवं देवाणुप्पिया ! तहमेव देवाणुप्पिया ! अवितहमेयं देवाणुप्पिया ! इच्छियमेयं० पडिच्छियमेयं० इच्छियपडिच्छियमेयं देवाणुप्पिया ! सच्चे णं एसमट्ठे से जहेयं तुब्भे वयह त्तिकट्टु ते सुमिणे सम्मं पडिच्छइ, पडिच्छित्ता ते सुविणलक्खणपाढए विउलेणं असणेणं पुप्फवत्थगंधमल्लालंकारेणं सक्कारेइ, सम्माणेइ, सक्कारित्ता सम्माणित्ता विउलं जीवियारिहं पीइदाणं दलइ दलइत्ता पडिविसज्जइ ॥ ८२ ॥

हे देवानुप्रिय विद्वानगण ! आपने कहा है सो सब सत्य है जरा भी झूंठ उस में नहीं है मेरा इच्छित है मैं उसीकी प्रार्थना करता हूं जैसे तुमने कहा है ऐसा ही फल होगा. इतना कह कर फिरसे स्वप्नों का फल विचार कर याद करे. और इस के बाद राजा उन पंडितों को खाने पीने की वस्तुएं और पुष्प वस्त्राभूषण गंधमाला वगैरह उनकी जिंदगी पर्यंत चले इतना धन सत्कार बहुमान करके दिया और नमस्कार कर उनको जाने की आज्ञा दी.

तएणं से सिद्धत्थे खत्तिए सीहासणाओ अब्भुट्टेइ, अब्भुट्ठित्ता जेणेव तिसला खत्तियाणी जवणिअंतरिया तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता तिसलं खत्तियाणीं एवं वयासी ॥८३॥

एवं खलु देवाणुप्पिया ! सुमिणसत्थंसि बायालीसं सुमिणा तीसं महासुमिणा जाव एगं महासुमिणं पासित्ता णं पडिबुज्झंति ॥ ८४ ॥

इमे अ णं तुमे देवाणुप्पिए ! चउद्दस महासुमिणा दिट्ठा, तं उराला णं तुमे जाव-जिणे वा तेलुक्कनायगे धम्मवरचाउरंतचक्कवट्टी ॥ ८५ ॥

ज्योतिषियों के जाने बाद राजा खड़ा होकर त्रिशलादेवी के पास आकर बोले हे देवानुप्रिये ! ज्योतिषियों ने जो कहा है कि ३० स्वप्न उत्तम है और इसमें से १४ स्वप्न तीर्थंकर की माता तीर्थंकर के गर्भ में आने बाद देखती है और पीछे जागृत होती है वो सब बातें तेने सुनी है इसलिये तेरे को धर्म चक्र वर्ती तीर्थंकर पुत्र रत्न होगा.

तएणं सा तिसला खत्तिआणी एअमट्ठं सुच्चा निसम्म हट्ठतुट्ठ जाव-हयहिअया, करयलजाव ते सुमिणे सम्मं पडिच्छइ ॥ ८६ ॥

पडिच्छित्ता सिद्धत्थेणं रणणा अब्भणुन्नाया समाणी नाणामणिरयण भत्तिचित्ताओ भद्दासणाओ अब्भुट्ठित्त अतुरिअं अचवलं असंभताए अविलंबिआए रायहंससरिसीए गईए जेणेव सए भवणे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता सयं भवणं अणुपविट्ठा ॥ ८७ ॥

त्रिशलारानी उन स्वप्नों के उत्तम फल सुनकर प्रसन्न चित होकर हृदय में फिर से धारकर सिद्धार्थ राजा की आज्ञा लेकर मणि सुवर्ण रत्नों से बना हुआ भद्रासन से उठकर अत्वरित, अचपल असंभ्रांत अविलंब राज हंसी की चाल से चलकर अपने वास भवन में गई (और आनंद से दिन व्यतीत करने लगी)

जप्पभिइं चणं समणे भगवं महावीरे तंसि नायकुलंसि साहरिए, तप्पभिइं च णं बहवे वेसमणकुंडधारिणो तिरियजंभगा देवा सक्कवयणेणं से जाइं इमाइं पुरापोराणाइं महानिहाणाइं भवंति, तंजहा-पहीणसामिआइं पहीणसेउआइं पहीणगुत्तागाराइं, उच्छिन्नसामिआइं उच्छिन्नसेउआइं उच्छिन्नगुत्तागाराइं गामागरनगरखेडकब्बडमडंबदोणमुहपट्टणासमसं-

वाह सन्निवेसेसु सिंघाडएसु वा तिएसु वा चउक्केसु वा चच्चरेसु वा चउम्मुहेसु वा महापहेसु वा गामट्ठाणेसु वा नगरट्ठाणेसु वा गामणिद्धमणेसु वा नगरनिद्धमणेसु वा आवणेसु वा देवकुलेसु वा सभासु वा पवासु वा आरामेसु वा उज्जाणेसु वा वणेसु वा वणसंडेसु वा सुसाणसुन्नागारगिरिकंदरसंतिसेलोवट्ठाणभवणगिहेसु वा सन्निक्खित्ताइं चिट्ठंति, ताइं सिद्धत्थरायभवणंसि साहरंति ॥ ८८ ॥

महावीर प्रभु जिसदिन से त्रिशला देवी के उदर में आये उसदिन से उन के पिता सिद्धार्थ राजा के कुल में इंद्र महाराज की आज्ञा से कुबेर लोगपाल तिर्यङ्क जंभक देव द्वारा स्वामी रहित धन के ढेर जो पूर्व में किसी ने कहां भी स्थापन किये है वे बहुत धन को मंगाकर रखावे जो धन का स्वामी मरगया हो, धन स्थापन करने वाले मरगये हो उनके हकदार गोत्री भी मरगये हो स्वामी का कोई भी रहा न हो डालने वाला का भी कोई न रहा हो गोत्री के कुनवा का भी कोई न रहा हो/ऐसा निर्वंशों का धन जिस जगह पर हो वहां से लाकर तिर्यक जंभक देव सिद्धार्थ राजा के घर में रखे.

जगह के नाम ।

गांव नगर खेड़ा (छोटा गांव) कर्बट ( ) मंडप द्रोण मुख (बंदर) पट्टण, मसाण स्थान, संवाह (तला) संनिवेश (कॅंप) वगैरह जगह पर से अथवा सिंघाटक (त्रिकोण स्थान) में अथवा तीन रस्ते जहां मिले वहां चौक में, जहां बहुत रस्ते मिले वहां, चार मुख वाला स्थान में, अथवा राजमार्ग से, गांव स्थान नगर स्थान से, नगर का पानी जाने का रास्ते से, दुकानों से, मंदिरों से, सभा स्थान से, पानी पाने की जगह से, आराम से, उद्यान से, वन से, वनखंड से, श्मशान से, फूटे टूटे घरों से, गिरि गुफा, पर्वत के घर, शांति घर वगैरह अनेक स्थान जहां बिलकुल बस्ती न हो वहां से धन उठाकर लाकर रखने लगे.

जं रयणिं च णं समणे भगवं महावीरे नायकुलंसि सा-

हरिए, तं रयणिं च णं नायकुलं हिरणेणं वड्ढित्था सुवण्णे-णं वड्ढित्था धणेणं धन्नेणं रज्जेणं रट्ठेणं वलेणं वाहणेणं कोसेणं कोट्ठागारेणं पुरेणं अंतेउरेणं जणवएणं जसवाएणं वड्ढित्था, विपुलधणकणगरयणमणिमोत्तियसंखसिलप्पवाल-रत्तरयणमाइएणं संतसारसावइज्जेणं पीइसक्कारसमुदएणं अईव २ अभिवड्ढित्था, तएणं समणस्स भगवओ महावीरस्स अम्मापिऊणं अयमेयारूवे अब्भत्थिए चिंतिए पत्थिए मणोगए संकप्पे समुप्पज्जित्था ॥ ८६ ॥

जप्पभिइं च णं अम्हं एस दारए कुच्छिंसि गब्भत्ताए वक्कंते, तप्पभिइं च णं अम्हे हिरणेणं वड्ढामो सुवण्णेणं धणेणं धन्नेणं रज्जेणं रट्ठेणं वलेणं वाहणेणं कोसेणं कुट्ठागारेणं पुरेणं अंतेउरेणं जणवएणं जसवाएणं वड्ढामो, विपुल-धणकणगरयणमणिमुत्तियसंखसिलप्पवालरत्तरयणमाइएणं संतसारसावइज्जेणं पीइसक्कारेणं अईव २ अभिवड्ढामो, तं जया णं अम्हं एस दारए जाए भविस्सइ, तया णं अम्हे एयस्स दारगस्स एयाणुरूवं गुणं गुणनिप्फन्नं नामधिज्जं करिस्सामो वद्धमाणुत्ति ॥ ९० ॥

जिस समय सिद्धार्थ राजा के घर को महावीर प्रभु आये उस समय से सिद्धार्थ राजा के कुल में हिरण्य (चांदी) सुवर्ण, धन, धान्य, राज्य, राष्ट्र (देश) बल, वाहन, कोश, कोठार, नगर, अन्तःपुर (रानिओं का परिवार) जनपद यशोवाद की वृद्धि हुई. उसके साथ धन, सुवर्ण, रत्न, मोती, शंख, शिला, (चांद) पदवी का मान मूंगे, रक्त रत्न (माणिक) वगैरह उत्तमोत्तम वस्तु (धन धान्यादि सब सार रूप) से और प्रीति सत्कार निरन्तर अतिशय बढ़ने लगे ऐसी वृद्धि होती देखकर महावीर प्रभु की माता और पिता के हृदय में

ऐसा विचार हुवा कि ऐसी उत्तमोत्तम वस्तु बढती है वो प्रताप सब गर्भ का है इसलिये गुणों के साथ मिलता पुत्र का जन्म होने पर वर्द्धमान (वृद्धि करने वाला) नाम रखेंगे.

तएणं समणे भगवं महावीरे माउअणुकंपणट्ठाए निच्चले निप्फंदे निरेयणे अल्लीणपल्लीणगुत्ते आवि होत्था ॥ ९१ ॥

महावीर प्रभु की मातृ भक्ति ।

महावीर प्रभु ने माता की भक्ति से उसकी कुक्षि में कोई भीतर दुःख न हो इसलिये निश्चल निष्कंप स्थिर होकर अंगोपांग को हिलने बंध किये (जैसे कि एक योगी समाधि लगाकर बैठता है).

तएणं तीसे तिसलाए खत्तियाणीए अयमेयारूवे जाव संकप्पे समुप्पज्जित्था-हडे मे से गब्भे, मडे मे से गब्भे, चुए मे से गब्भे; गलिए मे से गब्भे, एस मे गब्भे पुव्विं एयइ, इ-याणिं नो एयइ त्तिकट्टु ओहयमणसंकप्पा चिंतासोगसागरसं-पविट्ठा करयलपल्हत्थमुही अट्टज्झाणोवगया भूमीगयदिट्ठिया झियायइ, तंपि य सिद्धत्थरायवरभवणं उवरयमुइंगतंतीतल-तालनाडइज्जजणमणुज्जं दीणविमणं विहरइ ॥ ९२ ॥

अपने गर्भ को हिलता नहीं देखकर त्रिशला माता को इस तरह मनमें विचार हुवा कि मेरा गर्भ किसी ने हरण किया, मेरा गर्भ मरगया, मेरा गर्भ पड़ गया, मेरा गर्भ मवाही होकर निकल गया क्योंकि थोड़ी देर पहले हिलता था अब नहीं हिलता ऐसे मनमें संकल्प करके शून्य होकर चिंता समुद्र में होकर हथेली में मुख स्थापन करके आर्त्त (संताप) ध्यान में डूबकर पृथ्वी तरफ दृष्टिकर विचार करने लगी यहां ग्रंथकर्त्ता थोड़ासा दुःख का वर्णन करते हैं.

मैं निर्भागिणी हूं मेरे घर में निधान (धन भंडार) कहां से हो मेरे जैसे

कि दुर्भागी दरिद्री के हाथ में चिंतामणी रत्न नहीं रहता ऐसेही मेरे घर में ऐसा पुत्र रत्न कहां से रह सक्ता है.

अरे दैव ! मेरे मन रूप भूमि में अनेक मनोरथ रूप कल्पवृक्ष उत्पन्न हुआ उसको तैने जड़ों से ही काट डाला अर्थात् पुत्र होने बाद जो सुख मिलने की उम्मेद थी वो सब नष्ट होगई.

हे दैव ! तेने मुझे मेरु पर्वत पर चढाकर नीचे गिरादी अर्थात् मुझे ऊंची आशाएं कराकर आशाएं सब भ्रष्ट कर डाली.

हे दैव तेरा क्या दोष है ! मैंने पूर्वभव में ऐसे अघोर पाप किये होंगे, छोटे बच्चों को उसकी माता से दूरकर दूध पिलाने में वियोग कराया होगा तोते चकवा कबूतर वगैरह को पींजरे में डाले होंगे बाल हत्या की होगी शोकिला पुत्र को मराया होगा, कोई के बालक को गाली दी होगी अपने पति को छोड़ दूसरे का संग किया होगा किसी को जूठे कलंक दिये होंगे ! सति साध्वी साधु को संताप दिया होगा नहीं तो ऐसे दुखों का ढेर मेरे शिर पर कहां से आता !

हे सखि ! मैं जानती थी कि मैंने चौदह स्वप्न देखे हैं तो सर्वत्र पूजित पुत्र को जन्म दूंगी किंतु वो सब निष्फल होगये मनके मनोरथ मनमें ही रहगये.

अब मैं कहां जाऊं किस के आगे दुःख कहुं ? धिक्कार हो ! ऐसा क्षणिक मोहक संसार सुख को ।

हे सखी ! दोष किसको देना ! मैंने पाप किये होंगे उसका फल जो दुर्दैव है उससे विचार करना भी फुकट है. घुवड पक्षी दिन में न देखे तो सूर्य का क्या दोष ? वसंतु ऋतु में केरडा को पान न आवे तो वसंत का क्या दोष है. हे सखी आप जाओ विघ्न शांति के लिये कुछ उपाय करो ! मंत्र वादिओं को बुलाओ क्योंकि मेरा गर्भ पहिले हिलता था अब नहीं हिलता इसलिये मैं जानती हूं कि उसकी कुछ भी हानि हुई होगी.

इस बातको सुनकर सखियें सिद्धार्थ राजा को कहने को दोड़ी.

सिद्धार्थ राजा भी वह अमंगल सूचक बात सुनकर उदास होगया और मृदंग वीणा वगेरह अनेक वार्जित्रों से जो सभा गाज रही थी वह भी बन्द होगया सर्वत्र शून्य दीखने लगा (और उपाय करने लगे).

तएणं से समणे भगवं महावीरे माऊए अयमेयारूवं अब्भत्थिअं पत्थिअं मणोगयं संकप्पं समुप्पन्नं वियाणित्ता एगदेसेणं एयइ, तएणं सा तिसला खत्तियाणी हट्ठतुट्ठा जाव हयहिअया एवं वयासी ॥ ६३ ॥

माता पिता की इतनी पुत्र की तरफ स्नेह दृष्टि देख कर उनका दुःख को समझकर उनका दुःख निवारणार्थ जरा हिले, हिलते ही माता को गर्भ का सचेतन पना देखकर हर्ष तुष्टि से हृदय भरजाने पर इस तरह बोली ।

मेरा गर्भ हिलता है इसलिये वह जीवित है किसीने उसका हरण नहीं किया न मरगया है न नाश हुआ है क्योंकि पूर्व में न हिलने से मुझे अंदेशा पडा था कि उसका नाश होगया होगा परन्तु अब हिलता है इसलिये वह जिंदा है ऐसा कहकर प्रसन्न मुख वाली होकर फिरने लगी (सबकी चिंता भी साथ दूर होने से पूर्व की तरह वाजिंत्र गायन होने लगे).

नो खलु मे गब्भे हडे जाव नो गलिए, मे गब्भे पुव्विंनो एयइ, इयाणिं एयइ त्तिकट्टु हट्ठ जाव एवं विहरइ, तएणं समणे भगवं महावीरे गब्भत्थे चेव इमेयारूवं अभिग्गहं अभिगिण्हइ–नो खलु मे कप्पइ अम्मापिउहिं जीवंतेहिं मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारिअं पव्वइत्तए ॥ ६४ ॥

(सब को आनन्द हुआ परन्तु महावीर प्रभु को मन में विचार हुआ कि अल्पकाल मेरा हिलना बंद हुवा तो ऐसा उन्होंने दुःख पाया तो मैं दीक्षा लेउंगा तो मेरे वियोग से मरजायंगे ऐसा विचार होजाने से) प्रतिज्ञा (अभिग्रह) लिया कि मैं उनको वियोगी न बनाउंगा जहां तक वे जीवित है वहां तक उन को छोड दीक्षा नहीं लेउंगा न गृहवास छोडूंगा.

तएणं सा तिसला खत्तियाणी ण्हाया कयबलिकम्मा कयकोउयमंगलपायच्छित्ता सव्वालंकारविभूसिया तं गब्भं नाइ-

सीएहिं नाइउरहेहिं नाइतित्तेहिं नाइकडुएहिं नाइकसाइएहिं नाइअंबिलेहिं नाइमहुरेहिं नाइनिद्धेहिं नाइलुक्खेहिं नाइउल्ले-हिं नाइसुक्केहिं सव्वत्तुगभयमाणसुहेहिं भोयणच्छायणगंधमल्लेहिं ववगयरोगसोगमोहभयपरिस्समा जं तस्स गब्भस्स हिअंभियं पत्थं गब्भपोसणं तं देसे अ कालेअ आहारमाहारेमाणी विवित्तमउएहिं सयणासणेहिं पइरिक्कसुहाए मणोऽणुकूलाए विहारभूमीए पसत्थदोहला संपुण्णदोहला संमाणियदोहला अविमाणिअदोहला वुच्छिन्नदोहला ववणीअदोहला सुहंसुहेणं आसइ सयइ चिट्ठइ निसीअइ तुयट्टइ विहरइ सुहंसुहेणं तं गब्भं परिवहइ ॥ ९५ ॥

उसके बाद त्रिशला क्षत्रियाणी गर्भ रक्षार्थ स्नान कर देव की पूजा कर कौतुक मंगल के चिन्ह से विघ्नों को दूर कर सब अलंकार वस्त्रों को पहरकर आनन्द में रहने लगी और बहुत ठंडे वा बहुत गरम वा बहुत तीखे, बहुत कडुए, बहुत कषायले, बहुत खट्टे, बहुत मीठे, बहुत घी तेल वाले चीकटे, बहुत लूखे, बहुत हरे, बहुत सूखे, ऐसे पदार्थों को खाना छोड दिया और ऋतु अनुसार अनुकूल भोजन वस्त्र गंधमाला उपयोग में लेने लगी और रोग शोक मोह परिश्रम को छोड दिये ऐसे वैद्यक रीति अनुसार पथ्य हित परिणामयुक्त (थोडा) भोजन गर्भ की पुष्टि देने वाला खाने लगी और योग्य वस्तु भोगने लगी निर्दोष कोमल शय्या जो एकांत सुख देने वाली हो, और हृदय को प्रसन्न करने वाली विहार भूमि (अनुकूल जग्या में) फिरने लगी.

छ ऋतु में उपयोगी चीज।

वर्षा (चौमासे) में लूण, (नमक), शरद ऋतु में जल, शिशिर में खट्टा रस, वसंत में घी, ग्रीष्म में गुड़ वगैरह अनेक उपयोगी चीज उपयोग में लेनी ॥

क्योंकि गर्भवती स्त्री अयोग्य वस्तु को खावे वा अयोग्य वस्तु का उपभोग में लेवे तो नीचे लिखे हुए दोषों की उत्पत्ति होती है.

स्त्रियों के लिये प्रसंगानुसार हित शिक्षा कहते हैं:—वायु पित्त कफ की वृद्धि होवे ऐसा आहार नहीं खाना गर्भ मालूम पड़ने बाद ब्रह्मचर्य पालना चाहिये नहीं तो गर्भ को हानि होती है, दिनको नींद नहीं लेनी आंख में अंजन नहीं डालना, रोना नहीं, बहुत बोलना नहीं, बहुत हंसना नहीं, तेल से मर्दन कराना नहीं, बहुत स्नान नहीं करना नख नहीं कटाना बहुत कथाएं नहीं सुननी, जल्दी चलना नहीं, अग्नि के ताप में नहीं बैठना क्योंकि वैद्यक शास्त्र में कहा है कि जो गर्भवती दिन को सोवे तो बच्चा बहुत निद्रा लेने वाला होता है, स्त्री अंजन करे तो अन्धा होवे, तेल मर्दन से बच्चा कोढ रोग वाला होवे, नख उतराने से नख रहित अर्थात् हीन नख वाला होता है. रोने से आंख का रोगी बच्चा होता है. दोड़ने से चपल लड़का होता है अथवा गर्भपात होजाता है, स्त्री के हंसने से बालक के जीभ होठ दांत काले होते हैं, बहुत बोलने से लड़का मुखर (बहुत बोलने वाला) होता है बहुत कथा सुनने से बहरा लड़का होता है, पंखा वगैरह से पवन खाने से बालक शून्य होता है. तीखे भोजन से बालक का मुख त्रास मारता है. कडुए भोजन से बालक दुर्बल होता है कसायला भोजन से उदानवर्त्त वायु का रोग अथवा नेत्र रोगी होता है. खट्टे भोजन से रक्त पित्त होवे मीठे भोजन से बालक मूर्ख होता है. खारे (लवण जिसमें अधिक हो) भोजन से बालक को सफेद बाल शीघ्र आते हैं अथवा बहरा होता है. ठंडे भोजन से वायु रोगी होवे उष्ण भोजन से बालक निर्बल होता है मैथुन (पुरुष संग) से, दोड़ने से पेट मसलने से, मोरी उल्लंघन करने से ऊंची नीची जमीन पर सोने से नीसरणी उपर चढने से, अस्थिर (ऊकडा) आसन पर बैठने से उपवास करने से उलटी (वमन से) वा जुलाब लेने से गर्भ का नाश वा गर्भ को हीनता होती है.

माता के दोहले।

त्रिशला रानी को जो दोहले उत्पन्न हुए वे सब उत्तम थे वे सब पूरे किये और वे भी इच्छानुसार पूरे किये जैसे कि सुपात्र का दान देना, स्वधर्मी का पोषण करना, पृथ्वी में अपने द्रव्य से लोगों को ऋण मुक्त करना, धर्मशाला बनाना, जीवों को अभयदान देना, याचकों को इच्छित दान देना दानशाला बनाना, बन्दियों को छुड़ाना, तीर्थयात्रा करना, उत्तम ध्यान करना वगैरह

सर्वोत्तम दोहले हुए वे सब पूर्ण होजाने बाद उस त्रिशलादेवी का चित्त प्रसन्न होजाने से गर्भ के रक्षण में स्थिर चित्त होकर सुख से आश्रय लेती है सुख से सोती है सुख से खड़ी होती है सुख से बैठती है सुख से शय्या में लौटती है सुख से भूमि पर पैर धरती है और गर्भ का अच्छी तरह से रक्षण करती है.

तेणं कालेणं तेणं समएणं समणे भगवं महावीरे जे से गिम्हाणं पढमे मासे दुच्चे पक्खे चित्तसुद्धे तस्स णं चित्तसुद्धस्स तेरसीदिवसेणं नवण्हं मासाणं बहुपडिपुण्णाणं अद्धट्ठमाणं राइंदियाणं विइक्कंताणं उच्चट्ठाणगएसु गहेसु पढमे चंदजोए सोमासु दिसासु वितिमिरासु विसुद्धासु जइएसु सव्वसउणेसु पयाहिणाणुकूलंसि भूमिसप्पिंसि मारुयंसि पवायंसि निप्फन्नमेइणीयंसि कालंसि पमुइयपक्कीलिएसु जणवएसु पुव्वरत्तावरत्तकालसमयंसि हत्थुत्तराहिं नक्खत्तेणं जोगमुवागएणं आरुग्गा आरुग्गं दारयं पयाया ॥ ९६ ॥

वो समय वो काल श्रीभगवान् महावीर ग्रीष्म ऋतु पहिला मास दूसरा पक्ष चैत्र सुदी त्रयोदसी नवमास पूरे होने बाद साडे सात दिन जाने बाद उच्च स्थान में ग्रह आने पर चंद्र नक्षत्र उत्तर फाल्गुनी का योग आने पर दिशाओं में सौम्यता होजाने पर अन्धकार दूर होने पर धूल वगैरह तोफान से रहित, पक्षिओं से जय जयारव निकलने पर सर्वत्र वृष्टि हवा की अनुकूलता अनाज के खेतर सर्वत्र भरे हुए थे और पृथ्वी को नमस्कार प्रदक्षिणा करने की तरह पवन चल रहा था सब लोग सुखी दीखते थे ऐसे उत्तम मुहूर्त नक्षत्र योग आनंद के समय पर मध्य रात्रि में भगवान के जन्म कुंडली में उच्च ग्रह आगये क्योंकि तीन ग्रह उच्च के हो तो राजा, पांच ग्रह से वासुदेव छः ग्रह उच्च हो तो चक्रवर्ती और सात हो तो तीर्थंकर पद पाता है.

तीर्थंकर महावीर प्रभु का ग्रह स्थान ।

सूर्य मेश राशि का, चन्द्र वृषभ राशि का, मंगल मकर राशि का, बुध कन्या का, बृहस्पति कर्क राशि का, शुक्र मीन राशि का, शनि तुला राशि का

ऐसे सात ग्रह उपरांत राहु मिथुन राशि का उच्च स्थान में आगया तब मध्य रात्रि में मकर लग्न में मधरात को सर्वत्र उद्योत करके नारकी के जीवों को भी दो घड़ी तक सुख होने पर माता त्रिशला देवी ने महावीर प्रभु को जन्म दिया.

चौथा व्याख्यान समाप्त।

जं रयणिं च णं समणे भगवं महावीरे जाए, सा णं रयणी बहूहिं देवेहिं देवीहि ओवयंतेहिं उप्पयंतेहि य उप्पिंजलमाणभूआ कहकहगभूआ आवि हुत्था ॥ ९६ व ॥

जिस रात्रि में भगवान महावीर का जन्म हुआ उस रात्रि में बहुत से देव देवी आने से और जाने से सर्वत्र आनंद व्याप रहा दीखता था और अस्पष्ट उच्चार से हर्ष के आवाज आरहे थे.

प्रभु का जन्म महोत्सव।

प्रभु के जन्म समय दिशाएं हर्षित होगई ऐसा दिखने लगा मंद मंद सुगंधी वायु चलने लगा तीन जगत् में उद्योत होगया, आकाश में देव दुंदुभी (एक जात का दैवी वाजित्र) बजने लगी नरक के जीवों को भी थोड़ी देर तक शांति होगई पृथ्वी रोमांचित दीखने लगी.

५६ दिक्कुमारियों का उत्सव।

अधोलोक की आठ भोगंकरा, भोगवती, सुभोगा, भोग मालिनी, सुवत्सा, वत्समित्रा, पुष्पमाला, आनंदिता, देवियें आसनकंप से उपयोग देने से अवधि ज्ञान द्वारा प्रभु का जन्म जानकर आई और माता को नमस्कार कर ईशानकोण में सूति का ग्रह बनाकर एक योजन की जमीन संवर्त वायु से शुद्ध की मेघकरा मेघवती, सुमेघा, मेघ मालिनी, तोयधारा विचित्रा, वारिषेणा, बलाहका, ये आठ उर्ध्वलोक से आकर देवीयों ने नमस्कार कर सुगंधी जल पुष्प की वृष्टि की.

नंदोत्तरा, नंदा, आनंदा, नंदिवर्धना, विजया, वैजयंती, जयंती, अपराजिता आठ दिक्कुमारी पूर्व रुचक से आकर नमस्कार कर दर्पण लेकर खड़ी रही.

समाहारा, सुप्रदत्ता, सुप्रबुद्धा, यशोधरा, लक्ष्मीवती, शेषवती, चित्रगुप्ता, वसुंधरा, दक्षिण रुचक से आकर नमस्कार कर स्नान कराने को जल से भरा हुआ कलश लेकर गीत गान करने लगी.

इला देवी, सुरादेवी, पृथ्वी, पद्मावती, एकनासा, नवमिका, भद्रा, सीता, पश्चिम रुचकसे आकर नमस्कार कर हाथ में पंखा लेकर पवन डालने को खडी रहकर गीत गान करने को लगी.

अलंबुसा मितकेशी, पुंडरिका, वारुणी, हासा, सर्व प्रभा, श्री, ह्री आठ उत्तर रुचकसे आकर नमस्कार कर चामर विंजने लगी चित्रा, चित्रकरा, शतेरा, वसुदामिनी यह चार विदिक् रुचकसे आकर हाथमें दीपक लेकर खडी रही, और रुचक द्वीप से रुपा, रुपासिका, सुरुपा, रुपवती, चार देवीएं आकर चार आंगुल रखकर बाकी की नाल छेद कर नजदीक में गडा खोदकर उसमे डाल कर वैडूर्य रत्न का चोतरा बना लिया और द्रोह से बांध लिया, जन्म गृह से पूर्व दक्षिण, उत्तर तीन दिशा में तीन केल के गृह बनाकर दक्षिण के घर में माता पुत्र दोनों को तेल से मालिस (मर्दन) किया पूर्वके घर में लेजाकर स्नान कराया, और कपडे आभूषण पहराये, उत्तर के घर में लेजाकर अरणी के काष्ठ से अग्नि जलाकर चंदन का होमकर रक्षा बनाकर पोटली बांध दी और मणि रत्न के दो गोले टकराकर कहा कि हे वीर आप पर्वत जितने आयु वाले हो इस तरह सूतिका कर्मकर माता पुत्र को उनके घरमें रखकर नमस्कार कर अपने स्थानों में चली गई.

हरेक देवी का परिवार चार हजार सामानिक देव, चार महत्तरा, १६ हजार अंग रक्षक, सात जाति की सेना और सेनापति, और दूसरे भी रिद्धि वाले देव साथ होते हैं और अभियोगिक देवों ने बनाया हुआ एक योजन के विमान में बैठकर आये थे और चले गये.

६४-इन्द्रों का महोत्सव.

इन्द्रों का आसन कंपने से वे जानते हैं और प्रथम देवलोक में हरिनगमेषि देव इन्द्र महाराज के कहने से सुघोषा घंटा बजावे जिससे ३२ लाख विमान के घंट बजने पर सब तैयार होकर इन्द्र के पास आकर खडे हुए और पालकदेव ने

पालन विमान बनाया. बीच में इन्द्र बैठा, और आठ अग्र महिषी (मुख्य देविएं) के आठ भद्रासन सन्मुख बनाये थे डावी बाजू पर सामानिक देवों के ८४००० भद्रासन थे, दक्षिण बाजू में अभ्यंतर पर्षदा के १२००० भद्रासन थे मध्य पर्षदा के १४०००, बाहय पर्षदा के १६००० भद्रासन थे पीछली बाजू पर सात सेनापति के सात भद्रासन थे और चारों दिशा में ८४००० हजार ८४००० हजार आत्म रक्षक देवों के भद्रासन थे और भी कई देवों का परिवार इन्द्र के साथ बैठ गये और जब इन्द्र चला कि उनके साथ इन्द्र के हुकम से कितने देव चले, कितनेक मित्र की प्रेरणा से, कितनेक देवियों के आग्रह से कितनेक अपनी इच्छा से, कितनेक कौतुक से कितनेक विस्मय से कितनेक भक्ति से अपने नये २ वाहन बनाकर चलने लगे. और उनके वाजित्र घंटा नाद से और कोलाहल से ब्रह्माण्ड गाज रहा था.

आपस में आनंद के लिये कहते थे कि आप अपना वाहन संभालो कि मेरा सिंह उन्मत्त होकर आपके हाथी को पीडा न करे. भैंसे वाला घोड़े वाले को कहता था, गरुड वाला सर्प वाले को, चित्र वाला बकरे वाले को, कहता था. इस तरह आकाश बहुत बड़ा होने पर भी देवों की संख्या ज्यादह होने से छोटा (संकीर्ण) दीखने लगा. जो देव जोर से चलते थे उनको दूसरे कहने लगे कि मित्र ! मुझे छोड़ आप न जावे, किंतु हर्ष से जाने की जल्दी से कौन सुनता था, कोई को धक्का लगने पर दूसरे को उलम्भा देता था तो दूसरा कहता था कि बन्धु ! इस समय पर क्लेश नहीं करना चाहिये.

कवि की घटना ।

चंद्र के किरण जब उन देवों के मस्तक उपर आये तो निर्जर देव भी जरा वाले अर्थात् वृद्ध धोले बाल वाले दीखने लगे, और तारे मस्तक उपर "मनारे" माफक और कंठ में मुक्ताफल की माला की तरह और शरीर उपर पसीना के बिंदु माफक दीखने लगे इस तरह सब देव आने लगे.

पहिले सौधर्म इन्द्र नंदीश्वर द्वीप में जाकर अपना बहुत बड़ा विमान को छोटा बनाकर महावीर प्रभु के पास आकर तीन प्रदक्षिणा कर नमस्कार कर माता को कहने लगा हे रत्नकुक्षि ! तुझे नमस्कार हो मैं इन्द्र देव हूं आपके

पुत्र रत्न का जन्म महोत्सव करने को आया हूं आप डरना नहीं ऐसा कहकर माता को अवसर्पिनी निद्रा दी और प्रभु का बिंब प्रभु के बदले प्रभु की माता के पास रखा और इन्द्र ने अपने पांच रूप बनाकर एकरूप से प्रभु को हाथ में लिये दो रूप से चंवर वींजने लगा, एकरूप से छत्र धरा और एक रूप से वज्र हाथ में लेकर आगे चलने लगा और परिवार के साथ मेरु पर्वत पर आया.

दक्षिण भाग में पांडुक वन में पांडुक बला शिला पास गया, और शिला पर आसन लगाकर बैठा और गोद में प्रभु को रखा पीछे २० भवनपति ३२ व्यंतर, १० वैमानिक और दो सूर्य चंद्र मिलकर ६४ इन्द्र थे आठ जाति के कलश सुवर्ण चांदी, सुवर्ण रत्न, चांदी रत्न, सुवर्ण चांदी रत्न और मिट्टी के प्रत्येक १००८ एकहजार आठ की संख्या में लाकर रखे, सिवाय दर्पण, रत्न करंडक, सुप्रतिष्ठक थाल, चंगेरी वगैरह पूजा के उपकरण १००८ इकट्ठे किये और मागध प्रभास वगैरह तीर्थों की मिट्टी और गंगादि नदियों का जल, पद्मादि सरोवर का और क्षुद्र हिमवंत, वैताढ्य विजय वक्षस्कार पर्वतों से कमल सरसों, फूल वगैरह पूजा की सामग्री प्रथम अच्युतेंद्र ने अभियोगिक देवों द्वारा मंगाकर पूजा की जब तैयारी की तब वहां खड़े हुए देव कलश हाथ में होने से ऐसे लगे कि जैसे तुंबे के जरिये समुद्र तैरने को लोग तैयार होते हैं वैसेही देव कलश द्वारा संसार समुद्र तिरने को खड़े हैं अथवा अपना भाव रूप वृक्ष का सिंचन करने को तैयार होने के माफक दीखते थे इन्द्र ने प्रभु का अनंत बल न जानकर शंका की कि पानी बहुत और प्रभु का शरीर छोटा तो किस तरह वो इतना पानी सहन कर सकेंगे ऐसी अज्ञानता से इन्द्र ने विलम्ब किया, प्रभु ने इसका संशय दूर करने को दाहिनें पैर के अंगूठे से मेरु पर्वत को दबाया जिससे अचल पर्वत धूजने लगा कवि ने वर्णना कि प्रभुके स्पर्श से हर्षित होकर मेरु पर्वत भी (नृत्य) नाचने लगा पर्वत के धूजने के कारण उस पर के वृक्ष और शिलाएं गिरने लगी जिसे देख इन्द्र को भय हुवा कि ऐसे मांगलिक कार्य के समय यह अमंगल सूचक बातें क्यों होती हैं उसने अवधि ज्ञान का उपयोग दिया और सर्व बात को जानकर प्रभू का अतुल बल जानकर क्षमा मांग कर स्नान कराया बाद अन्य इन्द्रों ने भी अभिषेक किया.

कवि घटना.

जिस समय प्रभू के शरीर पर क्षीर सागर का पानी आया तो वह श्वेत छत्र समान दीखता था, मुख पर चन्द्र किरण समान, कंठ में हार समान शरीर पर चीन देश के रेशमी वस्त्र के समान वह कलशों में से निकल कर गिरता हुवा जल दीखता था (वह जगत के जीवों का पाप संताप को शांत करो) सर्व देवता और इन्द्रों के अभिषक करलेने के पश्चात् अच्युतेन्द्र ने प्रभु को गोद में लिये, और शक्रेन्द्र ने चार वृषभ (बैल) के रूप धारण कर आठ सींगों से कलश के समान अभिषेक किया और पीछे शुद्धोदक से स्नान कराकर गंध कषायी (अमूल्य कोमल टुवाल) वस्त्र से शरीर को पूंछा. और गोशीर्ष चंदन से लेप किया, पुष्प से पूजा की मंगल दीपक और आरात्रिक (आरती) कर नृत्य, गीत, वाजित्र बजाकर प्रभु का जन्म महोत्सव किया पीछे प्रभू को रत्न की चौकी पर बिठा कर अष्ट मांगलिक चिन्ह चावल से किये, दर्पण, वर्धमान, कलश, मत्सयुगल ( ) श्री वत्सस्वस्तिक, (सथीया) बनाया और पीछे जिनेश्वर के गुणों की स्तुति की. इत्यादि प्रकार से प्रभु की पूजन तथा गुणगान कर २ प्रभु को पीछा माता के पास लाकर रक्खा और उस प्रतिबिंब को जो प्रभू लेजाने के समय माता के पास रखा था उसको उठाकर और माता की निद्रा दूर कर सिराणे की तरफ कुंडल का जोड़ा और उत्तम रेशमी वस्त्रों का जोड़ा रखा और ऊपर के चंदुवे में श्रीदाम, रत्नदाम, और सुवर्ण का दडा लगाया और बारह क्रोड सुवर्ण मुद्रा की वृष्टि की और फिर इन्द्र महाराजने अपने अभियोगिक देवों द्वारा उदघोषणा कराई (डुंडी पिटाइ) कि जो कोई प्रभू का अथवा उनकी माता का अशुभ कर होगा तो उसके मस्तक के एरंड वृक्ष की भांति ७ टुकडे किये जावेंगे. पीछे प्रभू के अंगूठे में अमृत स्थापन कर इन्द्र सहित देवों का समूह नंदीश्वर द्वीप में गया और वहां आठ दिन का अठाई महोत्सव कर अर्थात् आठ दिन तक जिनेश्वर के पूजन भजन इत्यादि कर अपने २ स्थान को गये.

जं रयणिं च णं समणे भगवं महावीरे जाए तं रयणिं च णं बहवे वेसमणकुंडधारी तिरियजंभगा देवा सिद्धत्थरायभवणंसि हिरगणवासंच सुवगणवासं च वयर वासं च वत्थवासं

च आभरणवासं च पत्तवासं च पुप्फवासं च फलवासं च वीअ-वासं च मल्लवासं च गंधवासं च चुण्णवासं च वण्णवासं च वसुहारवासं च वासिंसु ॥ ६७ ॥

जिस रात्रि में भगवान का जन्म हुवा उस रात्रि को इन्द्र की आज्ञा से कुबेर लोक पाल के कहने से तिर्यक्ज्जभक देवोंने प्रभू के पिता सिद्धार्थ राजा के भवन में हिरण्य, सुवर्ण, हीरा, वस्त्र, आभरण पत्ते, पुष्प, फल वीज माला सुगन्धी चूर्ण वर्ण (रंग) और सुवर्ण मुद्रा इत्यादि उत्तम २ पदार्थों की वृष्टि की (अर्थात् उपयोगी वस्तुओं का ढेर करदिया).

तएणं से सिद्धत्थे खत्तिए भवणवइवाणमंतरजोइसवेमाणिएहिं देवेहिं तित्थयरजम्मणाभिसेयमहिमाए कयाए समाणीए पच्चूसकालसमयंसि नगरगुत्तिए सद्दावेइ सद्दावित्ता एवं वयासी ॥ ६८ ॥

प्रभात के प्रहर में भवन वासी, वैमानिक, इत्यादि देवों का महोत्सव हो जाने वाद प्रभू के जन्म होने के शुभ समाचार सिद्धार्थ राजा को मालुम हुवे तब सिद्धार्थ राजा अत्यन्त प्रसन्न होकर अपने नगर के रक्षक (पुलिस के वड़े अफसर) को बुलाकर इस प्रकार कहने लगा.

(यहां पर विस्तार पूर्वक ग्रंथान्तर से सिद्धार्थ राजा के किये हुवे महोत्सव का वर्णन किया है).

प्रभू के जन्म के शुभ समाचार लेकर सिद्धार्थ राजा के पास प्रियंवदा नाम की दासी वधाई देने को गई तब सिद्धार्थ राजा ने प्रमोद से संतुष्ट होकर मुकुट छोड़ अपने सर्व आभूषण पुरस्कार स्वरूप देदिये और उसको आजन्म के लिये दासीपन दूर किया और अनेक महोत्सव कराये.

खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया ! कुंडपुरे नगरे चारगसोहणं करेह, करित्ता माणुम्माणवद्धणं करेह, माणुम्माणवद्धणं करित्ता कुंडपुरं नगरं सब्भिंतरवाहिरियं आसियसम्मज्जिओव-

लित्तं संघाडगतिगचउक्कचच्चरचउम्मुहमहापहपहेसु सित्तसुइसंमट्ठरत्थंतरावणवीहियं मंचाइमंचकलिअं नाणाविहरागभूसिअज्झयपडागमंडिअं लाउल्लोइयमहिअं गोसीससरसरत्तचंदणदद्दरदिन्नपंचंगुलितलं उवचियचंदणकलसं . चंदणघडसुकयतोरणपडिदुवारदेसभागं आसत्तोसत्तविपुलवट्टवग्घारियमल्लदामकलावं पंचवण्णसरससुरभिमुक्कपुप्फपुंजोवयारकलिअं कालागुरुपवरकुंदुरुक्कतुरुक्कडज्झंतधूवमघमघंतगंधुद्धुआभिरामं सुगंधवरगंधिअं गंधवट्टिभूअं नडनट्टगजल्लमल्लमुट्ठियवेलंबगकहगपाढगलासगआरक्खगलंखमंखतूणइल्लतुंबवीणियअणेगतालायराणुचरिअं करेह कारवेह, करित्ता कारवेत्ता य जूअसहस्सं मुसलसहस्सं च उस्सवेह, उस्सवित्ता मम एयमाणत्तियं पच्चप्पिणेह ॥ ९९ ॥

हे नगर रक्षकों आज आप (मेरे नगर) क्षत्रिय कुंड में जितने कैदी हैं उन सर्व को कैद से मुक्त करे अर्थात् छोड़दें और अनाज़ घी इत्यादि भोजन की वस्तुऐं सस्ती विकें ऐसी आज्ञा देदो (दुकानदारों को कहदो की सस्ती वेचने से जो नुकसान होगा वह राज कोष से पूरा किया जावेगा. और नगर में सर्वत्र सफाई कराके सफेदी कराओ लिपन कराओ और संघाटक, त्रिक, चौक, चच्चर, चतुर्मुख महापथ इत्यादि शहर के भागों में सुगंधी जल का छिटकाव कराओ गंदकी दूर कराओ सर्व गलिएं स्वच्छ कराओ हरेक रास्ते के किनारे पर लोग अच्छी तरह बैठ कर देख सकें इसलिये मांचड़े बंधवाओ और सर्वत्र शोभायुक्त कराओ अनेक जाति के रंगों से रंगी हुई और सिंहादिक उत्तम चित्रों से चित्रित ध्वजा पताकाऐं रस्तों पर लगाओ गोवर से लेपन कराकर खडिया से सफेदी ऐसी कराओ जैसे पूजन के लिये कराया हो. गोशीर्ष चंदन, रक्त चंदन, दर्दर चन्दन से (पहाड़ी) भीतों के उपर छापे लगाओ चंदन कलश पर छांटने छांट कर घरों के चौक में रखाओ और चन्दन छांट कर मट्टी के घड़े रखकर और तोरणें वांधकर घर के दरवाजे शोभायमान वनाओ

लम्बी २ फूलों की मालाएं लटका कर नगर को शोभायमान बनाओ और पृथ्वी पर पांच वर्ण के फूलों के ढेर लगाओ. अगर, कुंदरु, तुरुष्क, इत्यादि वस्तुओं के सुगन्धी धूपों से नगर मघमघायमान सुगन्धी बनाओ श्रेष्ठ सुगन्ध के चूर्णों से सुगंधित करो अर्थात् नगर में ऐसी सुगन्ध आने लगे जैसे नगर सुगन्ध की वड़ी ही है.

खेल का वर्णन.

नाच कराने वाले, नाच करने वाले, डोरी उपर खेल करने वाले, मल्लयुद्ध मुष्टि युद्ध करने वाले, विदुषकों (मश्करों) कूदने वाले, तिरने वाले, कथकें रसिक वार्त्ता कहने वाले, रास लीला करने वाले, कोटवाल (   ) नट, चित्रपट हाथ में. रखकर भिक्षा मांगने वाले, तुणा वजाने वाले, वीणा वजाने वाले, ताली पाडने वाले. ऐसे अनेक प्रकार का रमत गमत से क्षत्रिय कुण्ड नगर को आनंदित करो, कराओ और यह कार्य कराकर हल, मूसल, हजारों की संख्या में चलते हैं वे बन्ध कराओ अर्थात् उनका कार्य निषेध करा कर शांति दो (उसकी त्रुटी राजा से पूरी होगी) ऐसी मेरी आज्ञा है वैसा करके शीघ्र मुझे खबर दो.

तएणं ते कोडुंबियपुरिसा सिद्धत्थेणं रएणा एवंवुत्ता समाणा हट्ठा जाव हिअया करयल–जाव–पडिसुणित्ता खिप्पामेव कुंडपुरे नगरे चारगसोहणं जाव उस्सवित्ता जेणेव सिद्धत्थे राया (खत्तिए) तेणेव उवागच्छंति, उवगच्छित्ता करयल जाव कट्टु सिद्धत्थस्स रएणो एयमाणत्तियं पचप्पिणंति ॥१००॥

उस समय सब बात सुनकर वे पुरुषों नी सिद्धार्थ राजा की आज्ञा शिर पर चढा कर हर्ष से सन्तुष्ट होकर सब जगह जाकर जैसा राजा ने कहा था वैसा करा कर सिद्धार्थ राजा के पास आकर सिद्धार्थ राजा को सब बात सुनाई ।

तएणं से सिद्धत्थे राया जेणेव अट्टणसाला तेणेव उवागच्छइ रत्ता जाव सव्वोरोहेणं सव्वपुप्फगंधवत्थमल्लालंकारविभू-

साए सव्वतुडिअसद्दनिनाएणं महया इड्ढीए महया जुइए महया बलेणं महया वाहणेणं महया समुदएणं महया वरतुडिअजमगसमगपवाइएणं संखपणवभेरिझल्लरिखरमुहिहुडुक्कमुरजमुइंगदुंदुहिनिग्घोसनाइयरवेणं उस्सुक्कं उक्करं उक्किट्ठं अदिज्जं अमिज्जं अभडप्पवेसं अदंडकोदंडिमं अधरिमं गणिआवरनाडइज्जकलियं अणेगतालायराणुचरिअं अणुद्धुअमुइंगं, (ग्रं. ५००) अमिलायमल्लदामं पमुइअक्कीलियसपुरजणजाणवयंदसदिवसं ठिईवडियं करेइ ॥ तएणं से सिद्धत्थे राया दसाहियाए ठिईवडियाए वट्टमाणीए सइए य साहस्सिए य सयसाहस्सिए य जाए य दाए य भाए अ दलमाणे अ दवावेमाणे अ, सइए अ साहस्सिए अ सयसाहस्सिए य लंभे पडिच्छमाणे य पडिच्छावेमाणे य एवं विहरइ ॥ १०१ ॥

उस के बाद राजा अट्टनशाला में गया, जाकर मल्ल कुस्ती वगैरह कर स्नान कर अच्छे वस्त्र पहर कर अपने परिवार साथ, पुष्प वस्त्र गंध, माला अलंकार से शोभित होकर, सब वाजिंत्रों की साथ, वडी ऋद्धि से वडे धुनि से वडी सेना से, वहुत वाहन से, बडे समुदय से, खट् स्वर युक्त वाजिंत्र वाजते, संख प्रणव, भेरी झालर (घडीयाल) खर मुखी. हुडुक. ढोल, मृदंग दुंदुभी के अवाज से शोभायमान राजा ने फिर कर जकात वंद की. कर वंद कीया, और लोगों को सूचना दी कि खाने पीने वा भोजन के लिये जो चीझ चाहे सो प्रसन्न चित्त होकर लो राजा उसका दाम देगा और अमूल्य वस्तुयें भी लो राजे के सीपाई किसी को भीन पीटे ऐसा वंदोवस्त किया दंड शिक्षा कडी केद शिक्षा वंद की और गणिकाओं से नृत्य कराएं वो देखनें को सर्वत्र मनुष्य समूह इकट्टे हुए है और मृदंग वज रहे है खीली हुई विकस्वर मालाएं देख कर नगरवासी जन प्रसन्न होकर इधर उधर फिर कर आनंद क्रीडा करते है ऐसा दशदिवस का महोत्सव कुल मर्यादा से यथाविधि किया।

दश दिवसों में राजा के रिस्तेदारों ने राजा को यथोचित भेट, नजर की

सौ हजार, लाखों की गिनती में लोग वहे पुरुष हे जाते थे और राजा प्रसन्न चित्त होकर पात्रों को देता था और दान दिलाता था और पूजन करता था।

(यहां पर समयानुसार दान का वर्णन)

जिनेश्वर के मंदिरों में अष्ट प्रकारी २१ प्रकारी अष्टोतरी, शांति स्नात्र इत्यादि अनेक प्रकार की पूजाएं कराई क्योंकि सिद्धार्थ राजा पार्श्वनाथ प्रभु का परम श्रावक था।

विद्यार्थीओं की पाठशाला वासस्थान,(बोर्डिंग) पुस्तक का भंडार, अनाथाश्रम, विधवाश्रम. व औषधालय. अपंग पशु स्थान, कन्या विद्यालय श्राविकालय वगैरह उस समय के योग्य प्रजा के हितार्थ जो जो बातों की त्रुटीयें थी वे संपूर्ण की और अपने राज्य में कोई भी दुःखी न रहे ऐसा महोत्सव किया।

तएणं समणस्स भगवओ महावीरस्स अम्मापियरो पढमे दिवसे ठिइवडियं करिंति, तइए दिवसे चंदसूरदंसणिअं करिंति, छट्ठे दिवसे धम्मजागरियं करिंति, इक्कारसमे दिवसे विइक्कंते निव्वत्तिए असुइजम्मकम्मकरणे, संपत्ते वारसाहे दिवसे, विउलं असणपाणखाइमसाइमं उवक्खडाविंति, उवक्खडावित्ता मित्तनाइनियगसयणसंबंधिपरिजणं नाए य खत्तिए अ आमंतित्ता तओ पच्छा राहाया कयबलिकम्मा कयकोउअमंगलपायच्छित्ता सुद्धप्पावेसाइं मंगल्लाइं पवराइं वत्थाइं परिहिया अप्पमहग्घाभरणालंकियसरीरा भोअणवेलाए भोअणमंडवंसि सुहासणवरगया तेणं मित्तनाइनियगसंबंधिपरिजणेणं नायएहिं खत्तिएहिं सद्धिं तं विउलं असणपाणखाइमसाइमं आसाएमाणा विसाएमाणा परिभाएमाणा परिभुंजेमाणा एवं वा विहरंति ॥ १०२ ॥

दश दिवसों का विशेष वर्णन ।

उस वक्त महावीर प्रभु का पिता सिद्धार्थ राजा प्रथम दिन में स्थिति पति

का (कुल मर्यादा) की तीसरे दिन को चंद्र सूर्य का दर्शन कराया।

चंद्र सूर्य की दर्शन विधि।

गृहस्थ गुरु (संस्कार कराने वाला विद्वान् ब्राह्मण अर्हन् देव की प्रतिमा के सामने स्फाटिक रत्न वा चांदी की चंद्र की मूर्ति स्थापन करा के प्रतिष्ठा पूजा करके माता और बालक को स्नान कराके अच्छे वस्त्र पहरा कर चंद्रोदय के समय रात्रि में चंद्र सन्मुख माता पुत्र को बैठा कर ऐसा मंत्र पढे।

उँ चंद्रोसि, निशा करोसि, । नक्षत्र पति रसि, ओषधि गर्भोसि, अस्य कुलस्य ऋद्धि वृद्धि कुरुकुरु ऐसा बोल कर ग्रहस्थ गुरु माता पुत्र को चंद्र के दर्शन करावे औह नमस्कार करावे, पीछे गुरु आशीर्वाद देवे।

सर्वोपधि मित्र मरीचिराजिः सर्वापदां संहरणे प्रवीणः।
करोतु वृद्धिं सकले पिवंशे युष्माक मिंदुः सततं प्रसन्नः (१)

सव औपधि युक्त किरणों का समूह वाला और सब दुःखों को दूर करने में निपुण, कलावान चंद्र निरंतर प्रसन्न होकर आपके वंश की वृद्धि करो।

जो चौदस वा अमावस्या के कारण अथवा बादल से चंद्र दर्शन न हो तो-पूर्व में स्थापन की हुई चंद्र मूर्त्ति के दर्शन करावे पीछे वो मूर्त्ति को विसर्जन करे आज के समय में लोग में आरिसा (आयना) के दर्शन कराते हैं

चंद्र दर्शन बाद सूर्य दर्शन विधि।

दूसरे दिन प्रभात में सूर्योदय के समय. सुवर्ण वा तांबे की सूर्य मूर्त्ति बना कर पूर्व की तरह स्थापन कर ग्रहस्थ गुरु इस तरह मंत्र पढे।

ॐ अर्हं सूर्योसि, दिन करोसि. तमो पहोसि, सहस्र किरणोसि, जगच्च-क्षुरसि, प्रसीद, अस्य कुलस्य तुष्टिं पुष्टिं प्रमोदं कुरु कुरु ऐसा सूर्य मंत्र उच्चार कर माता पुत्र को सूर्य के दर्शन करावे नमस्कार करा कर गुरु आशीर्वाद देवे।

सर्व सुरा सुर वंद्यः कारयिता सर्व धर्म कार्याणाम्।
भूया स्त्रि जगच्चक्षु मंगल दस्ते सपुत्राय (१)

यह श्लोक लौकिक रीति से लिखा दीखता है क्योंकि सब धर्म कार्य कराने वाला तीन जगत् को चक्षु रूप होने पर भी सुरों को सूर्य वंद्य नहीं हो-सक्ता क्योंकि वैमानिक देवों को सुर कहते है उनकी रिद्धि सूर्य से अधिक है इसकी अपेक्षा ज्ञानी गम्य है।

छट्टे दिनको जागरण महोत्सव किया अग्यारवें दिन को सब अशुचि कार्य को दूर कर बारहवे दिनको महावीर प्रभु के माता पिता ने जिमन (दावत) किया.

जिमन में उस समय के अनुसार अशन लड्डु हलवा कलाकंद बरफी खीर दूध पाक भजीए वगैरह अनेक जाति का भोजन. साथमें पीने का अनेक प्रकार का पानी, वा प्रवाही पदार्थ और मेवा द्राक्ष बदाम, पिस्ते, चारोली अनेक जाति के हरेक फल और स्वादिष्ट चूर्ण मसाले तैयार कराएं मंगाके रखे.

रिस्ते दारों को आमंत्रण।

भोजन तैयार होने बाद मित्र न्याति (बिरादरी) निजक (एक कुनबा के) स्वजन और उन सब का परिवार और " ज्ञात " वंशके क्षत्रियों को बुलाए, उन सब के आने पर स्नान कर देव पूजन का अनिष्ट विघ्नों को दूर कर अच्छे वस्त्रों को पहर कर, थोड़े वजन के और बहु मूल्य के आभूषण पहर कर सिद्धार्थ राजा और त्रिशला रानी दोनों ही भोजन के समय में भोजन मंडप में आकर सुखासन उपर बैठे—और जिनों का आमंत्रण दीया था, वे आजाने पर सबके साथ सब पदार्थों को खाये पीते स्वाद लेते (थोडा खाकर विशेष फेंकते शेरड़ी की तरह) खजूर की तरह. अधिक खाते और थोड़ा फेंकते. कितने क पदार्थों को संपूर्ण खाते. और कितनेक पदार्थों स्वादिष्ट देखकर परस्पर देने का आग्रह करते थे अर्थात् मनुष्यों के साथ आनंद से सिद्धार्थ राजा और त्रिशला रानी ने भोजन किया [जैनी वा जैनेतरों में भोजन विधि और उसका स्वाद सर्वत्र प्रसिद्ध होने से विशेष लिखने की आवश्यकता नहीं है]

जिमिअभुत्तुत्तरा गयाविअ णं समणा आयंता चुक्खा परमसुइभूआ तं मित्तनाइनियगसयणसंबंधिपरिजणं नायए खत्तिए य विउलेणं पुप्फगंधवत्थमल्लालंकारेणं सक्कारिंति

संमाणिंति सक्कारित्ता संमाणित्ता तस्सेव मित्तनाइनियगसयण-संबंधिपरियणस्स नायाणं खत्तिआण य पुरओ एवं वयासी ॥ १०३ ॥

जिमन हो जाने बाद सब आसन पर बैठे. और स्वच्छ पानी से मूंह स्वच्छ कर महावीर प्रभु के माता पिता ने मित्र नाति निज क स्वजन परिवार ज्ञात जाति के क्षत्रियों को बहुत से फूल फल गंध माला वस्त्र आभूषण वगैर से सत्कार और सन्मान किया, और उन सब के सामने अपना हार्दिकभाव जो पूर्व में निश्चित् किया था इस प्रकार प्रकट किया.

पुव्विंपि णं देवाणुप्पिया ! अम्हं एयंसि दारगंसि गब्भं वक्कंतंसि समाणंसि इमेयारूवे अब्भत्थिए चिंतिए जाव समुप्पज्जित्था-जप्पभिइं च णं अम्हं एस दारए कुच्छिंसि गब्भत्ताए वक्कंते, तप्पभिइं च णं अम्हे हिरण्णेणं वड्ढामो सुवण्णेणं धणेणं जाव सावइज्जेणं पीइसक्कारेणं अईव २ अभिवड्ढामो, सामंतरायाणो वसमागया य, तं जया णं अम्हं एस दारए जाए भविस्सइ, तया णं अम्हे एयस्स दारगस्स इमं एयाणुरूवं गुण्णं गुणनिप्फन्नं नामधिज्जं करिस्सामो वद्धमाणुत्ति ॥ १०४ ॥

हे हमारे रिस्तेदार स्वजन जाति वर्ग ! जिस समय से यह बालक गर्भ में आया उसी समय से हमें हिरण्य सुवर्ण, धन धान्य राज्यादि सब उत्तमो त्तम वस्तुओं की और प्रीति सत्करार की अधिक वृद्धि होती रही है और सामंत राजा हमारे वंश में आगये.

ता अज्ज अम्ह मणोरहसंपत्ती जाया, तं होउ णं अम्हं कुमारे वद्धमाणे नामेणं ॥ १०५ ॥

उससे हमारे मनमें ऐसा विचार उत्पन्न हुआ कि जब हमारे यह लड़के का

जन्म होगा तो हम उस बालक का नाम उसके गुणानुसार (गुणों को मिलता) नाम वृद्धि करने वाला वर्द्धमान नाम रक्खेंगे. आज हमारी यह अभिलाषा पूर्ण हुई है इसलिये आप लोगों के सामने हम इस बालक का नाम वर्द्धमान रखते हैं.

लोगस्स में भी महावीर प्रभु का नाम वर्द्धमान कहा है.

यथा—पासंतह वद्ध माणंच, पार्श्वनाथ और वर्द्धमान]

समणे भगवं महावीरे कासवगुत्तेणं, तस्स णं तम्रो नानामधिज्जा एवमाहिज्जंति, तंजहा—अम्मापिउसंतिए वद्धमाणे, सहसमुइआए समणे, अयले भयभेरवाणं परीसहोवसग्गाणं खंतिखमे पडिमाण पालगे धीमं अरइरइमहे दविए वीरिअसंपन्ने देवेहिं से नामं कयं 'समणे भगवं महावीरे' ॥ १०६ ॥

श्रमण भगवान् महावीर काश्यप गोत्र के तीन नाम प्रसिद्ध हैं मात पिता का दिया नाम. वर्द्धमान तप करने की शक्ति से दूसरा नाम श्रमण, और भयभीति में अचल और परिसह उपसर्ग (दुःख विघ्न) में धैर्य क्षमा रखने वाले और साधु प्रतिमा (एक जाति के उत्कृष्ठ तप) के पूर्ण पालक धी बुद्धि वाले. रति अरति सहन करने वाले द्रव्य (गुणों का स्थान) पराक्रम वाले, होने से देवों ने नाम रखा, " श्रमण भगवान् महावीर "

भगवान् का वीरतत्व का वर्णन ।

पील पीलोगा (पेडपर कूदने का) खेल

जब प्रभु बालक थे उस समय परभी महान् तेज वाले थे कमल समान नेत्र वाले कमल समान सुगंधी श्वासो च्छ्वास वाले, वज्र ऋषभनाराच संघयण वाले, सम चतुरस्र संस्थान वाले मुंगे समान होठ वाले दाडिम समान दांत वाले तीन ज्ञानके धारक थे प्रभु बहार खेलने को जाते नहीं थे खेलते भी नहीं थे हांसी भी किसी की नहीं करते थे घरमें ही बैठते थे एक समय माता ने पुत्र के भीतर के गुणों से वाकिफ नहीं होने से कहने लगी कि खेलने को भी बाहर जाओ! माता को प्रसन्न करने को योग्य सोबतियों के साथ खेलने गये और पेडपर चडना और कूदने की क्रीड़ा (खेल) करने लगे.

इंद्र ने उस समय वीर प्रभु की प्रशंसा की कि छोटी उम्र में कैसे वीरत्व धारक है ! वो सुन कर एक तुच्छ हृदय वाले मिथ्यात्वी देव को वडा रोष हुआ कि मनुष्य में ऐसी धैर्यता कहां से होसक्ती है ! एक दम परीक्षा करने को वहां से उठा और रूप बदल कर छोटे बच्चे का रूप लेकर लडकों के भीतर खेलने को लग गया पेड पर चडते ही देव ने एक वडा सर्परूप लेकर पेड के आजु बाजु (चो तरफ) लपेट गया दूसरे लडके तो कूद कूद के डरके मारे भागे परन्तु वीर प्रभु ने उस सर्प का मुंह पकड कर एक दम दूर फेंक दिया फिर देवता खेलने लगा और "हारे वो दूसरे को खंधे पर उठावे" ऐसी शरत मे खेलने लगे देवता जान कर हार गया और प्रभु जीत गये मान कर खंधे पर बैठाये और डराने को एक दम वडे पेड जितना उंचा होगया लडके भागे परंतु वीर प्रभु ने ज्ञान का उपयोग कर जान लिया कि यह देव माया है जिससे उसको सीधा करने को दो चार मुक्कीएं मारकर अपना वीर्य वताया देवता भी समझ गया अपना रूप जैसा था वैसा कर बोला हे वीर ! आपकी प्रशंसा जैसी इन्द्र ने की वैसेही आप वीर हैं मैंने कहना नहीं माना परन्तु मार खाकर अनुभव से जान लिया, आप मेरा अपराध क्षमा करे ! ऐसा कहकर प्रभु को मुकुट कुंडल की भेटकर नमस्कार कर देव अपने स्थान को गया माता पिता को वीरत्व की बात और देव की भेट सुनकर वहुत आनन्द हुआ.

माता पिता का पुत्र को विद्यालय में भेजना ।

मात पिता ने सामान्य पुत्र की तरह आठ वरस की उम्र में विद्यालय में भेजने का विचार कर सब तैयारी की ज्ञाति को भोजन देकर वर्द्धमान कुंवर को स्नान कराकर वस्त्राभूषण से अलंकृत कर तिलक कर हाथ में श्रीफल और सुवर्ण मुद्रा देकर हाथी पर वैठाये और पंडित और विद्यार्थिओं को खुश करने को मेवा मिष्टान्न वस्त्राभूषण वगैरह लेकर वाजित्र के और सधवा औरतों के गीत के साथ विद्यालय की तरफ बडी धामधूम से पढाने के लिये लेगए.

इन्द्रने अवधि ज्ञान से इस वात को जान कर विचार किया कि यह भी आश्चर्य है कि तीन लोक के पारगामी प्रभु को भी पढाने को भेजते है ! आमके पेडपर तोरण वांधना सरस्वती को पढाना, अमृत में मीठाश के लिए और चीज डालनी, किंतु मेरा फर्ज है कि प्रभुका अविनय नहीं होने देना ऐसा विचार कर ब्राह्मण का रूप लेकर इन्द्र स्वयं वहां आया और प्रभु को ऐसे प्रश्न पूछे

जो व्याकरण में अधिक कठिन होने से इसकी सिद्धि पंडित भी नहीं कर सका था उसके उत्तर प्रभुने यथोचित दिये. जिन २ बातों की शंकाएं पंडित के मनमें थी उनको इन्द्र ने अवधिज्ञान से जानकर भगवान से पूछा भगवान् ने उन सब के उत्तर भलीभांति से दिये जिन्हें सुनकर पंडित को आश्चर्य हुवा कि ऐसा छोटा बालक विना पढाए कहां से पंडित होगया ? इन्द्र ने पंडित से सब बात कहा कि यह बालक नहीं है त्रिलोकनाथ है, जिसे सुनकर उसने हाथ जोड़ कर अपने अपराध को खमाया और प्रभु को अपना गुरु माना जो प्रश्न पूछे. उसका समाधान प्रभु ने किया यह जिनेन्द्र व्याकरण बना जिसमें १ संज्ञा सूत्र २ परिभाषा सूत्र ३ विधिसूत्र, ४ नियम सूत्र, प्रतिषेध सूत्र, ६ अधिकार सूत्र, ७ अतिदेश सूत्र, ८ अनुवाद सूत्र, ९ विभाषा सूत्र, १० विपाक सूत्र दश अधिकार का सवालाख श्लोक का महान् व्याकरण बना इन्द्र भी ब्राह्मण की सज्जनता से प्रसन्न होकर बहुत द्रव्य देकर चला गया और प्रभु भी अपने घर को चले, मात पिता स्वजन परिवार घर को आने बाद पुत्र की विद्वता से अधिक संतुष्ट होगये और योग्य उम्र में (युवावस्था में) शुभ मुहूर्त्त में बड़े उत्सव से नरवीर सामंत की यशोदा नाम की पुत्री की महावीर प्रभु के साथ स्यादी की और उस रानी से प्रिय दर्शनों नामकी एक पुत्री हुई जिसकी महावीर प्रभु के बहिन के लड़के जमाली के साथ स्यादी हुई.

समणस्स णं भगवओ महावीरस्स पिआ कासवगुत्तेणं, तस्स णं तओ नामधिज्जा एवमाहिज्जंति, तंजहा–सिद्धत्थे इ वा, सिज्जंसे इ वा, जसंसे इ वा ॥ समणस्स णं भगवओ महावीरस्स माया वासिट्ठी गुत्तेणं, तीसे तओ नामधिज्जा एवमाहिज्जंति, तंजहा–तिसला इ वा, विदेहदिन्ना इ वा, पिअकारिणी इ वा ॥ समणस्स णं भगवओ महावीरस्स पितिज्जे सुपासे, जिट्ठे भाया नंदिवद्धणे, भगिणी सुदंसणा, भारिया जसोआ कोडिन्ना गुत्तेणं ॥ समणस्स णं भगवओ महावीरस्स धूआ कासवी गुत्तेणं, तीसे दो नामधिज्जा एवमाहिज्जंति, तंजहा–अणोज्जा इ वा, पियदंसणा इ वा ॥ सम-

एस्स एं भगवओ महावीरस्स नत्तुई कोसिअ (कासव) गुत्तेणं, तीसेणंदुवे नामधिज्जा एवमाहिज्जंति, तंजहा–सेसवईइ वा, जसवईई वा ॥ १०७ ॥

भगवान महावीर पिता काश्यप गोत्र के थे जिन के तीन नाम थे.

सिद्धार्थ, श्रेयांस, यशस्वी, भगवान की माता वाशिष्ठ गोत्र की थी, उसके भी तीन नाम थे. त्रिशला विदेहदिन्ना, प्रीति कारिणी, भगवान महावीर का काका सुपार्श्व, भगवान महावीर का बडा भाई नंदिवर्द्धन, बेन सुदर्शनाथी, और स्त्री यशोदा कोडिन गोत्र की थी.

भगवान महावीर को एक पुत्री थी जिसके दो नाम थे. अणोज्जा, प्रियदर्शना.

महावीर प्रभु की एक दोहित्री कोशिक गोत्र की थी उसके दो नाम शेषवती, यशस्वती.

समणे भगवं महावीरे दक्खे दक्खपइन्ने पडिरूवे आलीणे भद्दए विणीए नाए नायपुत्ते नायकुलचंदे विदेहे विदेहादिन्ने विदेहजच्चे विदेहसूमाले तीसं वासाइं विदेहंसि कट्टु अम्मापिउहिं देवत्तगएहिं गुरुमत्तरएहिं अब्भणुन्नाए समत्तपइन्ने पुणरवि लोगंतिएहिं जीअकप्पिएहिं देवेहिं ताहिं इट्ठाहिं कंताहिं पिआहिं मणुन्नाहिं मणामाहिं उरालाहिं कल्लाणाहिं सिवाहिं धन्नाहिं मंगल्लाहिं मिअमहुरसस्सिरीआहिं हिययगमणिज्जाहिं हिययपल्हायणिज्जाहिं गंभीराहिं अपुणरुत्ताहिं वग्गूहिं अणवरग अभिनंदमाणा य अभिथुव्वमाणा य एवं वयासी ॥१०८॥

महावीर प्रभु दक्ष (सब कला में प्रवीण) दक्ष प्रतिज्ञा वाले (जो बोले सो पाले) प्रतिरूप (सुन्दर रूप वाले) आलीन (सब गुणों से व्याप्त) भद्रक (सरल) विणीत (बड़ों की इज्जत करने वाले) ज्ञात (प्रख्यात) ज्ञातपुत्र (सिद्धार्थ राजा के पुत्र) ज्ञात कुल में चंद्र समान, विदेह (वज्र रूषभ नाराच संघयण, समचतुरस्र स्थान वाले) विदेह दिन्न (त्रिशला रानी के पुत्र) विदेह

जाये (त्रिशला देवी से उत्पन्न होने वाले) विदेहसुकुमाल (घर में ही सुकोमल) ऐसे प्रभु घर में तीस वर्ष तक रहे. मात पिता के स्वर्गवास के बाद बड़े भाई की आज्ञानुसार और अपनी प्रतिज्ञा पूरी होने बाद लोकांतिक देवों ने आकर ऐसे मधुर वचनों से कहा कि:-

" जय २ नंदा !, जय २ भद्दा ! भद्दं ते, जय २ खत्तिअवरवसहा ! बुज्झाहि भगवं लोगनाहा ! सयलजगज्जीवहियं पवत्तेहि धम्मतित्थं, हियसुहनिस्सेयसकरं सव्वलोए सव्वजीवाणं भविस्सइत्तिकट्टु जयजयसद्दं पउंजंति ॥ १०९ ॥

हे समृद्धिवंत ! आप जयवंतावर्त्तो २ हे कल्याणवंत ! आप जयवंतावर्त्तो हे क्षत्रियों में श्रेष्ठ वृषभ समान ! हे भगवन् आप दीक्षा लो ! हे लोकनाथ भगवन् ! आप केवल ज्ञान पाकर सकल जंतु हितकारक धर्मतीर्थ प्रकट करो ! आपका स्थापित धर्म तीर्थ सब जीवों को हितकारी, सुखकारी और मोक्ष का देने वाला होगा इसलिये आपकी निरंतर जय हो. ऐसा हम प्रकट कहते हैं.

पहिले भी महावीर प्रभु का ग्रहस्थावास में उत्तम विशाल और स्थायी ऐसा अवधि ज्ञान और अवधि दर्शन था, उस उत्तम अवधि ज्ञान का उपयोग देकर अपना दीक्षा समय जान लिया था.

प्रभु का उस बारे में कुछ बयान.

२८ वर्ष की उम्र महावीर प्रभु की हुई उस समय प्रभु के माता पिता इस संसार को छोड़ देवलोक में गये प्रभु का अभिग्रह (गर्भ में जो प्रतिज्ञा कीथी कि मैं मात पिता के मृत्यु बाद दीक्षा लूंगा) पूर्ण हुआ और दीक्षा लेने को तैयार हुए माता पिता की मृत्यु से बड़े भाई को खेद हुआ था जिससे नंदिवर्धन ने कहा कि हे बंधो ! घाव के उपर नमक का पानी नहीं डालना चाहिये अर्थात् मात पिता के वियोग से मैं दुःखी हूं ऐसे समय में आपको मुझे छोड़ कर नहीं जाना चाहिये. प्रभु ने कहा कि संसार में कोई किसी का नहीं है नंदीवर्धन ने कहा कि मैं वह जानता हूं तो भी बन्धु प्रेम छूटता नहीं है इसलिये इस समय दीक्षा न लो, प्रभु ने करुणा लाकर साधु भाव हृदय में रखकर उसका

कहना मान लिया परन्तु उस समय से निरवद्य आहारादि से ही अपना निर्वाह करना और ब्रह्मचर्य पालन करना प्रारम्भ किया.

प्रभु की दीक्षा का निश्चय जानकर कितनेक राजा उन प्रभु के जन्म समय से १४ स्वप्न सूचित गर्भ होने से चक्रवर्ती राजा होंगे तो हमारी सेवा का लाभ पीछे बहुत मिलेगा इस हेतु से सेवा करते थे वे सब श्रेणिक चेड़ा महाराजा चंद प्रद्योतन वगैरह अपने देश को चले गये. एक वर्ष पहिले अर्थात् भगवान की २९ वर्ष की उम्र हुई तब लोकांतिक देवने आकर जय जय नंदा जय जय भद्दा कहकर प्रार्थना की प्रभु भी अब दीक्षा लेने के पहिले १ वर्ष से तैयारी करने लगे.

दीक्षा पहिले दान.

दीक्षा को अवसर विचार कर हिरण्य छोड़कर सुवर्ण धन राज्य देश सेना वाहन कोश धन धान्य के भंडार सबकी मूर्छा ममत्व छोड़ नगर अंतःपुर (राणी परिवार) नगर ग्रामवासी लोगों का मोह छोड़ बहुत धन सुवर्ण रत्न मणि शंख शिला प्रवाल (मुंगीये) रक्त रत्न (माणिक) वगैरह सब मोहक वस्तुओं का मोह छोड़कर सर्वथा संसारी निंदनीय मोह ममत्व छोड़ याचक और गोत्र बन्धुओं को सर्व बांट दिया.

देवों की सहाय से दान.

सूर्योदय से लेकर १। प्रहर ३॥। घंटे तक तीर्थंकर प्रभु दान देवे नगर की शेरी और रास्ते पर उद्घोषणा (डोंडी) पिटा कर सब लोगों को सूचन करे कि इच्छित दान लेजाओ.

प्रतिदिन १ करोड आठ लाख सुवर्ण मुद्रा का दान देवे उस के साथ वस्त्र आभूषण मणि मोती मेवा मिठाई का भी दान देवे. जितना दान देवे और नया देने को चाहिये वो निरंतर इन्द्र अपने देवों द्वारा प्रभु के भंडारों में भर देवे.

तीर्थंकरों के दान का अतिशय ।

(१) प्रभु दान देते खेद न माने अर्थात् देने में श्रम 'न' माने, देते ही रहवे (२) इशान इन्द्र देवता को दान लेते रोके और मनुष्य को हद से ज्यादा मांगते रोके (३) चमरेंद्र जितनी मुंह से मांगे उतनी सुवर्णमुद्रा निकाल कर देवे (४) भुवनपति देवता लोगों को दान लेने को ले आवे (५) व्यंतर

देवता दान लेने वालों को अपने घर पहुंचावे (६) ज्योतिषी देव विद्याधरों को दान लेजाने की खबर देवे.

नंदिवर्धन राजा ने भी बंधु प्रेम से तीन दानशालाएं प्रारम्भ की.

(१) अन्नदान कोई भी लेजाओ, (२) वस्त्र लेजाओ प्रभु के दान समय इन्द्रों ने सहाय कर सेवा की उसका फल उनको यह होवे कि वे आपस में दो वर्ष तक परस्पर क्लेश न करे राजा अपने भंडार में दान की सुवर्ण मुद्रा रखें तो चार वर्ष तक यशः कीर्त्ति बढे रोगी के रोग चले जावे दान लेने वालों को १२ वर्ष तक रोग न होवे ३६० दिन तक ऐसा दान देने से ३८८ क्रोड़ ८० लाख सुवर्णमुद्रा का प्रभु ने दान दिया.

पुव्विंपि णं समणस्स भगवओ महावीरस्स माणुस्सगाओ गिहत्थधम्माओ अणुत्तरे आभोइए अप्पडिवाई नाणदंसणे हुत्था, तएणं समणे भगवं महावीरे तेणं अणुत्तरेणं आभोइएणं नाणदंसणेणं अप्पणो निक्खमणकालं आभोएइ, आभोइत्ता चिच्चा हिरण्णं, चिच्चा सुवण्णं, चिच्चा धणं, चिच्चा रज्जं, चिच्चा रट्ठं, एवं वलं वाहणं कोसं कुट्ठागारं, चिच्चा पुरं चिच्चा अंतेउरं, चिच्चा जणवयं, चिच्चा विपुलधणकणगरयणमणिमुत्तियसंखसिलप्पवालरत्तरयणमाइयं संतसारसावइज्जं, विच्छड्डइत्ता, विगोवइत्ता, दाणं दायारेहिं परिभाइत्ता दाणं दाइयाणं परिभाइत्ता ॥ ११० ॥

दीक्षा की तैयारी ।

बड़े भाई की आज्ञा ले प्रभु दीक्षा लेने को जब तैयार हुए तब इन्द्र और नंदिवर्धन दोनों दीक्षा की महिमा करने लगे प्रभु को सिंहासन पर बैठा स्नान कराकर बावना चन्दन का लेप कर मुकुट कुण्डल वगैरह पहरावे, पीछे ५० धनुष्य लम्बी २५ धनुष्य चौड़ी, ३६ धनुष्य उंची, बीच में सिंहासन और १००० पुरुष को उठाने योग्य ऐसी चंद्रप्रभा नामकी पालखी जो नंदिवर्धन ने

तैयार कराई थी इन्द्र और नंदिवर्धन दोनों मिलकर उस पालखी की शोभा बढाते उसमें पूर्व दिशा सन्मुख महावीर प्रभु सिंहासन पर आकर बैठे तब इन्द्र और नंदिवर्धन वगैरह मिलकर पालखी को उठाई कोई देवता छत्र धरने लगे सधवा स्त्रिएं मंगल गीत गाने लगी भाट चारण जय जय नाद विरुदावलि बोलने लगे सब प्रकार के वाजित्र बजने लगे, नाटारंभ होने लगे इन्द्र ध्वजा आगे चलने लगी, देवता आकाश में से फूल वृष्टि करने लगे, उग्रकुल क्षत्रिय कुल के पुरुष सेठ सेनापति, सार्थवाह वगैरह श्रेष्ठ नगरवासी अपनी भक्ति से आगे-चलकर जय जय शब्द करने लगे और सब चलते चलते नगर के मध्य भाग में होकर चलने लगे नगरवासिनी स्त्रियें अपना घर कार्य छोड़कर जलसा देखने को आगई.

प्रभु की शांत मुद्रा अनुपम रूप अनुपम महिमा अनुपम तेज अनुपम कांति देखकर स्त्रियें यथायोग्य सत्कार पूजन बहुमान गुणमान करने लगी कोई अपने विशाल नेत्रों से प्रभु की शांत मुद्रा देखने लगी कोई प्रफुल्लित हृदय से मोती से प्रभु को बधाये, नेत्र मुख शरीर सब के स्थिर होगये थे कोई स्त्री दोड़ती हुई जाती थी और मुग्धता से घेना गिर जावे तो भी कोई नहीं उठाता था स्त्रिओं को क्लेश काजल कुंकुम, वाजित्र, जमाई दुधये छः वस्तु प्रिय होने से वाजित्र के नाद से ही मुग्ध होकर विचित्र चेष्टाएं करती थी तो भी यहां पर कोई हास्य नहीं करता था सब प्रभु तरफ ही देखते थे.

तेणं कालेणं तेणं समएणं समणे भगवं महावीरे जे से हेमंताणं पढमे मासे पढमे पक्खे मग्गासिरबहुले, तस्स णं मग्गसिरबहुलस्स दसमीपक्खेणं पाईणगामिणीए छायाए पोरसीए अभिनिवट्टाए पमाणपत्ताए सुव्वणएणं दिवसेणं विजएणं मुहुत्तेणं चंदप्पभाए सीआए सदेवमणुआसुराए परिसाए समणुगम्ममाणमग्गे संखियचक्कियनंगलिअमुहमंगलियवद्धमाणपूसमाणघंटियगणेहिं, ताहिं इट्ठाहिं कंताहिं पियाहिं मणुन्नाहिं मणामाहिं उरालहिं कल्लाणाहिं सिवाहिं धन्नाहिं मंग-

गल्लाहिं मिअमहुरसस्मिरीआहिं वग्गूहिं अभिनंदमाणा अभिथुव्वमाणा य एवं वयासी ॥ १११ ॥

प्रभु का दीक्षा समय ।

दीक्षा के समय प्रभु तैयार हुए वो हेमन्त ऋतु पहिला मास पहला पक्ष मागसीर्ष वदी १० के रोज पूर्व दिशा में छाया जाती थी उस समय तीसरे पहर में प्रमाण युक्त पोरसी होने पर अर्थात् पूर्ण तीसरे प्रहर में सुव्रत नामका दिन, विजय मुहूर्त में चन्द्रप्रभा शिविका (पालखी) में बैठकर देव दानव मनुष्य समूह के साथ चले उस समय शंख बजाने वाले, चक्र आयुध धरने वाले, लांगूल (हल जैसा) शस्त्र धारन करने वाले, खंधे उपर आदमी को बैठाने वाले, मुख से मंगल शब्द बोलने वाले बिरुदावली बोलने वाले घंटी बजाने वाले और भी अनेक पुरुष आगे और पीछे चलकर जिनकी भक्ति सेवा करते हैं वैसे भगवान् दीक्षा लेने को जाते हैं लोग भी भक्ति सूचक मधुर वचनों से कहते हैं.

" जय २ नंदा ! जय २ भद्दा !, भद्दं ते खत्तियवरवसहा ! अभग्गेहिं नाणदंसणचरित्तेहिं, अजियाइं जिणाहि इंदियाइं, जिअं च पालेहिं समणधम्मं, जियविग्घोवि य वसाहि तं देव ! सिद्धिमज्झे, निहणाहि रागद्दोसमल्ले तवेणं धिइधणिअबद्ध-कच्छे, मद्दाहि अट्ठकम्मसत्तू झाणेणं उत्तमेणं सुक्केणं, अप्प-मत्तो हराहि आराहणपडागं च वीर ! तेलुक्करंगमज्झे, पावय वितिमिरमणुत्तरं केवलवरनाणं, गच्छ य मुक्खं परं पयं जि-णवरोवइट्ठेणं मग्गेणं अकुडिलेणं हंता परीसहचमूं, जय २ खत्तिअवरवसहा ! बहुइं दिवसाइं बहूइं पक्खाइं बहूइं मासाइं बहूइं उऊइं बहूइं अयणाइं बहूइं संवच्छराइं, अभीए परीसहोवस-ग्गाणं, खंतिखमे, भयभेरवाणं, धम्मे ते अविग्घं भवउ " त्ति-कट्टु जयजयसद्दं पउंजंति ॥ ११२ ॥

जय जय नंदा, जय जय भद्दा, अखंडित ज्ञान दर्शन चारित्र से अजित इंद्रियों को कब्जे में लेकर श्रमण धर्म पालकर विघ्न को दूरकर हे देव ! सिद्धि स्थान प्राप्त करो. तपश्चर्या से राग द्वेष दो मल्लों को नाश करो धैर्य संतोष से कमर बांधकर श्रेष्ठ शुक्ल (निर्मल) ध्यान से आठ कर्म रूपी शत्रु का मर्दन करो हे वीर ! कार्य कुशल होकर तीन लोक रूप मंडप में आराधना रूपी जील की ध्वजा को प्राप्त करो, हे भगवन् ज्ञान स्वरूप जो प्रकाश है वो सम्पूर्ण केवलज्ञान अनुपम है उसको प्राप्त करो ! हे प्रभो ! आप परिषह सेना को जीतकर पूर्व जिनेश्वरों ने कहा हुआ सीधा मार्ग से मोक्ष नामका परमपद को प्राप्त करो.

क्षत्रियों में हे उत्तम पुरुष ! आपकी निरंतर जय हो २

काल का आश्रय लेकर कहते हैं हे प्रभो ! बहुत दिन तक, पक्ष तक, मास तक, ऋतु तक, अयन तक, वरसों तक, परिसह उपसर्ग (दुःख विघ्नों) से निर्भय होकर सिंह विजली वगैरह के भयों से निडर होकर क्षमा धैर्य से दुःखको सहन कर जयवंतारहो ! आपका चारित्रधर्म विघ्न रहित हो. ऐसा शब्द बोलकर फिर से कुल वृद्ध (बड़े पुरुष) जय जय नाद करने लगे.

तएणं समणे भगवं महावीरे नयणमालासहस्सेहिं पिच्छिज्जमाणे २, वयणमालासहस्सेहिं अभिथुव्वमाणे २, हिययमालासहस्सेहिं उन्नंदिज्जमाणे २, मणोरहमालासहस्सेहिं विच्छिप्पमाणे २. कंतिरूवगुणेहिं पत्थिज्जमाणे २, अंगुलिमालासहस्सेहिं दाइज्जमाणे २. दहिणहत्थेणं बहूणं नरनारीसहस्साणं अंजलिमालासहस्साइं पडिच्छमाणे २. भवणपंतिसहस्साइं समइच्छमाणे तंतीतलतालतुडियगीयवाइअरवेणं महुरेण य मणहरेणं जयजयसद्दघोसमीसिएणं मंजुमंजुणा घोसेण य पडिबुज्झमाणे २ सव्विड्ढीए सव्वजुईए सव्वबलेणं सव्ववाहणेणं सव्वसमुदएणं सव्वायरेणं सव्वविभूईए सव्वविभूसाए सव्वसंभमेणं सव्वसंगमेणं सव्वपगईहिं सव्वनाडएहिं सव्वतालायरेहिं

सव्वोरोहेणं सव्वपुप्फगंधमल्लालंकारविभूसाए सव्वतुडियसद्द-सन्निनाएणं महया इड्ढीए महया जुइए महया बलेणं महया वाहणेणं महया समुदएणं महया वरतुडियजमगसमगप्पवाइ-एणं संखपणवपडहभेरिझल्लरिखरमुहिहुडुक्कदुंदुहिनिग्घोसनाइयरवेणं कुंडपुरं नगरं मज्झंमज्झेणं निग्गच्छइ, निग्गच्छित्ता जेणेव नायसंडवणे उज्जाणे जेणेव असोगवरपायवे तेणेव उवागच्छइ ॥ ११३ ॥

दीक्षार्थ भगवान का उद्यान में जाना.

वीर प्रभु हजारों आंखों से देखाते हजारों मुखों से स्तुति कराते, हजारों हृदयो से जय जय नाद के अवाज प्रकट कराते हजारों मनुष्यों से "सेवक होने की प्रार्थना" कराते कांति रूप गुणों से प्रार्थना कराते, हजारों अंगुलिओं से "यह भगवान है" ऐसा उच्चार कराते दाहिणा हाथ से हजारों स्त्री पुरुषों से जो नमस्कार होना था उसको स्वीकारते शहर के भीतर हजारों हवेलियों (उत्तम मकान) का उल्लंघन कर तंत्री तल ताल त्रुटित वगैरह वाजित्रों का नाद गीत और मधुर जय जय शब्द से त्रिलोकनाथ जयवंता रहो आप धर्म को प्राप्त करो इत्यादि वचनों से प्रेरणा कराते महावीर प्रभु आभूषण की सर्व द्युति से सब प्रकार की संपत्ति से, सब प्रकार की सेना वाहन से महाजन मंडल से युक्त सब प्रकार के सन्मान युक्त सब विभूति सब प्रकार की शोभा से युक्त सब प्रकार का हर्ष उत्साह से युक्त सब स्वजनों से युक्त नगर में रहती हुई अटारह जाति के साथ सब नाटकों से युक्त, तालाचर, अंतःपुर, परिवार से युक्त सब प्रकार के फूल, गंध, माला अलंकार से विभूषित, सब वाजिंत्रों से आकाश गुंजावते बहुत रिद्धि बहुत द्युति, कांति, सेना, वाहन, समुदय, सब प्रकार के वाजित्र समूह शंख पटह भेरी झालर झांझ डुडुक नौबत नगरह से अवाज होना और फिर उस का प्रतिध्वनि से गाजना इस तरह सब महोत्सव आनन्द पूर्वक प्रभु क्षत्रिय कुंड नगर का मध्य भाग में होकर बजार में से निकलकर जहां पर ज्ञात वन खंड नाम का उद्यान है वहां आकर अशोक वृक्ष के नीचे ठहरने का होने से प्रभु वहां खड़े रहे.

उवागच्छित्ता असोगवरपायवस्स अहे सीयं ठावेइ, ठा-
वित्ता सीयाओ पच्चोरुहइ, पच्चोरुहित्ता सयमेव आभरणमल्ला-
लंकारं ओमुअइ, ओमुइत्ता सयमेव पंचमुट्ठियं लोअं करेइ,
करित्ता छट्ठेणं भत्तेणं अपाणएणं हत्थुत्तराहिं नक्खत्तेणं जोग-
मुवागएणं एगं देवदूसमादाय एगं अबीए मुंडे भवित्ता अ-
गाराओ अणगारिअं पव्वइए ॥ ११४ ॥

भगवान पालखी में से निकल और अपने हाथ से सब वस्त्र आभूपणों को उतार और पंच मुठी से लोच करे लोच करके चन्द्र नक्षत्र उत्तरा फाल्गुनी का योग आने पर जिन्होंने दो उपवास (छठ, वैला) चौविहार (विना पानी) करके इन्द्रने दिया हुआ देव दूष्य वस्त्र को ग्रहण कर अकेले राग द्वेप रहित होकर ग्रहवास से निकल कर अनगार (साधु) हुए भीतर के क्रोधादि और बाहार के वालों को दूर कर मुंड हुए जब भगवान् ने लोच किया और साधु हुए तव करेमि भंते उच्चरे उस समय इन्द्र वाजिंत्र और अवाज दूर कराकर सब शांति चित्त से डरा श्रवण करे.

महावीर प्रभु भी स्वयं अरिहंत होने से नमो सिद्धाणं कहकर भंते शब्द छोड़ कर करेमि सामाइअं सावज्जं जोगंपच्चक्खामि. वगैरह सर्व विरति का पाठ पढे स्वयं भगवान (भंते) होने से भंते शब्द न वोले.

करेमि सामाइअं सावज्जं जोगं पच्चक्खामि जावजीवाए तिविहंतिविहेणं मणेणं वायाए काएणं न करेमि न कारवेमितस्स पडिक्कमामि निंदामि गरिहामि अप्पाणं वोसिरामि.

अर्थात् प्रभुने प्रतिज्ञा की कि मैं आज से जीवित पर्यंत मन वचन काया से कोई. भी जाति का पाप न करूंगा न कराउंगा न करने वालों को भला जानुंगा छद्मस्थ अवस्था में यदि जरा भी अतिचार लगा तो उससे पीछा हट कर उसकी निंदा गर्हा कर आत्म ध्यान में ही रहकर शरीरादि मोह को छोडूंगा दीक्षा विधि पूरी होने से प्रभु को चौथा ज्ञान मन पर्यव उत्पन्न हुआ, इन्द्रादि

देव नमस्कार कर उनके कल्पानुसार नंदीश्वर द्वीप में जाकर अठाई महोत्सव कर पीछे अपने स्थान को गये.

पंचम व्याख्यान समाप्त हुआ.

छठा व्याख्यान ।

भगवान महावीर को वंदन कर सब अपने स्थान को गए परन्तु चिर परिचित निरन्तर साथ रहने वाला नंदिवर्धन बन्धु कुछ प्रेम से कुछ भक्ति से कुछ दुःख से रोते रोते कहने लगा हे बन्धो ! जगत्वत्सल ! आप जीवमात्र के हितस्वी होने से मेरा दुःख का भी कभी खयाल करना ! मैं किस तरह से घर को जाउं ? किसके साथ "बंधो" कहकर बात करूंगा ? किस के साथ भोजन करूंगा ! जो कुछ मेरा आश्रय गुणों का निधान सर्व प्रिय आप थे वो चले जाते हो तो भी हे करुणानिधान ! यह बंधु का कुछ भी करुणा जनक दुःख हृदय में लाकर बोध के उद्देश से भी दर्शन देना मैं रोकने को असमर्थ हूं !

वीतराग प्रभु सब जानते थे संसार की भ्रमता का ज्ञान था इसलिये 'हाना' कुछ भी उत्तर दिये विनाही चले नंदिवर्धन दृष्टि पहुंचे और दर्शन होवे वहां तक खड़ा रहा पीछे वो भी निस्तेज मुद्रा से पीछा लौटा !

महावीर प्रभु की दीक्षा के समय अनेक जाति के सुगंधी से लेप किये थे वो सुगंध चार मास तक रही थी वो सुगंधी से आकर्षित होकर भंवरे दंश देने लगे लोग उत्तम सुगंधी की याचना करते और मौन देखकर प्रभु को मारने को भी तैयार होते थे तो भी राग द्वेष को दूरकर प्रभु विहार करते दो घड़ी दिन बाकी रहा उस समय "कुमार" नाम के गांव नजदीक आकर ध्यान में खड़े रहे.

प्रभु की दीक्षा में धीरता ।

प्रभु कायोत्सर्ग में खड़े थे उस समय एक गोवाल सारा दिन खेत में बैलों से काम लेकर प्रभु को बैल सौंपकर घर को गायों दोहने को गया प्रभु मौन थे बैल चरने को दूर चले गये और गायों को दोहकर गोवाल आया बैल को नहीं देखकर प्रभु को पूछा प्रभु ने उत्तर नहीं दिया वो चला गया रातभर बैल को ढूंढे तो भी मिले नहीं थककर पीछा आया तो प्रभु के पास बैल खड़े देख

कर गोवाल ने विचारा कि यह कोई ऐसा पुरुष है कि जो जानता था तो भी मुझे कहा नहीं उसको शिक्षा करूं ऐसा दृढ विचार कर बैल की रस्सी से प्रभु को मारने को दौड़ा प्रभु तो शांतही थे अवधिज्ञान से इन्द्र ने वो बात जानकर एकदम आकर गोवाल को शिक्षाकर रोक दिया गोवाल चला गया.

पीछे प्रभु को इन्द्र कहने लगा हे प्रभो ! आप को बहुत उपसर्ग होने वाले हैं इसलिये वहां तक में आपके साथ रहकर आपकी रक्षा करूं प्रभु ने कहा कि दूसरे की सहाय से तीर्थंकर कभी केवलज्ञान प्राप्त नहीं कर सक्ते परन्तु देवेन्द्र वगैरह की सहाय विनाही तीर्थंकर अपने पराक्रम से केवलज्ञान प्राप्त करते हैं तो भी इन्द्र ने मरणांत उपसर्ग दूर करने को सिद्धार्थ नाम के व्यंतर जो पूर्व की अवस्था में प्रभु महावीर की मौसी का लड़का था उसको रक्षा के लिये रखकर देवेंद्र अपने स्थान को गया.

प्रभु का प्रथम पारणा (भोजन)

दीक्षा लेने के बाद प्रभु ने कोलाग सन्निवेश (सदर वा कैंप) में बहुल ब्राह्मण के घर को दूध पाक से ग्रहस्थ के पात्र में ही भोजन किया (इससे यह सूचन किया कि मेरे बाद साधु कर पात्री नहीं परन्तु काष्ठ पात्र में भोजन करने वाले होंगे) गोचरी (भोजन) होने के समय तीर्थंकर की महिमा बढाने को पांच दिव्य प्रकट किये फूल वृष्टि, वस्त्र वृष्टि, सुगंधी जल वृष्टि देव दुंदुभी और यह उत्तम दान है ऐसी उद्घोषणा (गौर से आवाज) हुई.

तीर्थंकर जहां पारणा (व्रत के पश्चात भोजन) करते हैं वहां देवता प्रसन्न होकर साढे बारह क्रोड सोनैया (सुवर्ण मुद्रा) की वृष्टि करता है दान देने वाले को लाभ और प्रभु की महिमा होती है और अन्य मनुष्यों को धर्म श्रद्धा होती है कि यह कोई महात्मा पुरुष है यदि कम वृष्टि करे तो कम से कम भी साढे बारह लाख सुवर्ण मुद्रा की वृष्टि करें.

वहां से विहार कर प्रभु मोराक सन्निवेश में आये, दुइजंत नामका तापस जो सिद्धार्थ राजा का मित्र था वो वहां पर तापसों का कुलपति (नायक) होकर रहता था, उस से प्रभु पूर्व के अभ्यास से दोनों हाथ चौड़े कर अंगो अंग मिले. वहां से रवाने होने के समय तापसों के नायक की विज्ञप्ति होने से प्रभु निरागी होने पर भी चोमासे पर वहां आने का मंजुर कर विहार किया, इस-

लिये आठ मास फिर कर वर्षा ऋतु में वहां आये. कुलपति ने एक घास का झोंपड़ा निवास करने को दिया घास के अभाव में और जगह पर घास नहीं मिलने से गायें वहां आकर झोंपड़े का घास खाने लगी कुलपति को वो बात मालुम होने पर उसने आकर वीर प्रभु को कहा कि हे महावीर ! क्षत्रि पुत्र होकर राज्य पालना तो दूर रहा ! क्या एक झोंपड़े की भी रक्षा करने की तेरी शक्ति नहीं है ? पक्षी भी अपने घोंसले की रक्षा करते हैं ऐसे वचनों से प्रभु ने विचारा कि मैं तो जीव दया की खातर पशु को हटाता नहीं, पर उसको व्यर्थ क्लेश होता है, ऐसा क्लेश फिर न-हो ऐसा निश्चय कर चोमासा के पंदरह दिन व्यतीत होने बाद प्रभुने विहार किया और पांच अभिग्रह (प्रतिज्ञा) किये.

(१) जहां अप्रीति होवे उसके घर में ठहरना नहीं, (२) हमेशा प्रतिमा (तप विशेष) धारी रहना, (३) ग्रहस्थों का विनय नहीं करना, (४) मौन रहना, (५) हाथ में ही भोजन करना.

महावीर प्रभु ने एक वर्ष और एक मास से कुछ अधिक समय तक वस्त्र धारण किया उसके बाद वस्त्र रहित (अचेलक) रहे उनके पुण्य तेज के प्रभाव से दूसरों को नग्न नहीं दीखते थे न कोई को उनसे ग्लानि होती थी.

प्रभु का देव दूष्य वस्त्र का दूर होना.

प्रभुने दीक्षा ली उसके एक वर्ष एक मास से कुछ अधिक समय बाद वे विहार करते दक्षिण वाचाल्य नाम के गांव की तरफ जहां सुवर्ण वालु का नदी बहती थी वहां पर आने के समय कांटे की वाड में वस्त्र लगा और कांटे से लगकर वस्त्र गिरपड़ा वह प्रभुने सिंहावलोकन से देखा कि वह वस्त्र निर्दोष जगह में पड़ा है कि नहीं ? किंतु त्याग वृत्ति से पीछा ग्रहण नहीं किया वह दान लेने की इच्छा से प्रभु के पीछे फिरने वाले ब्राह्मण ने उठा लिया.

उस ब्राह्मण की कथा.

प्रभुने जब दीक्षा के पहिले दान दिया उस समय वह ब्राह्मण विदेश में था, पीछे आया तो उसकी स्त्रीने कहा कि प्रभुने जिस समय दान दिया उस समय तूं विदेश चला गया अब क्या खावेंगे ? इसलिये प्रभु के पास जाओ कुछ तो अब भी वे देवेंगे. ब्राह्मण पीछे से आकर प्रार्थना करने लगा प्रभु के

पास तो वस्त्र के सिवाय कुछ न था आधा वस्त्र फाड़ के दिया ब्राह्मण ने शरम से दूसरा आधा मांगा नहीं, जब कांटे पर लगा कि उठा लिया वो देख दुष्य आखा मिलने से सवा लाख स्वर्ण मुद्रा का मालिक हुआ. दीक्षा से एक मास वाद आधा मिला और एक वर्ष पीछे फिरने से दूसरा आधा मिला. (आधा वस्त्र ही प्रभु ने प्रथम क्यों दिया उसके कारण आचार्य अनेक वताते हैं कि प्रभु ने ब्राह्मण कुक्षि में जन्म लिया वह कृपण वृत्ति सूचन की. कोई कहते हैं कि मेरी संतति (शिष्य समुदाय) मेरे बाद कपड़े पर मूर्छा रखने वाली होगी) वाद संतुष्ट होकर ब्राह्मण चला गया.

प्रभु के शुभ लक्षण पर इन्द्र की भक्ति.

प्रभु जब विहार कर गंगा के किनारे पर आये वहां कोमल सुक्ष्म रेती में और कीचड़ में प्रभु जमीन पर पैरों की श्रेणी में छत्र ध्वजा अंकुश वगैरह उत्तम लक्षण देखकर एक ज्योतिषी विचारने लगा कि यह चिन्ह वाला चक्रवर्ति होगा अभी कोई कारण से एकिला फिरता है उस की सेवा करने से लाभ होगा ऐसा विचार कर पीछे पीछे आया प्रभुको भिक्षुक अवस्था में देखकर अपना जोतिष जूठा मानकर शास्त्रो को उठाकर गंगामें डालने को चला ईन्द्रने वो बात जानकर एकदम आकर कहा कि तेरा ज्योतिष सच्चा है ये भिक्षुक नहीं है ईंद्रों को भी पूज्य है थोड़े रोज में केवल ज्ञान पाकर तीन लोक में पूज्य होंगे आज भी उनका शरीर पसीना मल और रोग से मुक्त है श्वासो श्वास सुगंधि है रुधिर मांस सफेद है ऐसा कह कर ईंद्रने पुष्प नामका ज्योतिषी को प्रसन्न करने को मणिकुंडल वगैरह धन देकर खुश किया ईंद्र और पुष्प सामुद्रिक दोनों अपने स्थान को गये, प्रभुजी समभाव रखकर दूसरे स्थान को चलेगये.

समणे भगवं महावीरे संवच्छरं साहियं मासं जाव चीवरधारी होत्था. तेण परं अचेलए पाणिपडिग्गहिए ॥ समणे भगवं महावीरे साइरेगाइं दुवालस वासाइं निच्चं वोसट्ठकाए चियत्तदेहे जे केइ उवसग्गा उप्पज्जंति, तंजहा—दिव्वा वा माणुसा वा तिरिक्खजोणिआ वा, अणुलोमा वा पडिलोमा वा,

ते उप्पन्ने सम्मं सहइ खमइ तितिक्खइ अहियासइ ॥ ११५ ॥

श्रमण भगवान महावीर का दीक्षा का छद्मस्त काल ।

महावीर प्रभु साडा बारह वरस से कुछ अधिक छद्मस्त अवस्था में रहे उस समय में निरन्तर शरीर की सुश्रुषा ममत्व भाव छोड़कर देवता मनुष्य तिर्यंच पशु (वगैरह) की तरफ से जो उपसर्ग (पीडा) होता था वो सब उन्होंने सम्यक् प्रकार से सहन किया.

(जैनधर्म में ऐसी मान्यता है कि जीवने जो पूर्वकाल में कृत्य किये उसका फल वर्तमान काल में भोगना है भोगने के समय में चाहे अनुकूल उपसर्ग चंदन का लेप कोई करे अथवा प्रतिकूल चाहे शरीर में कांटा भोंके तो भी हर्ष शोक नहीं करना समभाव रखने से ही केवलज्ञान और मुक्ति होती है.)

महावीर प्रभु ने अनुकूल प्रतिकूल उपसर्ग कैसे सहन किये हैं वो लिखते हैं.

(१) प्रभु का पहिला चौमासा मोराक सन्निवेश से निकलकर शुल पाणी यक्ष के चैत्य में हुआ.

शुलपाणी की उत्पत्ति ।

धनदेव नामका कोई व्यापारी ५०० गाड़ी के साथ नदी उतरता था सब गाडीएं कीचड़ और रेती में से नहीं निकल सकी और बैलों में ताकत नहीं होने से एक बैल जो बड़ा तेजदार उत्साही था उसने मालिक की कृतज्ञता हृदय में रखकर पांच सौ गाडीएं एक २ कर बहार निकाली मालिक की कार्य सिद्धि हुई । परन्तु बैल की हड्डीए टूटगई उसको वहां ही छोड़ना पड़ा किन्तु पोषण रक्षण के लिये नजदीक में वर्धमान (वर्द्धवान बंगाल में है) गांव के नेताओं को बुलाकर बैल और धन अर्पण किया नेताओं ने खबर नहीं ली बैल भूख से मरा परन्तु शुभ ध्यान से देव हुआ वो व्यंतरदेव ने पूर्वभव का हाल देखकर क्रोधायमान होकर वर्धमान गांव में मरकी का रोग फैलाकर बहुत से आदमी ओं को मारे मुर्दे उठाने वाले नहीं मिलने से (हड्डी) अस्थियों का ढेर हुआ गांव का नाम भी अस्थिक होगया लोगों ने डरकर देव को प्रसन्न कर पूछा उसने अपना मंदिर बनाने को कहा और लोग भी अपनी रक्षा के लिये पूजने

लगे किन्तु उस मंदिर में रातवासी कोई रहवे तो जच उसको मार डालता था प्रभु ने उसको बोध देने को शूलपाणी जच के मंदिर में लोगों ने ना कही तो भी रात्रि में निवास किया जच ने रात्रि में बहुत गुस्सा लाकर देवमाया से भयंकर रूप हास्य जनक रूप देखाकर त्रास दिया तो भी प्रभुने अपना ध्यान न छोड़ा तव ज्यादा गुस्सा लाकर मस्तक नाक कान आंख वगैरह कोमल भागों में पीडाकर ने लगा तो भी प्रभु को निष्कंप देखकर शूलपाणी ज्यादा ज्यादा दुःख देने लगा अंत में वो थका तव सिद्धार्थ व्यंतर आकर कहने लगा है निभार्गी पुण्यहीन ! तू किसको सताता है डराता है ? मालूम नहीं ! वो इंद्र को भी पूज्य है। इन्द्र तेरी मिट्टी खराब करदेगा। ऐसा सुनकर शूलपाणी घबराकर प्रभु के चरणों में पड़ा चमा चाही और उनको प्रसन्न करने को नाटक करने लगा किन्तु प्रभुने पूर्व में वा पीछे द्वेष वा राग न किया (इसलिये प्रभु का चरित्र प्रत्येक मुमुक्षु मोक्षाभिलाषी भव्यात्मा को अधिक आदरणीय है)

चार प्रहर इस तरह दुःख में निकाले किंतु थोड़ी रात रही कि जच प्रयत्न होकर सेवा करता रहा उस समय प्रभु को अल्प निंद्रा आई आर उसमें उनको दश स्वप्न देखे देखते ही जागृत हुए गांव के लोग भी जच का चमत्कार देखने को आए जच को प्रभु की सेवा करता देखकर लोग भी सेवा करने लगे नमस्कार करने लगे उन लोगों में उत्पल, इंद्र शर्मा, नाम के दो भाई ज्योतसी थे उन्होंने आकर प्रणाम कर उत्पल बोला कि हे प्रभो आपने आज दश स्वप्न देखे उसका फल आप जानते है मैं भी कहता हूं।

दश स्वप्नों का फल।

(१) आपने प्रथम स्वप्न में ताड़ (जितना वड़ा) पिशाच का नाश किया उससे आप मोहनीय कर्म (मोह) का नाश करोगे.

(२) सेवा करने वाला शुक्ल पत्ती देखा उससे आप शुक्ल ध्यान (निर्मल आत्म तत्त्व) को धारण करोगे.

(३) सेवा करने वाला कोयल पक्षी देखा उससे आप द्वादशांगी (आचारादि बारह अङ्ग सिद्धांत) का अर्थ विषय प्ररूपणा करोगे.

(४) सेवा करने वाली गायों का समूह देखा उससे आपकी सेवा साधु साध्वी श्रावक श्राविका रूप चतुर्विध संघ करेगा.

(५) स्वप्न में आप समुद्र तरें हैं उससे आप भव समुद्र तरोगे.

(६) आपने उदयभान (उगता) सूर्य को देखा जिससे आप केवलज्ञान प्राप्त करोगे.

(७) आपने उदर के आंतरडों (   ) से मानुषोत्तर पर्वत को लपेटा है जिससे आपकी कीर्त्ति तीन भुवन में होगी.

(८) आप मेरु पर्वत के शिखर पर चढे उससे आप समवसरणमें सिंहासन पर बैठकर देव मनुष्यों की सभा में धर्म कहोगे.

(९) आपने देवों से सुशोभित पद्मसरोवर देखा उससे आपकी सेवा भुवनपति, व्यंतर, ज्योतिषी, वैमानिक देव करेंगे.

(१०) परंतु आपने दो मालाएं देखी उसका फल मैं नहीं जानता आप ही कहे.

प्रभुने उसको कहा हे उत्पल ! मैं दो प्रकार (साधु और ग्रहस्थों) का सर्व विरति देश विरति धर्म कहूंगा उत्पल और दूसरे लोग वो सुनकर अपने स्थान गये प्रभुने भी चतुर्मास निर्वाह किया.

प्रभु पीछे विहार करके मोराक सन्निवेश तरफ गये वहां प्रभु जब प्रतिमा धारी कार्योत्सर्ग में स्थिर रहे तब प्रभु की महिमा बढाने का सिद्धार्थ व्यंतर निमित्त (भविष्य की बातें) कहने लगा. अछेदक नाम के निमित्तिया को द्वेष उत्पन्न हुआ और तृण हाथ में पकड़ कर कहा उस के टूकड़े होंगे वा नहीं ? व्यंतर ने ना कही वो जूठ करने को अछेदक ने तृण छेदने की तैयारी की इन्द्र ने ऐसी उसकी उन्मत्तताई देख कर अंगुली छेदडी सिद्धार्थ व्यंतर ने भी क्रोधायमान होकर लोगों के सामने देवमाया से चमत्कार बताकर उसपर कलंक आरोपण कर तिरस्कार कराया जिससे अछेदक गभराकर प्रभु के चरणों में पड़ा वीर प्रभुने उसका दुःख देखकर वहां से विहार करा रास्ते में कनक खल तापस के आश्रम में चंड कौशिक सर्प को प्रति बोध किया.

चंड कौशिक की कथा ।

एक महान् तपस्वी साधु ने पारणा के दिन रास्ते में प्रमाद से एक छोटा मेंढक अंजान वा प्रमाद से मारा था वो साथ का छोटा साधुने उस वक्त गोचरी

करने की (खाने की) वक्त और संध्या प्रतिक्रमण में याद कराया कि उसका दंड लो परन्तु उसने दंड लिया नहीं साधु पर रात को क्रोधकर मारने को दोड़ा बीच में स्तंभ आया उससे टक्कर खाकर मर ज्योतिषी देव हुआ, और वहां से चव (मर) कर उसी आश्रम में ५०० तापसों का अधिपति चंड कौशिक नाम का हुआ, और आश्रम में फल लेने को आने वाले राज कुमारों पर क्रोधी हो कर कुलाडा लेकर मारने को दोड़ा बीच में कुवा आया खबर नहीं रहने से उसमें गिरकर मरा और उसी आश्रम में दृष्टि विष सर्प हुआ और चंड कौशिक नाम से प्रसिद्ध हुआ.

सर्प को प्रभु का आना देखकर बड़ा क्रोध हुआ क्योंकि उसके डर से कोई भी मनुष्य वा प्राणी जलने के भय से आता नहीं था, प्रभु आकर कायोत्सर्ग ध्यान में मेरु पर्वत समान स्थिर खड़े थे तो भी गुस्सा लाकर पूर्व स्वभाव से प्रभु को जलाने को दृष्टि द्वारा सूर्य की तरफ देखकर ज्वाला फेंकने लगा परन्तु प्रभु के तेज के सामने उसकी दृष्टि का कुछ भी जोर न चला तब चर्णों में जाकर दंश किया और पिछा हटा पुनः पुनः दंश मारने पर भी प्रभु न मरे न क्रोध किया और जब लाल लोहू के बदल दूध समान लोहू निकला तब सर्प का क्रोध कुछ शांत हुआ कोमल भाव होने पर प्रभु ने बोध दिया कि हे चंड कौशिक ! कुछ समझ समझ, पूर्व में क्रोधकर तैंने कैसी बुरी अवस्था प्राप्त की है ! तब प्रभु की शांत मुद्रा पर्वत समान धैर्यता अमृत समान वचनों से अपूर्व शांति प्राप्त करते ही उसने निर्मल हृदय से विचार किया कि तुर्त जाति स्मरण ज्ञान हुआ और अपनी अधम दशा देखकर " मैंने यह क्या दुष्ट चेष्टा की तो भी प्रभु ने मेरा उद्धार किया ", ऐसा विचार कर प्रभु को नमस्कार तीन प्रदक्षिणा द्वारा कर प्रभु की आज्ञानुसार अनशन कर क्रोध रहित होकर दर में मुखकर पड़ा रहा, मार्ग में जाने वाली महीआरियों ने दूध दही घी से पूजा की वो चीकट से कीड़िओं ने आकर उसका शरीर चालणी समान काटकर कर दिया किंतु प्रभु ने शांत सुधारस का सिंचनकर स्थिर चित्तरखा, वो मरकर आठमे देवलोक (सहस्रार) में देव हुआ प्रभु भी उसका उद्धार कर विहार कर दूसरी जगह गये.

उत्तर वाचाल गांव में नागसेन ने प्रभु को पारणा में चीरान्न दिया वहां से प्रभु श्वेतांबी नगरी में गये पूर्व में केशी गणधर ने प्रति बोधित प्रदेशी राजा ने वहां प्रभु की महिमा बढ़ाया.

प्रदेशी राजा की कथा ।

(श्वेताम्बी नगरी में प्रदेशी राजा परलोक प्रत्यक्ष नहीं देखने से पुण्य पाप स्वर्ग नर्क नहीं मानता था और जो कोई जीव भिन्न बनाता तो विचारे मनुष्यों को संदूक में बंद कर मारता था और कहता था कि जीव कहां है। जो जीव होता तो क्यों नहीं दीखता और जीव नहीं है तो फिर पुण्य पाप पीछे को न भोगेगा, इत्यादि प्रश्न द्वारा सब धर्म कृत्य उड़ाकर स्वेच्छानुसार चलता था, उसके चित्र सारथी ने दूसरे गांव मे केशी गणधर जो पार्श्वनाथ प्रभु के शिष्य परम्परा में थे, उनका अपूर्व उपदेश से बोध पाकर विनती की कि यदि आप हमारे यहां आवोगे तो हमारा राजा सुधरेगा केशी गणधर भी समय मिलने पर वहां गए और चित्र सारथी ने उद्यान में ठहरा कर राजा को फिरने के बहाने ले जाकर प्रतिबोध कराया केशी गणधर महाराज चार ज्ञान धारक होने से राजा के प्रश्नों का समाधान कर लौकिक दृष्टांत द्वारा लोकोत्तर जीव और पुण्य पाप की सिद्धि की और परम आस्तिक जैनी राजा बनाया उसका विशेष अधिकार राज प्रश्निय (रायपसेणी)* सूत्र उपांग से जान लेना) प्रभु को वहां से सुरभिपुर जाते समय रास्ते में पांच रथों से युक्त नैयक गोत्र वाले राजाओं ने वंदना की.

गङ्गा नदी में उतरते विघ्न ।

भगवान जब सुरभिपुर तरफ आथे रास्ते में सिद्धपात्र नाविक की नाव में गंगा नदी उतरने को प्रभु बैठे उस नाव में सोमिल नामके ज्योतिषी ने शकून देखकर कहा कि आज मरणांत कष्ट होगा परन्तु इस (प्रभु) महात्मा के पुण्य से बचेंगे वो बात होने बाद जब नाव चली आधे रस्ते पानी में सुदृष्ट नामके देवने नाव बुडाने के लिये प्रयास किया क्योंकि वो सुदृष्ट देव पूर्व भवों में जब सिंह था तब त्रिपृष्ट वासुदेव के भव में वीर प्रभु ने उसको मारा था वो वैर याद लाकर जब देव नाव डुबाने लगा तब कंबल संबल नाम के दो नागकुमार देवों ने विघ्न दूरकर नाव बचाली.

कंबल संबल देवों की उत्पत्ति ।

---

* रायपसेणी सूत्र थोड़े समय में हिन्दी भाषान्तर के साथ छपने वाला है विद्याप्रेमी जैन वा जैनेतर इस ग्रंथ के ग्राहक होवें उसकी किंमत प्राय: १।। रहेगी.

मथुरा नगरी में साधु दासी जिनदास नाम के दो स्त्री पुरुष (पति पत्नी) थे श्रावक के पंचम स्थूल परिग्रह परिमाण व्रत में चोपगे (गौ बैल वगैरह) न रखने की प्रतिज्ञा की थी एक दूधवाली रोज नियमित अच्छा दूध योग्य दाम से देती थी जिससे दोनों को परस्पर प्रीति होगई साधु दासी ने प्रसन्न होकर उसके घर की श्यादी (लग्न) मे योग्य वस्तुएं वापरने को दी । विवाह की शोभा होने से दो छोटे बैल लाकर शेठाणी को दिये उन्होंने नहीं रखे परन्तु वो बल जबरी से रखकर चली गई शेठाणी ने उसको रखकर धर्म सुनाया जिससे बैल तप भी करने लगे जिससे दोनों बैल भाई माफिक प्यारे लगे.

एक वक्त मेले के समय में अच्छे बैल को देखकर जिनदास का मित्र विना पूछे उठाकर लेगया और भांडिर वन के यत्त की यात्रा में खूब भगाये बैलों को अभ्यास न होने से उनकी हड्डियें टूटगई रात को घर लाकर बांध दिये जिनदास को बड़ा दुःख हुआ परन्तु और उपाय न होने से नवकार मंत्र से आराधना कराकर धर्म संबल दिया वे दोनों नागकुमार देव हुएं । धर्म भक्त हो कर ज्ञान से जानकर धर्मनायक वीरप्रभु की सेवा कर नाव बचाली सुदंष्ट्र देव भागा दो देव पुष्प वृष्टि वगैरह से प्रभु की महिमा कर चले गये.

प्रभु वहां से विहार कर राजग्रही नगरी में आये और नालंदा पाडा में एक शालवी (कपड़ा बुनने वाला) की जगह में एक मास रहे वहां गौशाला मिला.

गौशाला की उत्पत्ति ।

मंख नामका एक ब्राह्मण था उसकी सुभद्रा नामकी स्त्री थी वो गौ बहुल ब्राह्मण की गौशाला में रहता था वहां पुत्र जन्म होने से पुत्र का नाम गौशाला हुआ प्रभु के एक मास के उपवास के पारणा में विजय शेठ के घर को देवों ने पंच दिव्य से प्रभु का महिमा किया था वो देखकर गौशाला प्रभु को बोला कि मैं आज से आपका शिष्य हूं.

प्रभु का दूसरा पारणा नंद शेठने पक्वान्न से कराया, तीसरा पारणा सुनंद शेठने परमान्न से कराया चोथे मास के उपवास का पारणा कोलाग सन्निवेश में बहुल नाम के ब्राह्मण ने दूध पाक से कराया वहां भी देवोंने पंच दिव्य से महिमा किया.

पूर्व स्थान में गोशाले की चेष्टाएं.

प्रभु को न देखने से पीछे ढूंढता ढूंढता अपनी पूर्व भिक्षा के उपकरण छोड़ कर मुख मस्तक मुंडाकर कोलाग सन्निवेश में स्वयं शिष्य होकर साथ रहा. प्रभु जब सुवर्ण खल गांव को गये. रास्ते में दूध वाले एक बड़े मट्टी के बरतन में दूध पाक बनाते थे वो देखकर गोशाला बोला भोजन कर पीछे जावेंगे सिद्धार्थ व्यंतरने कहा वो बरतन फूटकर दूध पाक तैयार न मिलेगा दूधवालों ने वो बात जानकर रक्षा की तो भी बरतन फूट गया वो देखकर गोशाला ने निश्चय किया कि जो होने वाला है वो होता ही है ।

प्रभु वहां से विहार कर ब्राह्मण गांव में गये वहां पर नंद और उपनंद दो भाई थे वे दोनों अलग रहते थे नंद के वहां प्रभु ने पारणा किया गोशाला उप नंद के घर से बासी अन्न मिला जिससे गुस्सा लाकर श्राप से उसका घर जला दिया प्रभु वहां से चंपा नगरी गये दो मास के दो वक्त तप कर तीसरा चतुर्मास पूरा किया.

वहां से प्रभु विहार कर कोल्लाग सन्निवेश में गए उजाड़ घर में कार्यो-त्सर्ग में रहे. गोशाला भी साथ था उसने वहां पर एक सिंह नामक जागीरदार के पुत्र ने विद्युन्मति नाम की दासी के साथ अंधेरे में छुपा संबंध किया. वो देख कर हंसने लगा गोशाला पर क्रोध कर वो मारने लगा. गोशाला बुम पाड़ने लगा तब छोड़ा । गोशाला को सिद्धार्थ व्यंतर ने हित शिक्षा दी कि ऐसे समय में साधुओं को उपेक्षा करनी योग्य है गंभीरता रखनी हांसी नहीं करनी । सब जीव कर्मवश अनाचार भी करते हैं. प्रभु वहां से पातालक गांव में गए वहां उजाड़ घर में ध्यान में खड़े थे वहां स्कंद नामका युवक को दासी साथ एकांत में दुराचार करता देख के गोशाला ने हांसी की और उसको मार खाना पड़ा प्रभु वहां से विहार कर कुमार सन्निवेश में चंपा रमणीय उद्यान में कार्यो-त्सर्ग (ध्यान) में रहे.

पार्श्वनाथ के साधूओं का गोशाले से मिलाप.

मुनि चन्द्र नाम के मुनि बहुत साधूओं के परिवार के साथ विहार करते आये उनको देखकर पूछा आप कौन हैं । वे बोले हम निर्ग्रंथ हैं गोशाला बोला-

आप मेरे गुरु समान नहीं। जिस से कोई साधुने कहा कि जैसा तूं है ऐसा तेरा गुरु भी होगा। गोशाला ने गुस्सा लाकर कहा कि जहां तुम ठहरे हो वो कुंभार का आश्रम जल जाओ वे बोले हमें डर नहीं ऐसा सुनकर चला गया सब बातें प्रभु को सुनाई सिद्धार्थ व्यंतर बोला कि वे साधू हैं साधूओं का आश्रम तेरे श्राप से नहीं जलेगा रात के समय मुनिचन्द्रजी ध्यान मे खड़े थे अंजान में कोई कुंभार ने चोर जानकर उन पर प्रहार किया मरने के समय शुभ भाव से अवधि ज्ञान उत्पन्न हुआ उसकी महिमा करने को देव आये वो प्रकाश देखकर गोशाला बोला देखो पार्श्वनाथ के साधूओं का आश्रम जलता है. सिद्धार्थ ने सत्य बात कही वो गोशाला को असत्य मालूम होने लगी जिससे वहां जाकर देखने लगा और साधूओं की महिमा देखकर और कुछ नहीं कर सका जिससे तिरस्कार कर पीछा लोटा.

प्रभु वहां से विहार कर चोरागांव गए रास्ते में राज्य पुरुषों ने प्रभु को गुप्त बात जानने वाला व पर राज्य का दूत समझकर कैद में डालने का विचार किया, इतने में सोमा, जयंती, नामकी दो साध्वीएं जो उत्पल निमित्तिया की बैनें थी वे चारित्र संयम में असमर्थ होकर परिव्राजिका (बावी) बनी थी उन्होंने सत्य बात कहकर बचाये, प्रभुने पीछे भद्द चंपा में जाकर चोमासी तप कर चोमासा पूरा किया (चौथा चौमासा).

प्रभु पीछे विहार कर कायंगल नामके सनिवेश में गये पीछे श्रावस्ती नगरी में जाकर बहार उद्यान में ध्यान में रहे.

गोशाला का मृत मांस भक्षण !

पितृदत्त नाम का एक वणिक था, उसके बच्चे जन्मते ही मर जाते थे तब ज्योतिषी को पूछने पर कहा कि यदि साधु को मृत पुत्र का मांस दूध पाक में मिलाकर खिलाया जावे तो जीता रहवे मूर्ख माता ने निर्लज्ज होकर वैसा ही किया सिद्धार्थ व्यंतर से आज मांस खाना पड़ेगा ऐसा जानकर गोशाला और घर छोड़ कर भाग्यवान वणिक के घर को शुद्ध आहार निमित्त आया परन्तु वो ही दूध पाक मिला वो लाकर खाया सिद्धार्थ ने कहा तैने मांस ही खाया गोशाला बोला नहीं मैंने दूध पाक खाया, गोशाला ने वमन कर निश्चय करलिया पीछा

आकर श्राप देने लगा, मालिक ने श्राप के भय से घर का दरवाजा बदल दिया था उससे गोशाले को घर मिला नहीं उससे अधिक गुस्सा में आकर गली में जितने घर थे वे श्राप देकर जला दिये.

प्रभु वहां से विहार कर हरिद्र सन्निवेश में आये और हरिद्र वृक्ष के नीचे ध्यान में खड़े रहे. मार्ग में पंथीओं ने अग्नि जलाई आगने बढकर प्रभु का पांव जलाया तो भी प्रभु वहां से हटे नहीं गोशाला अग्नि देखने ही भगा, प्रभु पीछे मंगला गांव में वासुदेव के मंदिर में ध्यान में खड़े रहे वहां पर गोशाला छोटे बच्चों को आंख टेडी करके डराने लगा. बालकों के रोने से मा बापों ने आकर मुनि का रुप देखकर गोशाला को कहा कि यह मुनि पिशाच है ऐसा कहकर छोड दिया प्रभु ने पीछे आवर्त गांव में जाकर बलदेव के मंदिर में ध्यान किया वहां पर गोशाला ने मुख टेडा कर बच्चों को डराये, लोगों को गुस्सा आया किन्तु उसको पागल कहकर छोड़ दिया किन्तु उसके गुरु को मारे कि फिर ऐसा दुष्ट शिष्य न रखे ऐसा विचार कर प्रभु को मारने को आये बलदेव की मूर्ति देवाधिष्ठित होकर हाथ चोड़ा कर हल से प्रभु को बचाये, प्रभु वहां से चोराक सन्निवेश में गये. वहां कोई मंडप में भोजन होता था वो देखने को गोशाला नीचा होकर देखने लगा चोर की भांति से उसको मारा गोशाला ने क्रोधी होकर मंडप को श्राप से जला दिया.

पीछे प्रभु कलंबुक नाम के सन्निवेश में गए वहां पर मेघ और काल हस्ती दो भाई थे, काल हस्ति अनजान होने से प्रभु को दुःख देना शुरु किया मेघ ने प्रभु को पिछान लिये और प्रभु को छुड़ाये और क्षमा मांगली. प्रभु वहां से अधिक कठिन कर्मों को काटने के लिये लाट देश में गये वहां पर बहुत दुःख पाये, किन्तु प्रभु का चित्त निश्चल था वहां से अनार्य क्षेत्र में गये रास्ते में दो अनार्य ने अपशुकन की बुद्धि से मारने को दोड़े इन्द्र ने आकर प्रभु को बचाये और गुस्सा लाकर दोनों के प्राण लिये प्रभु ने भद्रिका मे चोमासा किया (पांचवां चोमासा) वहां से प्रभु विहार कर नगर बहार पारणा कर तंबाल गांव को गये पार्श्वनाथ के नंदिषेण नामक शिष्य सह आकर कायोत्सर्ग में रहे थे उन के साधूओं के साथ भी गोशाला ने पूर्व की तरह अनुचित्त वर्त्तन किया था भेद इतना ही था कि यहां पर दरोगा (आरक्षक) के पुत्र ने भालों से चोर

की भांति से मुनि को मारे थे वे मरने के समय अवधि ज्ञान को शुभ भाव से पाकर स्वर्ग में गये प्रभु वहां से कुपिल सन्निवेश को गये. आरक्षक (कोटवाल) ने चोर की बुद्धि से प्रभु को पकड़े परन्तु पार्श्वनाथ की साध्वियें जो बावी बनगई थी उन विजया प्रगलभा ने पिछानकर समझाकर छुड़ा दिये ऐसा देखकर गोशाला प्रभु से अलग होगया किन्तु अशुभ कर्म से रास्ते में ५०० चोरों ने उसको बहुत कष्ट दिया.

जिससे फिर प्रभु के पास ही रहने का विचार कर प्रभु को ढूंढने लगा परन्तु प्रभु तो वैशाली नगरी में जाकर लुहार की जगह में ध्यान में खड़े रहे थे, लुहार पहले बीमार था और दूसरी जगह गया था वहां से अच्छा होकर आया तब प्रभु को देखकर अपशकुन की शंका से क्रोधायमान होकर बेगुनाह प्रभु को मारने को घण लेकर आया इन्द्र को ज्ञात होजाने से उसी समय आकर लुहार को रोक कर दंड दिया वहां से प्रभु ग्रामाक सन्निवेश में गए वहां पर बिभेलक यक्ष ने प्रभु का महिमा किया पीछे प्रभुजी शालिशीर्ष गांव के उद्यान में माघ मास में कार्योत्सर्ग में रहे थे वहां पर त्रिपृष्ट वासुदेव के भव में एक अपमान की हुई रानी मर के भ्रमण करती हुई व्यंतरी हुई थी उसने पूर्व भव का वैर याद करके प्रभु को दुःख देने को तापसी का वेश लेकर जटा में शीतल जल भर कर प्रभु उपर छांटा जाड़े की ठंडी में ठंडा पाणी वज्र प्रहार समान होता है जो दूसरा सहन नहीं कर सक्ता और प्रभु ने समभाव से सहन किये जिससे वैर छोड़कर व्यंतरी स्तुति करने लगी प्रभु ने कष्ट के समय भी दो उपवास का नियम न छोड़ा जिससे निर्मल भाव से लोकावधि ज्ञान (जिससे रूपी द्रव्य जो लोक में है वो सब देखे) उत्पन्न हुआ.

प्रभु वहां से विहार कर भद्रिका नगरी में आकर छठा चोमासा में चार मास का तप वगैरह विविध अभिग्रहों से दुष्ट कर्मों को दूर किये.

छे मास बाद गोशाला फिर मिला गांव बहार पारणा कर आठ मास तक मगध देश में विना उपसर्ग विहार किया वहां से प्रभु ने विहार कर सातवा चोमासा आलंभिका नगरी में चतुर्मासी तप से पूर्ण किया गांव बहार प्रभु ने पारणा कर प्रभु कुंडग सन्निवेश में गए और वासुदेव के मंदिर में कार्योत्सर्ग

किया गोशाला ने वासुदेव तरफ पीठ की लोगों ने ऐसा देखकर उसको मारा वहां से मर्दन गांव में बलदेव के मंदिर में ध्यान किया गोशाला ने गुप्त भाग मूर्ति तरफ किया लोगों ने गुस्सा लाकर फिर मारा मुनि का रूप जानकर छोड़ दिया.

प्रभु वहां से विहार कर उन्नाग सन्निवेश में गए रास्ते में दांत जिसके मुंह के बहार निकले थे ऐसे स्त्री पुरुष का जोड़ा देखकर हांसी की कि देखो! कि ब्रह्माजी ने ढूंढ कर कैसी (दंतुर) जोड़ी मिलाई है! ऐसा कटु वचन सुनकर उन्होंने इसी समय गोशाले को पीटकर हाथ पांव बांधकर बांस की झाड़ी (कुंज) में फेंक दिया किंतु प्रभु का छत्रधर मानकर जान से नहीं मारा और छोड़ दिया. वहां से प्रभु गो भूमि गये, और राजग्रही को जाकर आठवां चोमासा चौमासी तप (चार मास के उपवास) से पूर्ण किया.

दो मास विहार कर चोमासा की योग्य जगह न मिलने से अनियत वास कर नवमा चौमासा पूर्ण किया.

पीछे रास्ते में कुर्म गांव तरफ जाते गोशाला ने प्रभू को पूछा कि यह तिल का पौधा में तिल होंगे वा नहीं प्रभु ने कहा कि होगा गोशाला ने प्रभु का वचन जूठा करने को उठाकर एक जगह पर रखदिया प्रभु का वचन सच्चा करने को व्यंतर देव ने वृष्टि की गौ की खुरी लगने से वो पोदा खड़ा भी हो गया और पुष्पों के जीव एक ही फली में तिल होगये.

प्रभु वहां से विहार कर कुर्म गांव में गये, वहां पर वैश्यायन तापस ने आतापना लेने को माथे की जटा (बालों का समूह) खुला रखी थी जुएं जमीन पर गिरती थी उसकी दया की खातिर उसको उठाकर फिर जटा में रखता था गोशाला ने उसको युका शय्यातर (जुएं का घर) वारम्वार कह कर हांसी करने लगा तापस को गुस्सा आया उसने तेजुलेश्या गोशाले पर छोड़दी वो जलने लगा गोशाला का रुदन सुनकर दयासागर प्रभु ने शीतलेश्या छोड़कर बचाया गोशाला बच गया और रास्ते में प्रभु से पूछा हे प्रभो! तेजुलेश्या क्या वस्तु है कैसे प्राप्त होती है प्रभु ने बताया कि इस तरह तप करने से होती है निरन्तर छठ (दो उपवास) और पारणा में एक मुठी भर उड़द उसके उपर तीन चुलु पानी गरम पानी और सूर्य सामने खड़े रहकर

ध्यान करना छे मास में वो सिद्ध होती है गोशाला की कार्य सिद्धि इच्छित होगई और सिद्धार्थपुर तरफ जाने के समय रास्ते में प्रभु को पूछा कि पूर्व का तिलका पौधा देखो कि उगा है वा नहीं प्रभु ने कहा उगा है गोशाला अविश्वास लाकर वहां गया और देखा तो वैसाही तैयार देखा उसकी फली तोड़ी तो भीतर सातों ही तिल देखकर निश्चय किया कि जीव मरकर पुनः (फिर) वहांही उत्पन्न होते हैं गोशाला तेजोलेश्या सिद्ध करने को श्रावस्ती नगरी को गया, और कार्य सिद्धि कर पार्श्वनाथ के साधु पास अष्टांग निमित्त शीखकर सर्वज्ञ पद धारन किया प्रभु ने श्रावस्ती नगरी में जाकर विविध तपश्या से १० वां चातुर्मास निर्वाह किया.

प्रभु वहां से विहार कर म्लेच्छों की दृढ भूमि में गये वहां पेढाल गांव की बाहर पोलास चैत्य में अठम तपकर एक रात्रि रहे और ध्यान करने लगे.

(इन्द्र की प्रशंसा और प्रभु को महान् कष्ट)

प्रभु की ध्यान में स्थिरता देखकर इन्द्र प्रशंसा करने लगा कि वीरप्रभु ऐसे ध्यान में निश्चल हैं कि तीन लोक मे कोई भी उनको चलायमान करने को समर्थ नहीं वीरप्रभु की प्रशंसा संगम नाम के इन्द्र के सामानिक देव से सहन नहीं हुई और खड़ा होकर प्रतिज्ञा कर बोला कि मैं उनको चलायमान करूंगा.

इन्द्र को कहा कि आपको बीच में नहीं आना इन्द्र मौन रहा और संगम ने आकर वीरप्रभु के उपर (१) धूल की वृष्टि की जिससे प्रभु का मुख नाक भी ढक गये श्वास भी नहीं लेसक्ते थे, (२) पीछे वज्र मुखवाली कीडिये बनाकर प्रभु के शरीर को चालणी समान कर दिया कि कीड़ी एक तरफ से भीतर घुसकर दूसरी तरफ निकलने लगी पीछे वज्र समान, (३) डांस बनाकर दुःख दिया, पीछे (४) तीक्ष्ण मुख वाली घी मेल, (५) वीछु, (६) नौला, (७) सर्प, (८) उंदर के जरिये से दुःख दिया, पीछे (९) जंगली मदोन्मत्त हाथी से और हथणी से (१०) दुःख दिया (११) पिशाच के अट्टहास्य, पीछे (११) शेर की दाढों से और नखों से पीडा की, (१२) पीछे त्रिशला और सिद्धार्थ राजा का रूप बनाकर उनके विलाप बताकर चलायमान करना चाहा पीछे (१३) सेना बनाकर मनुष्यों द्वारा पैरों पर

रसोई बनवाई (१४) चंडाला नाम के पक्षिओं की चांचों से दुःख दिया (१५) प्रचंड वायु से दुःख दिया, (१६) पीछे बड़ा वायु से दुःख दिया (१७) हजार धारवाला चक्र प्रभु उपर जोर से 'ठोका' जिससे प्रभु जमीन के भीतर घुंटण तक चले गये तो भी प्रभु को स्थिर देखकर (१८) दिन करके बोला कि रात्री पूर्ण होगई आप चले जाओ, प्रभु ने उपयोग देकर रात्रि जानली.

(१९) देवता ने देवरूप प्रकट कर कहा कि इच्छा होवे सो मांगलो तो भी प्रभु मौन रहे तो (२०) देवागनाओं के हाव भाव से चलायमान करना चाहा तो भी स्थित रहे. ऐसे एक रात्रि में २० भयंकर उपसर्ग करके चलाय-मान करने की कोशीश की तो भी प्रभु ध्यान में मग्न रहे न क्रोध किया.

[कवि कहता है कि क्रोध करने योग्य संगम था तो भी प्रभुने क्रोध न किया जिससे क्रोध स्वयं गुस्सा (क्रोध) कर भाग गया].

देवता दिन उगने बाद भी जहां प्रभु गोचरी जावे वहां आहार को अशुद्ध कर देता था जिससे छे मास तक आहार शुद्ध न मिलने से प्रभु भूखे रहे परन्तु अशुद्ध आहार न लिया अंत में वज्र गांव में भी देवता ने अशुद्ध आहार करदिया वहां से भी प्रभु पीछे लोटे और कायोत्सर्ग में स्थित रहे जिस से देवता थक गया और प्रभु को शुद्ध ध्यान में देखकर अवधि ज्ञान से निश्चय कर प्रभु को वंदन कर पीछा सौधर्म देवलोक तरफ चला प्रभु भी पीछे वज्र भूमि में गोचरी गये जहां पर एक गोवालण ने खीर से पारणा कराया जहां पर वसुधारादि पांच दिव्य प्रकट हुए.

इन्द्र का पश्चाताप दुष्ट को दंड.

इन्द्र ने जब प्रशंसा की और संगम दुःख देने को गया और प्रभु ने सब दुःख सहन किया वो दुःख मैंने दिवाया ऐसा मानकर इन्द्रने छे मास तक सब वाजित्रादि शौख बंध कराकर आप उदासीन पणे बैठा था जब प्रभु का दुःख दूर हुआ परीक्षा भी पूरी होगई और अपना श्याम वदन लेकर संगम देव आने लगा इन्द्रने उसके दुष्ट कृत्यों को याद कर विमुख होकर दूसरे देवों के साथ कहलाया कि यहां से तूं निकल जा मैं तेरा मुख देखना नहीं चाहता. इन्द्र केहुकम

से संगम का तिरस्कार कर उन्होंने निकाल दिया. एक सागरोपम का वाकी का आयु पूरा करने को मेरु पर्वत पर चला गया. अग्रमहिषी (मुख्य देविएं) भी इन्द्र की आज्ञा लेकर उसके पीछे चली गई.

आलंभी नगरी में प्रभु को कुशल पूछने को हरिकांत इन्द्र आया, और श्वेतांबर नगरी में हरिसह इन्द्र आया और श्रावस्ती नगरी में इन्द्र कार्त्तिक स्वामी की मूर्ति में आकर वंदना की जिससे प्रभु की वहुत महिमा हुई. कौशंबी नगरी में सूर्य चन्द्र प्रभु को वंदन करने को आये, वाणारसी में इन्द्र, राजग्रही में इशानेन्द्र मिथिला नगरी में जनक राजा और धरणेन्द्र ने प्रभुजी को कुशल पूछा और अग्यारवां चौमासा प्रभुजी ने वैशाली नगरी में निर्वाह किया.

प्रभु का कठिन अभिग्रह (तप)

प्रभु जब सुसुमारपुर गये वहां चमेरन्द्र का उत्पात हुआ. (आश्चर्यों में कहा गया है) उसके वाद प्रभुजी कोशांबी नगरी गये वहां शतानिक राजा था, मृगावती उसकी राणी थी, विजया प्रतिहारी थी वादी धर्म पाठक था, सुगुप्त प्रधान था, प्रधान की भार्या नंदा श्राविका थी वो मृगावती की सखी थी प्रभुने पोस सुदी १ को अभिग्रह लिया कि सूप-छाज (सूंपड़ा) में उडद के वाकला देली में रहकर दूपहर के वाद राज पुत्री जो दासी पने में हो और माथा मुंड हो, पग में वेड़ी हो, आंख में आंसु हो तेले का उपवास का पारणा हो ऐसी वालिका भोजन देवे वो लेना ऐसे अभिग्रह से गांव में फिरें परन्तु आहार का योग नहीं मिला, इस समय शतानिक राजा ने चंपा नगरी को लूंटी, दधि वाहन राजा मारा गया उसकी रानी धारिणी को कोई सिपाइ ने पकड़ी वो शील भंग की भांति से मरगई पुत्री वसुमती को पकड कर सिपाई ने पुत्री वनाकर कोसंबी नगरी में वाजार में वेची धनावह शेठ ने उसको लेकर चंदना नाम रखा शेठ की मूला स्त्री को डर लगा कि दोनों का प्रेम वढता जाता है वो पत्नी भी हो जावेगी, ऐसा विचार कर शेठ की गेर हाजरी में उसका शिर मुंडाकर पांव में वेड़ी डालकर घर में कैद कर मूला चली गई शेठ चौथे दिन घर को आया चंदना की दुर्दशा देखकर डेली में वैठाकर वेड़ी तोड़ने को लुहार को वुलाने को गया भूखी वालिका को उड़द के वाकुला खाने को दिये सोंपड़े में रखकर वालिका चाहती थी कि साधु को देकर खाउं ! ऐसे समय

में प्रभु आये देखकर चंदना को हर्ष हुआ प्रभु पीछे लौटे तब आंसु आए और अभिग्रह पूरा होने से प्रभु ने बाकुला का दान लिया देवों ने पंच दिव्य प्रकट कर महिमा किया बेड़ी के आभूषण होगये और बाल नये आगये. मृगावती रानी भी आई अपार धन की वृष्टि देखकर शतानीक धन लेने लगा इन्द्र ने रोका कि यह धन चंदना के लिये है वीर प्रभु की प्रथम साध्वी यह होगी दीक्षा उत्सव में धन को व्यय होगा इन्द्र चला गया जंभिका गांव में आकर इन्द्रने प्रभु को कहा कि इतने दिन बाद आप को केवल ज्ञान होगा.

प्रभु को महान् उपसर्ग ।

मेंटिकि गांव बहार प्रभु जब कार्योत्सर्ग में खड़े थे वहां पर त्रिपृष्ट भव का बैरी शय्या पालक जिसके कान में उष्ण रांग डाली गई थी मरकर भव भ्रमण कर गोवाल हुआ था वो बैल लेकर प्रभु के पास आकर बोला हे साधो ! इन बैलों की रक्षा करना वो चला बैल भी चले गए वो पीछा आया बैल नहीं लौटे प्रभु को पूछा वे नहीं बोले तब उसने गुस्सा लाकर बारीक दो कीले बनाकर दोनों कान में डाल दिये और कोई न जाने इस तरह परस्पर मिला लिये प्रभु जब मध्य अपापा नगर में आये तब सिद्धार्थ वणिक के घर को गोचरी गये खरक वैद्य ने सिद्धार्थ से मिलकर चेष्टा से दुःख जानकर उद्यान में जाकर प्रभु के कीले निकाले संरोहिणी औषधि से आराम किया वहां पर लोगों ने स्मरणार्थ मंदिर बनाया दोनों दवा करने वाले स्वर्ग में गये शय्यापालक गोवाल मर सातवीं नर्क में गया.

सब उपसर्गों में कठिन यह था कालचक्र जो संगम देव ने मारा था वो मध्यम था जघन्य में शीतोपसर्ग जो पूतना ने किया था वो था सब उपसर्गों को प्रभु ने समभाव से सहन किये.

तएणं समणे भगवं महावीरे अणगारे जाए, इरियासमिए भासासमिए एसणासमिए आयाणभंडमत्तनिक्खेवणासमिए उच्चारपासवणखेलसंघाणजल्लपारिट्ठावणियासमिए मणसमिए वयसमिए कायसमिए मणगुत्ते वयगुत्ते कायगुत्ते गुत्ते गुत्तिंदिए

गुत्तबंभयारी अकोहे अमाणे अमाए अलोहे संते पसंते उव-
संते परिनिव्वुडे अणासवे अममे अकिंचणे छिन्नगंथे निरुवलेवे,
कंसपाई इव मुक्कतोए, संखे इव निरंजणे, जीवे इव अप्पडि-
हयगई, गगणमिव निरालंबणे, वाऊ इव अप्पडिबद्धे, सारय-
सलिलं व सुद्धहियए पुक्खरपत्तं व निरुवलेवे, कुम्मे इव गुत्तिं-
दिए, खग्गिविसाणं व एगजाए, विहग इव विप्पमुक्के, भारं-
डपक्खी इव अप्पमत्ते कुंजरे इव सोंडीरे, वसहे इव जायथामे,
सीहे इव दुद्धरिसे, मंदरे इव निक्कंपे, सागरे इव गंभीरे, चंदे
इव सोमलेसे, सूरे इव दित्ततेए, जच्चकणगं व जायरूवे, वसुंध-
रा इव सव्वफासविसहे, सुहुयहुयासणे इव तेयसा जलंते ॥११६॥

इमेसिं पयाणं दुन्नि संगहणिगाहाओ–" कंसे संखे जीवे,
गगणे वाऊ य सरयसलिले अ। पुक्खरपत्ते कुम्मे, विहगे ख-
ग्गे य भारंडे ॥ १ ॥ कुंजर वसहे सीहे, नगराया चेव सागर
मखोहे। चंदे सूरे कणगे, वसुंधरा चेव हूयवहे ॥ २ ॥ " न-
त्थि णं तस्स भगवंतस्स कत्थइ पडिबंधे–से अ पडिबंधे चउ-
व्विहे पन्नते, तंजहा दव्वओ, खित्तओ, कालओ, भावओ। द-
व्वओ, णं सचित्ताचित्तमीसेसु दव्वेसु, खित्तओ णं गामे वा
नगरे वा अरण्णे वा खित्ते वा खले वा घरे वा अंगणे वा नहे
वा, कालओ णं समए वा आवलिआए वा आणापाणुए वा
थोवे वा खणे वा लवे वा मुहुत्ते वा अहोरत्ते वा पक्खे वा मा-
से वा उउए वा अयणे वा संवच्छरे वा अन्नयरे वा दीहकाल-
संजोए, भावओ णं कोहे वा माणे वा मायाए वा लोभे वा
भए वा पिज्जे वा दोसे वा कलहे वा अब्भक्खाणे वा पेसुन्ने

वा परपरिवाए वा अरइरई वा मायामोसे वा मिच्छादंसणसल्ले वा ग्रं० ६००) तस्स णं भगवंतस्स नो एवं भवइ ॥ ११७ ॥

से णं भगवं वासावासवज्जं अट्ठ गिम्हहेमंतिए मासे गामे एगराइए नगरे पंचराइए वासीचंदणसमाणकप्पे समतिणम-णिलेट्ठुकंचणे समदुक्खसुहे इहलोगपरलोगअप्पडिवद्धे जीवि-यमरणे अ निरवकंखे संसारपारगामी कम्मसत्तुनिग्घायणट्ठाए अब्भुट्ठिए एवं च णं विहरइ ॥ ११८ ॥

भगवान के चारित्र में निर्मल गुण ।

महावीर प्रभु के साधु पणे में इर्या समिति (देखकर पगधरना) भाषास-मिति (विचार पूर्वक बोलना) एपणा समिति (शुद्ध निर्दोष गोचरी करना) अपनी वस्तुएं देखकर लेना छोड़ना और शरीर मल को निर्दोष निर्जीव स्थान पर छोड़ना ये पांच समिति युक्त थे दूसरों को पीड़ा नहीं करते थे मन वचन काया की समिति गुप्ति पालते थे अर्थात् अशुभ वर्तन को छोड़ शुभ और शुद्ध वर्तने ग्रहण करते थे गुप्त, गुप्त इंद्रिय गुप्त ब्रह्मचारी अर्थात् पाप से वचते थे पापों से इंद्रियों को छुड़ाते थे, ब्रह्मचर्य की रक्षा करते थे क्रोध मान माया लोभ ये चार दोष से रहित थे शांत प्रशांत उपशांत अर्थात् भीतर से मुख मुद्रा से वाह्य चेष्टाओं से भी क्रोधादि रहित थे (उन्मत्तता छोड़ सुशीलता धारण की थी) परिनिवृत्त (संताप रहित) आश्रव (तृष्णा) रहित थे ममता छोड़ दी थी कुछ भी द्रव्य नहीं रखा था, भीतर वहार की गांठ छोड़ दी थी निर्लेप कर्म लेप से दूर थे (नया कर्म नहीं होने देते थे) कांसी के पात्र में पानी का लेप नहीं होता ऐसे प्रभु निःस्नेह थे, शंख की तरह अंजन (मेल) रहित निर्मल निरंजन थे जीव जैसे दूसरी गति में विना रुकावट जाता है ऐसे वो भी विना विघ्न ममत्व विहार करते थे जैसे आकाश विना आधार है ऐसे प्रभु किसी का आधार नहीं लेते थे वायु माफक अबंधन थे अर्थात् वायु सर्वत्र जाता है ऐसे वो भी सर्वत्र विहार करते थे शरद ऋतु के पानी समान निर्मल

कमल के पत्ते माफिक लेप रहित थे कछुआ की तरह इंद्रियें वश रखते थे खड्ग (गेंडा) के एक शृंग की माफिक एकही थे राग द्वेष को छोड़ दिया था, पक्षी माफक परिग्रह रहित थे भारंड पक्षी की तरह अप्रमत थे, हाथी की तरह शूरवीर थे बैल की तरह बलवान, सिंह माफक निडर और मेरु पर्वत की तरह कंप रहित थे, समुद्र की तरह गम्भीर चन्द्र की तरह सौम्य लेश्या वाले, सूर्य की तरह देदीप्यमान तेजवाले उत्तम सुवर्ण जैसे रूपवाले, पृथ्वी की तरह सब (आठ) फरसों में समभावी थे निर्मल घी से सिंचन किया हुआ अग्नि समान तेज वाले थे भगवान को विचरने में कोई भी जगह प्रतिबंध नहीं था,

प्रतिबंध का स्वरूप ।

द्रव्य से–सचित अचित वा दोनों प्रकार का द्रव्य सम्बन्ध न था.

क्षेत्र से–गांव नगर अरण्य क्षेत्र खला, घर आंगणा आकाश में कहां भी ममत्व न था.

काल से–समय आवलिका श्वासोश्वास वा दिन रात वा वरसों तक का थोडा वडा ममत्व न था.

भाव से–क्रोध मान माया लोभ, भय हास्य, प्रेम द्वेष, कलह, जूठा कलंक चूगली परनिंदा रति अरति माया कपट, मिथ्यात्वशल्य भगवान को उनमें से कोई भी दोष नहीं था.

प्रभु का छदमस्त विहार.

वर्षा में चार मास एक जगह रहते थे, आठ मास फिरते थे. गांव में एक रात्रि, नगर में पांच रात्रि, जैसे चंदन काटने वाली वांसी को भी चंदन सुगंधी देता है ऐसे भगवान् दुष्टों पर भी निरागीय करुणा धारक थे. तृण मणि पत्थर सुवर्ण पर समान भाव धारक थे, दुःख सुख में समता धारक थे. इस लोक परलोक में कुछ भी राग द्वेष नहीं करते थे जीवित मरण से निराकांक्षी थे. संसार पार जाने वाले कर्म शत्रु नाश करने को उद्यमवान होकर विचरते थे.

तस्स णं भगवंतस्स अणुत्तरेणं नाणेणं अणुत्तरेणं दंसणेणं अणुत्तरेणं चरित्तेणं अणुत्तरेणं आलएणं अणुत्तरेणं वि-

हारेणं अणुत्तरेणं वीरिएणं अणुत्तरेणं अज्जवेणं अणुत्तरेणं मद्दवेणं अणुत्तरेणं लाघवेणं अणुत्तराए खंतीए अणुत्तराए गुत्तीए अणुत्तराए तुट्ठीए अणुत्तरेणं सच्चसंजमतवसुचरिअ-फलनिव्वाणमग्गेणं. अप्पाणं भावेमाणस्स दुवालस संवच्छराइं विइक्कंताइं तेरसमस्स संवच्छरस्स अंतरा वट्टमाणस्स जे से गिम्हाणं दुच्चे मासे चउत्थे पक्खे वइसाहसुद्धे तस्स णं वइसा-हसुद्धस्स दसमीपक्खेणं पाईणगामिणीए छायाए पोरिसीए अभिनिविट्टाए पमाणपत्ताए सुव्वएणं दिवसेणं विजएणं मुहु-त्तेणं जंभियगामस्स नगरस्स वहिआ उज्जुवालियाए नईए तीरे वेयावत्तस्स चेइअस्स अदूरसामंते सामागस्स गाहावईस्स कट्ठकरणंसि सालपायवस्स अहे गोदोहिआए उक्कुअनिसि-ज्जाए आयावणाए आयावेमाणस्स छट्ठेणं भत्तेणं अपाणएणं हत्थुत्तराहिं नक्खत्तेणं जोगमुवागएणं झाणंतरिआए वट्टमा-णस्स अणंते अणुत्तरे निव्वाघाए निरावरण कसिणे पडि-पुण्णे केवलवरनाणदंसणे समुप्पन्ने ॥ ११९ ॥

भगवान को केवल ज्ञान.

महावीर प्रभु का अनुत्तर ज्ञान, दर्शन, चारित्र आलय (स्थान में निर्म-मत्व) विहार, वीर्य, सरलता, कोमलता, लघुता, चांति, मुक्ति, गुप्ति, संतोष, सत्य, संयम, सदाचरण, वगेरह सब श्रेष्ठ होने से मुक्ति का फल इकट्ठा करके आतमा का स्वरूप चिंतवन करते हुए बारह बरस जब पूरे हुए.

बारह वर्षों का तप.

१ छे मासी तप.	१२ एक मासी तप.
१ छे मास में पांच दिन कम.	७२ पक्ष चमण.
९ चौमासी	१२ तेला

२ तीन मासी	२१८ बेला
२ अढाई मासी	२ भद्र प्रतिमा
६ दो मासी	४ महाभद्र प्रतिमा
२ देढ मासी	१० सर्वभद्र प्रतिमा

इन दिनों में तपश्चर्या के भीतर ३४६ दिन खाया था.

जब तेरहवां वर्ष आया तब ग्रीष्म ऋतु दूसरा महिना चौथा पक्ष वैशाख सुदी १० पूर्व दिशा की छाया में तीसरे पहर के अंत में पुरुष प्रमाण छाया के समय सुव्रत दिवस, विजय मुहुर्त्त में जृंभिक गांव के बाहर ऋजु वालिका नदी के किनारे वैयाव्रत्य जक्ष के चैत्य नजदीक श्यामाक जमींदार के खेत में शाल वृक्ष के नीचे गोदोहिका उत्कट आसन में आतापना लेते थे चउविहार बेले का तप था, उत्तरा फाल्गुनी का चन्द्र नक्षत्र के योग में शुक्ल ध्यान में स्थित प्रभु को अनंत, अनुत्तर, अनुपम निर्व्याघात, (निराबाध) निरावरण सम्पूर्ण, केवलवर ज्ञान दर्शन उत्पन्न हुआ.

तेणं कालेणं तेणं समएणं समणे भगवं महावीरे अरहा जाए, जिणे केवली सव्वन्नु सव्वदरिसी सदेवमणुआसुरस्स लोगस्स परिआयं जाणइ पासइ सव्वलोए सव्वजीवाणं आगइं गइं ठिइं चवणं उववायं तक्कं मणो माणसिअं भुत्तं कडं पडिसेवियं आवीकम्मं रहोकम्मं, अरहा अरहस्स भागी, तं तं कालं मणवयकायजोगे वट्टमाणाणं सव्वलोए सव्वजीवाणं सव्वभावे जाणमाणे पासमाणे विहरइ ॥ १२० ॥

उस केवल ज्ञान से प्रभु त्रिलोक पूज्यार्ह हुए जिनेश्वर, केवली, सर्वज्ञ, सर्वदर्शी, देव मनुष्य असुर वगेरह के और लोका लोक वर्त्तमान भूत भविष्य सब के पर्यायों को जानने वाले हुए. देखने वाले हुए सब लोक के सब जीवों की आगति, गति, स्थिति च्यवन, उपपात (देवों का मरण जन्म) तर्क मन के अभिप्राय खाया हुआ किया हुआ, उपयोग में लिया प्रकट किया वा छूपा किया. वे सब वातों को जानने वाले हुए और तीन लोक

के पूज्य. पूजा के योग्य उस वक्त के वा सब जीवों के मन वचन काया के व्यापारों को जानने वाले हुए और जानते हुए विचरते रहे अर्थात् केवल ज्ञान ही से सब बात को जानने और देखने लगे.

प्रभु का ज्ञान महोत्सव ।

तीर्थंकर महावीर प्रभु को केवल ज्ञान हुआ तब देवेन्द्रों के आसन कंपायमान हुए वे अवधि ज्ञान से जानकर आये और प्रभुने देवों के रचा हुआ समव सरण (सभा मंडप) में बैठकर धर्मोपदेश दिया मनुष्य नहीं आये जिससे विरति (चारित्र) किसी को प्राप्त नहीं हुआ. तीर्थंकर की यह प्रथम देशना निष्फल हुई और प्रभु ने भी थोड़ी देर देशना (उपदेश) देकर विहार कर महसेन वन (पावापुर से थोड़े मैल) में दूसरे दिन धर्मोपदेश दिया.

गणधर वाद गौतम इन्द्रभूतिजी का मिलाप ।

इन्द्र और देवता मनुष्य स्त्रीओं का समूह जाता आता देखकर गौतम इन्द्र भूतिजी जो यज्ञ कर रहे थे और उनके साथ दो भ्राता और आठ अन्य वेद पारंगामी ब्राह्मण विद्वान् अपने ४४०० शिष्यों के परिवार से संमिलित थे उन के दिल में लोगों को आते देख कर आनन्द हुआ परन्तु यज्ञ मंडप से आगे बढते देखकर इन्द्रभूति को दुःख हुआ और लोगों से पूछने लगा कि आप कहां जाते हैं। प्रभु की बहुत महिमा सुनकर उनको शिष्य बनाकर महिमा बढाउं वा मेरी शंका का समाधान कर शिष्य बनजाउं ऐसा निश्चय कर बडा भाई इन्द्रभूति ५०० शिष्यों के साथ गया प्रभुने आते ही गौतम इन्द्रभूति को कहा हे भद्र ! तेरे मन में यह जीव सम्बन्धी संदेह है उसका समाधान सुन !

शंका का समाधान ।

जीव है वा नहीं ? ऐसी शंका तेरे दिल में है क्योंकि वेद पदों का अर्थ तेरे समझ में नहीं आया.

विज्ञान घन एव एतेभ्यो भूतेभ्यो, समुत्थाय तान्येवानु विशाति न प्रेत्य संज्ञाऽस्ति इति—

इसका अर्थ तेरे खयाल से यह है कि.

"विज्ञान घन जीव-' पांच भूत (पृथ्वी पाणी अग्नि वायु आकाश) से उत्पन्न होकर उसी में प्रवेश होता है पीछे कुछ नहीं है अर्थात् पांचभूत मिलने से जीव उत्पन्न होता दीखता है और वे अलग होने से जीव भी उस में नाश होजाता है किंतु जीव ऐसा भिन्न पदार्थ कोई नहीं है जैसे कि पाणी में बुदबुदे होते हैं और फिर शांत होते हैं ऐसेही जीव नहीं है और परलोक में भी गमन आगमन नहीं करता जिससे पुण्य पाप का फल भोक्ता भी नहीं है प्रभु ने फिर कहा हे गौतम इंद्रभूति! तेरे अर्थ में स्याद्वाद रहस्य तूं समज कि "विज्ञान घन" का अर्थ ज्ञान स्वरूप आत्मा भी होता है और पांचइंद्री और छठा मन से जो पांच भूत द्वारा ज्ञान पर्याय होते हैं वे ज्ञान पर्यायों को भी "विज्ञान घन" कहते हैं अब वेद पदों से "विज्ञान घन" का अर्थ ज्ञान पर्याय लेना चाहिये और ये विज्ञान घन पांच भूत देखकर आदमी को होते हैं और पांचभूत के अभाव में वो ज्ञान पर्याय भी नष्ट होता है अर्थात् जिस पदार्थ को सामने लाए उसका ज्ञान होगा और वो उसके चले जाने पर उसका ज्ञान भी चला जावेगा इसलिये विज्ञान घन को पीछे प्रेत्य संज्ञा नहीं है उससे 'जीव" का नाश कोई भी रीति से नहीं होता जैसे कि आयना में कोई भी वस्तु जो सामने रहती है उसका चित्र पड़ता हैं और वस्तु दूर होने से वो चित्र भी नष्ट होजाता है किन्तु चित्र जाने से आयना का नाश नहीं मानते ऐसेही ज्ञान पर्याय (विज्ञान घन) नाश होने से वा बदलने से आत्मा का नाश नहीं होता.

जैनरीति से अधिक समाधान।

आत्मा चेतन है जीव भी चेतन है परंतु जीव कर्म सहित होता है वो संसार भ्रमण करता है और चार घाति कर्म- और चार अघाति कर्म से ही 'जीव' शरीर बंधन में पड़ा है शरीर भी दो जाति के हैं एक स्थूल है वो छोड़कर जीव दूसरी गतिमें जाता है परन्तु सूक्ष्म शरीर (तेजसकार्मण) साथ जाकर नया स्थूल शरीर मिला देता है और मोहनीय कर्म से और ज्ञान आवरणीय कर्म से जीव स्वस्वरूप को भूल पर स्वरूप में कुछ अंश में एकसा होजाता है उससे ही पूर्व पदार्थ विस्मृत होता है नये पदार्थ में ज्ञान लगता है इससे पूर्व 'संज्ञा' नहीं रहती उस से भ्रम में नहीं पड़ना कि जीव नहीं है जो बोधमतानुयायी क्षण भंगुर पदार्थ मानते हैं उसमें भी पदार्थ का रूपान्तर क्षण भंगुर है पदार्थ का मूल द्रव्य क्षण भंगुर

कदापि नहीं है जीव और अजीव दोनों द्रव्य है और जीव द्रव्य तीनोंही काल में मौजूद है वो ही जीव ख्याल रखकर दूसरा पदार्थ को जान सक्ता है.

आत्मा संपूर्ण ज्ञानी होजाने बाद उपयोग की आवश्यकता नहीं है उसको तीनोंही काल का ज्ञान है. (जीव विचार नवतत्त्व त्रिलोक्य दीपिका संग्रहणी और कर्मग्रंथ देखने की आवश्यकता है पूर्व के दो छप चुके हैं दो छपने वाले हैं)

गौतम इन्द्र भूति की शंका का समाधान वेद पदों से ही होगया क्योंकि प्रेत्य संज्ञा के लिये प्रभु ने और भी बताया था कि जीव दकार त्रय द द द है अर्थात् दान दया दमन ये "तीन दकार" जीव का लक्षण है.

अपने पास सद्बुद्धि धन जीवन शक्ति वा कोई भी पदार्थ है उससे परोपकार करना त्याग वृत्ति धारण करना मूर्च्छा छोड़ना और ज्ञान विमुख धर्म विमुख दुःखी जीवों को सुखी करना और पुष्ट खुराक से वा मोह से उन्मत्त होने वाली इन्द्रियों और मन को दमना अर्थात् कुमार्ग में नहीं जाने देना, वो जीवका लक्षण है किंतु जो विज्ञान घन आत्मा का नाश होवे और प्रेत्य संज्ञा न होवे अथवा क्षण भंगुर होवे तो दान दया दमन का फल कौन भोगेगा ? इसलिये प्रेत्य संज्ञा है पूर्व बात की स्मृति होती है वो भी प्रेत्य संज्ञा है और जन्मतेही बच्चों को आहार निंद्रा भय परिग्रह संज्ञा पूर्वाभ्यास की होती है जन्म से ही सुख दुःख कुरूप सुरूप ऊंचकुल नीच कुल सत्कार तिरस्कार होता है और जो कुछ अच्छी बुरी वस्तुएं प्राप्त होती हैं वो सब पूर्व कृत्यों का फल रूप है जैसे कि पूर्व बीज का ही फल खेती का पाक है और पदार्थ मात्र में नित्यत्व अनित्यत्व घट सक्ता है जहां जैसी अपेक्षा से बोले ऐसी अपेक्षा से अर्थ करना वो स्याद्वाद है और वेदपदों में भी योग्य अर्थ घटाने से जीव नित्य भी है अनित्य भी है प्रेत्य संज्ञा रहती भी है नहीं भी रहती है वो उपर की बातों से समझ में आवेगी एक वस्तु में अनंत धर्म का समावेश होसक्ता है सिर्फ बोलने वाले की उसमें अपेक्षा समझनी चाहिये.

(बांचने वालों के हितार्थ कुछ यहां पर लिखा है विस्तार से जानने वालों के लिये विशेषावश्यकादि ग्रन्थों को वा बड़ी टीकाएं देखनी चाहिये) गौतम इन्द्रभूति को संशय दूर होने से शिष्य होकर प्रभु के चरण का शरण लिया गौतम इन्द्र भूति के ५०० शिष्यों ने भी वैसाही किया.

त्रिपदी का वर्णन ।

प्रभुने शिष्यपद देकर त्रिपदी सुनाई उपन्नेइवा, विगमे इवा धुवेइवा। पदार्थ उत्पन्न होता है, नाश होता है और कायम रहता है क्योंकि दूध का दही हुआ तब दूध का उपयोग दही में से नहीं होगा और दही का उपयोग दही के लिये होगा किन्तु दूध वा दही में स्नेहत्व (चीकट) है वो तो कायम है संसार का स्वरूप इस तरह है (उसको जैनेतर ब्रह्मा शिव विष्णु की कृति मानते हैं) कोई पदार्थ का रूपांतर होना वो उत्पत्ति है इससे पूर्व पर्याय का नाश होता है किन्तु मूल द्रव्य तो कायम है और रूपांतर भी कृत्रिम और स्वाभाविक दो तरह होता है जैसे कि हिमालय पर स्वभाविक वरफ होता है और वड़े शहरों में उष्ण ऋतु में लाखों मण कृत्रिम बनाते हैं और जड़ चेतन का सम्बन्ध अनादि होने से सुख दुःख ममता मूर्छा का अनुभव होता है सिद्ध (मुक्त) जीवों को कर्म सम्बन्ध नहीं है. इन्द्रभूति महाराज ने त्रिपदी सुनकर पुण्य प्रवलता से लब्धि द्वारा द्वादशांगी(सत्र सिद्धांत)का ज्ञान प्राप्त कर शिष्यों के हितार्थ सूत्र रचना करी प्रभुने चतुर्विध संघ की स्थापना की.

साधु साध्वी श्रावक श्राविका साधुओं में प्रथम गौतम इन्द्रभूति हुए। उनको गणधर पद दिया अर्थात् उनके ५०० शिष्यों के अधिष्ठाता उनको वनाए.

अग्नि भूति का शंका समाधान.

इन्द्रभूतिजी का जीव सम्बन्धी समाधान सुनकर अग्निभूतिजी अपने भाई को पीछा लेजाने को आये किन्तु प्रभुजीने उसको कहा हे महाभाग ! तेरे को कर्म की शंका है किन्तु कर्म की सिद्धि वेद पदों से ही होजाती है.

पुरुष एव इदं सर्वं यद्भूतं यच्च भाव्यं ॥

उस का अर्थ तूं यह लेता है कि आगे होगया भविष्य में होगा वो सब आत्मा ही है किन्तु देवता तिर्यंच वगैरह दीखता है वो भी आत्मा है आत्मा अरूपी होने से कर्म उसको कुछ भी नहीं करसक्ता जैसे चंदन का लेप वा खड्ग (तलवार) से घा आकाश को होता नहीं ऐसे कर्म का उपघात वा अनुग्रह (हानि लाभ) आत्मा को नहीं होता इसलिये " कर्म " का भ्रम तेरे को हुआ

है परन्तु हे भद्र ! ऐसा अर्थ उसका नहीं होता किन्तु वेद पद तीन प्रकार के हैं.

विधिदर्शक, अनुवाददर्शक, स्तुति रूप ये तीनों अनुक्रम से इस तरह स्वर्ग की इच्छा वाले को अग्निहोत्र करना, वर्ष के बारह मास होते हैं. विश्व पुरुष रूप है अर्थात् विश्व में भला बुरा पुरुष ही करसक्ता है जैसे कि:-

जले विष्णुः स्थले विष्णु, विष्णुः पर्वतमस्तके ।
सर्व भूतमयो विष्णु, स्तस्माद्विष्णुमयं जगत ॥

ऐसे पदों से विष्णु की महिमा बताई है किंतु और जीवों का निषेध नहीं है और अमूर्त्त आत्मा को मूर्त्त कर्म से कैसे लाभ हानि होवे ? ऐसी तेरी शंका है उसका समाधान यह है कि बुद्धि जो ज्ञान का अंश है वो भी अरूपी है और उसको ब्राह्मी (सरस्वती) वनस्पति से वृद्धि और मदिरापान वगैरह से हानि भी दीखती है इसलिये कर्म रूपी होने पर भी अनादि कर्म से मलिन अरूपी आत्मा को लाभ हानि करके कर्म फल देते हैं और सुख दुःखों के प्रत्यक्ष दृष्टांत जगत् में दिखते हैं अग्नि भूति का समाधान हुआ और वो दूसरे गणधर हुए उनके साथ ५०० शिष्य ने भी दीक्षा लेली.

वायु भूति का समाधान.

तीसरा भाई वायुभूति ने आकर वोही शरीर वोही जीव की शंका का समाधान करना चाहा प्रभुने उसका विज्ञान घन पद का अर्थ जो गौतम इन्द्रभूति को सुनाया था वही सुनाकर कहाकि आत्मा शरीर से भिन्न है और—सत्येन लभ्यस्तप साह्येष ब्रह्मचर्येण नित्यं ज्योतिर्मयो शुद्धोऽयंहि पश्यंति धीरा यतयः संयतात्मनः इत्यादि ।

उसका अर्थ यह है कि:—

यह आत्मा ज्योतिर्मय शुद्ध है वो तपसा सत्य और ब्रह्मचर्य से प्राप्त होता है. और धीरता वाले संयम पालने वाले साधु उस आतमस्वरूप को जानते हैं. हे भद्र ! इस पद से आत्मा की सिद्धी होती है और शरीर भिन्न. है जैसे दूध में पानी मिलने से दूध पानी की एकता होती है किन्तु दूध वो दूध और पानी सो पानी ही है. वायु भूति शीघ्र ५०० शिष्यों के साथ साधु हुआ और तीसरा गणधर हुआ.

व्यक्त द्विजका समाधान।

प्रभु के पास पांच भूत के संशय वाले व्यक्त जी आए कि प्रभु ने कहा हे भद्र! तेरी यह शंका है कि-

येन स्वप्नो पर्म वै सकलं, इत्येष ब्रह्मविधि रंजसा विज्ञेयः।

अर्थात् सब स्वप्नकी तरह सब दिखता है यह ब्रह्म विधि शीघ्र जान लेनी उससे पांच भूतका अभाव है. और पृथ्वी देवता आपः (जल) देवता नाम सुनकर पांच भूतों का भ्रम होता है किंतु स्वप्न समान सब दृश्य पदार्थ और पांच भूत बताये है वो सिर्फ अध्यात्मिक दृष्टि से बताये हैं कि उसकी सुंदरता वा विरूपता से हर्ष शोक अहंकार दीनता होती है और भूतों में विचार शक्ति चली जाती है और जन्म मर्ण होता है वो छुडाने को सिर्फ वेद पदों से बोध दिया है कि सुंदरता विरूपता भूतों में है और वो क्षणिक है वा स्वप्न में जो दिखता है वो पीछे निष्फल है. ऐसे ही यह संसार में सुंदरता विरूपता भी भूतों में दिखती है वो निष्फल है उस में नित्यता का मोह करना अनुचित है. व्यक्त जीने दीक्षा ली. और चौथे गणधर हुए उन के साथ ५०० शिष्यों ने दीक्षा ली.

सुधर्मा स्वामि का संशय.

जैसा है वैसा ही फिर होता है पुरुषों वै पुरुषत्वम श्नुते पशवः पशुत्वं अर्थात् पुरुष मर के पुरुष और पशु मरके पशु होता है. इसलिये तेरे को शंका होती है कि जो ऐसा होता तो शृगालो वैएषजायते यः सपुरीषोदह्यते जो विष्टा को जलाता है वह मरके गीदड़ होता है परस्पर विरुद्ध वचनों से शंका होवे तो भी हे भद्र! वेद पदों का परमार्थ समज में नहीं आने से ही शंका होती है उसका समाधान सुनः-

पुरुष अच्छे कृत्य करे तो पुरुष ही होवे और पशु बुरे कृत्य करे तो पशु ही होवे उसमे कुछ आश्चर्य नहीं है और ऐसा एकांत निश्चय नहीं है कि अच्छे कार्य करने वाला वा बुरे कार्य करने वाला दोनों पुरुष होवे! किन्तु अच्छा कार्य करे और पुरुष होवे वही बताया है जैसे गेहूं बोने से गेहूं ही मिलेगा और

बिच्छु की उत्पत्ति गोबर से भी होती है कहने का सारांश यह है कि कर्त्तव्य पर नया शरीर मिलता है चाहे पशु हो चाहे मनुष्य हो फिर कर्त्तव्य अनुसार चाहे मनुष्य होवे चाहे पशु होवे. सुधर्मा स्वामि का समाधान हुआ पांचवा गणधर ५०० शिष्यों के साथ साधु होगये।

बंध मोक्षकी शंका मंडित द्विज को थी स एष विगुणो विभुर्नबध्यते संसरति वा मुच्यते मोचयति वा, अर्थात् संसार में जीवन बंधाता है न छुटता है न छुड़ाता है.

इसमें परमार्थ यह है कि ज्ञानी प्रभु केवल ज्ञान से वस्तुधर्म समज कर इसमें नहीं फंसते न छुटने सिर्फ आत्मा में ही रक्त है. इसका समाधान होगया छट्ठागणधर ३५० शिष्यों के साथ साधु हुए.

मौर्यपुत्र की शंका देवके बारे में थी कि–

कोजानाति मायो पमान् गीर्वाणान् इंद्रयम वरुणकुबेरादी निति.

माया के जैसे इंद्रादि कोन जानता है ! इसका परमार्थ यह है हेभद्र ! तूं सुन कि–पुण्य संपत्ति खुटजाने से इंद्रादि भी चलित होजाते है स्थिर वो भी नहीं है इसलिये देवत्व की भी आकांक्षा नहीं करनी–मुक्तिका ही विचार रखना और तेरे सामने मेरी सभा में देव बैठे है मौर्यपुत्र का समाधान होने से सातवे गणधर ने ३५० शिष्यों के सात दीक्षा ली.

अकंपित द्विज को नरक की शंका थी कि:–

नहिं वैप्रेत्य नरके नारकाः नारको वैएषजायते यः शुद्रान्नमश्नाति।

दोनों पदों में भेद क्यों एक में नरक में नारक नहीं दूसरे में शूद्र का अन्न खाने वाला नरकमें जाता है प्रभु ने समाधान किया कि हे भद्र ! पाप दूर होने पर नारक भी नरक में स्थिर नहीं है तो और दुःख तो कहना ही क्या है ! इसलिये धैर्य रखना ऐसा उपदेश पूर्व पद में है.

अकंपितजी ने ३०० शिष्यों के साथ दीक्षा ली. अचलभ्राता को पाप के बारे में शंका थी इसका समाधान अग्निभूति के प्रश्नोत्तर से होजाता है. नववां गणधर का समाधान होने से ३०० के साथ दीक्षा ली.

परभव की शंका दसवां गणधर मेतार्यजी को "विज्ञान घन" पद का

अर्थ बताने से समाधान होगया ३०० शिष्य के साथ दीक्षा ली मोक्षका संदेह ११ वा गणधर प्रभासजी को था जरामर्य थदग्नि होत्रं.

अर्थात् अग्निहोत्र मुक्ति के लिये नहीं है मुक्ति वांछक को अग्निहोत्रकी आवश्यकता नहीं अग्निहोत्र छोड मुक्ति का हेतु रूप अनुष्ठान को करो उनका समाधान होने से ३०० के साथ दीक्षा ली पांच के साथ २५०० दो के साथ ७०० चार के साथ १२०० कुल ४४०० शिष्य हुए और ११ उनके गणधर स्थापन किये.

तीर्थ स्थापना ।

इंद्र महाराज ने रत्नों से जड़ा हुआ सोने के थाल में सुगंधी चूर्ण (वास क्षेप) लाकर प्रभु को दीया प्रभुने खड़े होकर वास क्षेप की मुठी भरी अग्यारह गणधरों ने शिर प्रभु के चरणों में नवाये देवों ने हर्ष नाद के वाजिंत्र बजाए पीछे इंद्रने वाजिंत्र बंद कराये गौतम इंद्रभूति बडे होने से द्रव्यगुण पर्याय से तीर्थ की आज्ञा दी और मस्तक पर प्रभु ने वासक्षेप डाला देवों ने हर्षनाद किया पुष्प वृष्टि की. गच्छ परंपरा की आज्ञा सुधर्मस्वामी पंचम गणधर को दी.

तेणं कालेणं तेणं समएणं समणं भगवं महावीरे अट्ठियगामं निस्साए पढमं अंतरावासं वासावासं उवागए, चंपं च पिट्ठचंपं च निस्साए तओ अंतरावासे वासावासं उवागए, वेसालिं नगरिं वाणियगामं च नीसाए दुवालस अंतरावासे वासावासं उवागए, रायगिहं नगरं नालंदं च बाहिरियं नीसाए चउद्दस अंतरावासे वासावासं उवागए, छ मिहिलाए दो भद्दिआए एगं आलंभियाए एगं सावत्थीए पणिअभूमीए एगं पावाए मज्झिमाए हत्थिवालस्स रण्णो रज्जुगसभाए अपच्छिमं अंतरावासं वासावासं उवागए ॥ १२१ ॥

प्रभुके चौमासा का वर्णन ।

अस्ति ग्राम (वर्धमान) में पहिला चोमासा चंपा और पृष्ट चंपा में तीन

चोमासे वैशाली नगरी में वाणिज्य गांव में बारह चोमासे राजग्रही नगरी नालंदा पाड़ा में १४ चोमासे मिथिला नगरी में छे चोमासे भद्रिका नगरी में दो चोमासे आलंभिका नगरी में एक चोमासा श्रावस्ति नगरी में एक चोमासा वज्र भूमि में एक चोमासा एक चोमासा अंतका पावापुरी में हस्तिपाल राजा की कचहरी (मुनसियों को बैठने की पुराणी जगह में किया.

तत्थ णं जे से पावाए मज्झिमाए हत्थिवालस्स रणो रज्जुगसभाए अपच्छिमं अंतरावासं वासावासं उवागए॥१२२॥

तस्स णं अंतरावासस्स जे से वासाणं चउत्थे मासे सत्तमे पक्खे कत्तिअबहुले, तस्स णं कत्तियबहुलस्स पन्नरसी-पक्खेणं जा सा चरमा रयणी, तं रयणि च णं समणे भगवं महावीरे कालगए विइक्कंते समुज्जाए छिन्नजाइजरामरणबं-धणे सिद्धे बुद्धे मुत्ते अंतगडे परिनिव्वुडे सव्वदुक्खप्पहीणे, चंदे नामे से दुच्चे संवच्छरे पीइवद्धणे मासे नंदिवद्धणे पक्खे अग्गिवेसे नामं से दिवसे उवसमित्ति पवुच्चइ, देवाणंदा नामं सा रयणी निरतित्ति पवुच्चइ, अच्चे लवे मुहुत्ते पाणु थोवे सिद्धे नागे करणे सव्वट्ठसिद्धे मुहुत्ते साइणा नक्खत्तेणं जोग-मुवागए णं कालगए विइक्कंते जाव सव्वदुक्खप्पहीणे॥१२३॥

जिस समय प्रभु आखिर चोमासा करने को पावापुर आये तब वर्षाऋतु के चोथेमास के सातवा पक्ष अर्थात् कार्तिक वद)) चरमा नामकी रात्रि में में भगवान् महावीर काल धर्म पाये, संसार से निवृत्त हुए, जन्म जरा मरण को छेदने वाले हुए, सिद्ध बुद्ध, मुक्त अंतकृत् परि निवृत, और सब दुःख को काटने वाले हुए.

चन्द्र नाम का दूजा संवत्सर था, प्रीति वर्धन नाम का महिना, नंदिवर्धन पक्ष, अग्नि वेश्य नाम का दिन, उपशम दूसरा नाम था, देवानंदा नामकी रात्रि, निरति दूसरा नाम था, अर्चलव था, प्राण मुहूर्त्त, सिद्ध नामका स्तोक,

नागकरण, सर्वार्थ सिद्ध मुहूर्त चन्द्र नक्षत्र स्वाति का योग आने पर भगवान् सब दुःखों से मुक्त हुए.

जं रयणिं च णं समणे भगवं महावीरे कालगए जाव सव्वदुक्खप्पहीणे सा णं रयणी बहुहिं देवेहिं देवीहिं य ओवयमाणेहि य उप्पयमाणेहि य उज्जोविया आवि हुत्था ॥१२४॥

जं रयणिं च णं समणे भगवं महावीरे कालगए जाव सव्वदुक्खप्पहीणे, सा रयणी बहुहि देवेहि य देवीहि य ओवयमाणेहिं उप्पयमाणेहिं य उप्पिंजलगभूमाणआ कहकहग-भूआ आवि दुत्था ॥ १२५ ॥

महावीर प्रभु के निर्वाण समय देव देवीए बहुत से आने से प्रकाश होगया और देव देवी के आने जाने से आकाश में अव्यक्त (गों घाट) अवाज बड़े जोर से होगया.

जं रयणिं च णं समणे भगवं महावीरे कालगए जाव सव्वदुक्खप्पहीणे, तं रयणि चं णं जिस्ट्ठस गोअमस्स इंद-भूइस्स अणगारस्स अंतेवासिस्स नायए पिज्जबंधणे वुच्छिन्ने, अणंते अणुत्तरे जाव केवलवरनाणदंसणे समुप्पन्ने ॥१२६॥

वीर प्रभु का निर्वाण बाद शीघ्र गौतम इन्द्र भूतिजी महाराज को केवल ज्ञान केवल दर्शन हुआ.

उसकी विशेष बात.

वीर प्रभुने अपने निर्वाण के थोड़े समय पहिले देव शर्मा ब्राह्मण को प्रति बोध करने के लिये भेजे थे वे पीछे आते थे उस समय रास्ते में देव मनुष्यों द्वारा प्रभु का निर्वाण की बात सुनकर पूर्व प्रेम और गुणानुराग से वियोग का खेद हुआ और संसार में वीर प्रभु के विना भव्यात्माओं का और मेरा शंका समाधान कौन करेगा वगैरह याद करने लगे परन्तु एकत्व भावना से आत्म स्वरूप

का ख्याल में मग्न होकर धैर्यता धारण करने से केवल ज्ञान हुआ.

देवताओं ने आकर इन्द्रभूतिजी का केवल ज्ञान का महोत्सव किया.

कवि घटना.

अहंकारोपि बोधाय, रागोपि गुरुभक्तये, विषादः केवलाया भूत् चित्रं श्री गौतम प्रभोः १ वाद करने से बोध मिला, राग से गुरु भक्ति का लाभ, खेद से केवल मिला गौतम स्वामि की बात आश्चर्य रूप है (दूसरों को भी बोध भक्ति और खेद से क्या लाभ होना है अथवा वे कहां करने वो सोचना चाहिये दिवाली और बैठते वर्ष का पहिला दिन का महिमा जैनों में कैसे हुआ वो भी विचारना चाहिये),

गौतम इन्द्रभूति बारह वर्ष केवल ज्ञान का पर्याय पूराकर मुक्ति में गये सुधर्मा स्वामि आठ वर्ष केवल ज्ञान पर्याय पालकर मोक्ष गये।

जं रयणिं च णं समणे भगवं महावीरे कालगए जाव सव्वदुक्खप्पहीणे, तं रयणिं च णं नवमल्लई नवलेच्छई कासीकोसलगा अट्ठारसवि गणरायाणो अमावासाए पाराभोयं पोसहोववासं पट्ठविंसु, गए से भावुज्जोए, दव्वुज्जोअं करिस्सामो ॥ १२७ ॥

दीवाली पर्व.

प्रभु के निर्वाण समय पर काशी कोशल देश के नव मल्लकी जाति के नव लच्छकी जाति के राजा आये थे वे चेड़ा महाराजा के सामंत थे, उन्होंने संसार से पार उतारने वाला पौषध उपवास किया वीर भगवान के निर्वाण से धर्मोपदेश के अभाव में हम द्रव्यो द्योत करेंगे ऐसा विचार कर दीपक जलाए वह दिवाली शुरु हुई (नंदिवर्धन बंधु को सुदी १ को मालूम हुई उनका खेद निवारणार्थ दूज के दिन बहन के घर को जीमे उससे भाई बीज पर्व हुआ)

जं रयणिं च णं समणे जाव सव्वदुक्खप्पहीणे, तं रयणिं च णं खुद्दाए भासरासी नाम महग्गहे दोवाससहस्सठिई सम-

एस्स भगवत्र्यो महावीरस्स जम्मनक्खत्तं संकंते ॥ १२८ ॥

जप्पभिइं च णं से खुद्दाए भासरासी महग्गहे दोवाससहस्सठिई समणस्स भगवत्र्यो महावीरस्स जम्मनक्खत्तं संकंते, तप्पभिइं च णं समणाणं निग्गंथाणं निग्गंथीणं य नो उदिए २ पूत्र्यासक्कारे पवत्तइ ॥ १२९ ॥

जया णं से खुद्दाए जाव जम्मनक्खत्तात्र्यो विइकंते भविस्सइ, तया णं समणाणं निग्गंथाणं निग्गंथीण य उदिए२ पूत्र्यासक्कारे भविस्सइ ॥ १३० ॥

भगवान् के निर्वाण समय क्षुद्रात्मा भस्म राशि नामका बड़ा ग्रह २००० वर्ष की स्थिति का जन्म नक्षत्र में आगया था (ग्रहों का और दिन वगैरह का विशेष वर्णन सुबोधिका टीका से जानना).

वह भस्म राशि ग्रह आजाने से श्रमण निग्रन्थ (साधु) और निर्ग्रंथिणी (साध्वी) यों के उदय पूजा सत्कार विशेष नहीं होगा भस्मग्रह दूर होने पर साधु साध्वी की बहु मान्यता होगी।

जं रयणिं च णं समणे भगवं महावीरे कालगए जाव सव्वदुक्खप्पहीणे, तं रयणिं च णं कुंथू अणुद्धरी नाम समुप्पन्ना, जा ठिया अचलमाणा छउमत्थाणं निग्गंथाणं निग्गंथीण य नो चक्खुफासं हव्वामागच्छति, जा अठिआ चलमाणा छउमत्थाणं निग्गंथाणं निग्गंथीण य चक्खुफासं हव्वमागच्छइ ॥ १३१ ॥

जं पासित्ता बहुहिं निग्गंथेहिं निग्गंथीहिं य भत्ताइं पच्चक्खायाइं, किमाहु भंते ? अज्जप्पभिइं संजमे दुराराहे भविस्सइ ॥ १३२ ॥

'भगवान् के मोक्ष समय पर कुंथुएं बहुत उत्पन्न हुए जो न चलते तो छद्मस्थ साधू को दृष्टि में न आवे. अर्थात् वे जीव हैं वा अन्य कुछ चीज है. वो समज में न आवे और वे चलते तो मालूम होवे कि वे जीव हैं.

वे कंथूओं का उत्पन्न होना देखकर बहुत साधु साध्वीओं ने अनशन किया सबब यह था कि जीव रक्षा में प्रमाद होवे तो संयम पालना मुश्किल था (जीवों का नाश हो जावे) इसलिये अन्न पाणी त्यागकर परमात्म चिंतवन में लगगये.

तेणं कालेणं तेणं समएणं समणस्स भगवओ महावीरस्स इंदभूइपामुक्खाओ चउद्दस समणसाहस्सीओ उक्कोसिआ समणसंपया हुत्था ॥ १३३ ॥

समणस्स भगवओ महावीरस्स अज्जचंदणापामुक्खाओ छत्तीसं अज्जियासाहस्सीओ उक्कोसिया अज्जियासंपया हुत्था ॥ १३४ ॥

समणस्स भगवओ० संखसयगपामुक्खाणं समणोवासगाणं एगा सयसाहस्सी- अउणसट्ठिं च सहस्सी उक्कोसिया समणोवासगाणं संपया हुत्था ॥ १३५ ॥

समणस्स भगवओ० सुलसारेवईपामुक्खाणं समणोवासिआणं तिन्नि सयसाहस्सीओ अट्ठारससहस्सा उक्कोसिआ समणोवासियाणं संपया हुत्था ॥ १३६ ॥

समणस्स णं भगवओ० तिन्नि सया चउद्दसपुव्वीणं अजिणाणं जिणसंकासाणं सव्वक्खरसन्निवाईणं जिणो विव अवितहं वागरमाणाणं उक्कोसिआ चउद्दसपुव्वीणं संपया हुत्था ॥ १३७ ॥

समणस्स० तेरस सया ओहिनाणीणं अइसेसपत्ताणं उक्कोसिया ओहिनाणिसंपया हुत्था ॥ १३८ ॥

समणस्स णं भगवओ० सत्त सया केवलनाणीणं संभिएणवरनाणदंसणधराणं उक्कोसिया केवलनाणिसंपया हुत्था ॥ १३९ ॥

समणस्स णं भ० सत्त सया वेउव्वीणं अदेवाणं देविड्ढिपत्ताणं उक्कोसिया वेउव्वियसंपया हुत्था ॥ १४० ॥

समणस्स णं भ० पंच सया विउलमईणं अड्ढाइज्जेसु दीवेसु दोसु अ समुद्देसु सन्नीणं पंचिंदियाणं पज्जत्तगाणं मणोगए भावे जाणमाणाणं उक्कोसिआ विउलमईणं संपया हुत्था ॥ १४१ ॥

समणस्स णं भ० चत्तारि सया वाईणं सदेवमणुआसुराए परिसाए वाए अपराजिगाणं उक्कोसिया वाइसंपया हुत्था ॥१४२॥

समणस्स णं भगवओ० सत्त अंतेवासिसयाइं सिद्धाइं जाव सव्वदुक्खप्पहीणाइं, चउद्दस अज्जियासयाइं सिद्धाइं १४३

समणस्स णं भग० अट्ठ सया अणुत्तरोववाइयाणं गइकल्लाणाणं ठिइकल्लाणाणं आगमेसिभद्दाणं उक्कोसिआ अणुत्तरोववाइयाणं संपया हुत्था ॥ १४४ ॥

महावीर प्रभु की संपदा

इंद्रभूति आदि १४००० साधु-और चंदना, वगैरह ३६००० साध्वी, संख शतक आदि १५९००० श्रावक, सुलसा रेवती आदि ३१८००० श्राविका, चउद पूर्वी जिन नहीं परंतु जिन माफक श्रुत ज्ञान से सत्य भाषी श्रुत केवली साधु की संपदा थी, लब्धिवंत ऐसे १३०० अवधि ज्ञानी की संपदा थी, ७०० केवल ज्ञानी थे-७०० वैक्रिय लब्धिधारक थे-५०० विपुलमति मन पर्यव ज्ञानी २॥ द्वीप दो समुद्र में संज्ञी पंचेंद्री के मनके भावों के जानने वाले थे, ४०० वादि भगवानके थे जो देवता मनुष्य की सभा में युक्ति से प्रतिवादि को जितते

थे, ७०० साधु और १४०० साध्वी मोक्ष में गई, ८०० साधु अनुत्तर विमान में गये जो देव भवमें सुख भोगकर मनुष्य होकर मुक्ति जावेंगे.

समणस्स भ० दुविहा अंतगडभूमी हुत्था, तंजहा-जुगंतगडभूमी य, परियायंतगडभूमी य, जाव तच्चाओ पुरिसजुगाओ जुगंत०, चउवासपरियाए अंतमकासी ॥ १४५ ॥

भगवान की अंतकृत भूमि (१) जुगंत (२) पर्याय अंतकृत उनमें गौतम इंद्रभूति सुधर्मा जंबु ऐसे तीन पाटतक मोक्ष रहा, और वीर प्रभुके केवल ज्ञान होने बाद चार वर्ष होने से एक पुरुष मोक्ष गया. अर्थात् तीन पाट और चारवर्ष दोनों अंतकृत भूमि है.

तेणं कालेणं तेणं समएणं समणे भगवं महावीरे तीसं वासाइं अगारवासमज्झे वसित्ता साइरेगाइं दुवालस वासाइं छउमत्थपरियागं पाउणित्ता देसूणाइं तीसं वासाइं केवलिपरियागं पाउणित्ता, बायालीसं वासाइं सामण्णपरियागं पाउणित्ता बावत्तरि वासाइं सव्वाउयं पालइत्ता खीणे वेयणिज्जाउयनामगुत्ते इमीसे ओसप्पिणीए दूसमसुसमाए समाए बहुविइकंताए तिहिं वासेहिं अद्धनवमेहिं य मासेहिं सेसेहिं पावाए मज्झिमाए हत्थिवालस्स रण्णो रज्जुयसभाए एगे अबीए छट्ठेणं भत्तेणं अपाणएणं साइणा नक्खत्तेणं जोगमुवागएणं पच्चूसकालसमयंसि संपलिअंकनिसण्णे पणपन्नं अज्झयणाइं कल्लाणफलविवागाइं पणपन्नं अज्झयणाइं पावफलविवागाइं छत्तीसं च अपुट्ठवागरणाइं वागरित्ता पहाणं नाम अज्झयणं विभावेमाणे २ कालगए विइक्कंते समुज्जाए छिन्नजाइजरामरणबंधणे सिद्धे बुद्धे मुत्ते अंतगडे परिनिव्वुडे सव्वदुक्खप्पहीणे ॥ १४६ ॥

महावीर प्रभु ३० वर्ष ग्रहस्थावास में रहे, १२ वर्ष से कुछ अधिक छद्मस्थ दीक्षा पाली, ३० वर्ष में कुछ कम केवल ज्ञानी पर्याय में शरीर धारी रहे ४२ वर्ष कुल दीक्षा पाली ७२ वर्ष का पूर्ण आयु पाला तब वेदनी नाम आयुगोत्र ऐसे चार अघाति कर्म क्षय होगये और इस अवसर्पिणी का दुःखम सुखम नाम का तीसरा आरा बहुत व्यतीत होजाने बाद ३ वर्ष ८॥ मास बाकी रहे उस समय पावापुरी में हस्तिपाल राजा की मुनासियों की पुराणी बैठक में एकिले बेलेका पानी रहित तपमें स्वातिनक्षत्र में चंद्रयोग आनेपर प्रत्युष (चार घडी रात्री बाकी रही थी उस) समय में पलोठी मारकर बैठे थे और उपदेशमें ५५ अध्ययन कल्याण (पुण्य) फल के, ५५ अध्ययन पाप फल के ३६ अध्ययन अप्रष्ट व्याकरण के कहकर प्रधान अध्ययन मरुदेवा का कहते कहते संसार से विराम पाये, उर्ध्वलोक में सिद्ध हुए जन्म जरामरण को छेद सिद्ध बुद्ध मुक्त अंत कृत हुए उनके सब दुःख क्षय होगये.

समणस्स भगवओ महावीरस्स जाव सव्वदुक्खप्पहीणस्स नव वाससयाइं विइक्कंताइं, दसमस्स य वाससयस्स अयं अ-सीइमे संवच्छरे काले गच्छइ, वायणंतरे पुण अयं तेणउए संवच्छरे काले गच्छइ इइ दीसइ ॥१४७॥ (क० कि०, क० सु० १४८)

—o—

(कल्पसूत्र जिस समय लिखा) उस समय भगवान महावीर के निर्वाण को ९८० वर्ष थे दूसरे पुस्तकों में ९९३ वर्ष का लेख भी है देवार्द्धि क्षमा श्रमण ने यह सूत्र लिखाया है उससे ऐसा भी अनुमान करते हैं कि ९८० वर्ष बाद लिखाया और ९९३ वर्ष में राजसभा में वांचना शरु हुआ तत्व केवली गम्य समजना चाहिये.

॥ यहां पर छठा व्याख्यान समाप्त होता है ॥

तेणं कालेणं तेणं समएणं पासे अरहा पुरिसादाणीए पंचविसाहे हुत्था, तंजहाविसाहाहिं चुए चइत्ता गब्भं वक्कंते,

विसाहाहिं जाए, विसाहाहिं मुंडे भवित्ता अगा राओ अण-गारिअं पव्वइए, विसाहाहिं अणंत अणुत्तरे निव्वाघाए नि-रावरणे कसिणे पडिपुरणे केवलवरनाणदंसणे समुप्पन्ने, वि-साहाहिं परिनिव्वुए ॥ १४९ ॥

पार्श्व प्रभु का चरित्र

पार्श्वनाथ प्रभु के च्यवन जन्म दीक्षा केवल ज्ञान और मुक्ति ये पांच कल्याणक विशाखा नक्षत्र में चन्द्रयोग आने पर हुए।

(विशेष वर्णन महावीर प्रभु समान जान लेना)

तेणं कालेणं तेणं समएणं पासे अरहा पुरिसादाणीए जे से गिम्हाणं पढमे मासे पढमे पक्खे चित्तबहुले, तस्स णं चित्तबहुलस्स चउत्थीपक्खे णं पाणयाओ कप्पाओ वीसंसागरोवमट्ठिइयाओ अणंतरं चयं चइत्ता इहेव जंबुद्दीवे दीवे भारहे वासे वाणारसीए नयरीए आससेणस्स रणणो वामाए देवीए पुव्वरत्तावरत्तकालसमयंसि विसाहाहिं नक्खत्तेणं जोगमुवागएणं आहारवक्कंतीए (ग्रं० ७००) भववक्कंतीए सरीरवक्कंतीए कुच्छिंसि गब्भत्ताए वक्कंते ॥ १५० ॥

पार्श्वनाथ प्रभु पुरुषों को विशेष स्मरणीय है वे ग्रीष्म ऋतु का पहिला मास चैत्र वदी ४ के रोज प्राणत कल्प से १० वां देवलोक से २० सागरोपम की स्थिति पूरी कर इस जंबुद्वीप के भरत क्षेत्र में वाणारसी नगरी में अश्वसेन राजा की वामा देवी की कुक्षि में पूर्वरात्री अपररात्रि के बीच (मध्यरात) में विशाखा नक्षत्र में चन्द्र योग आने पर दिव्य आहार देव भव दिव्य शरीर त्याग करके (माता की कुक्षि में) आये.

पार्श्वनाथ के पूर्व भवों का वर्णन ।

जंबुद्वीप के भरत क्षेत्र में पोतनपुर नामका नगर में अरविंद राजा का विश्व

भूति पुरोहित था उसकी अनुद्धरी नामकी भार्या से कमठ और मरुभूति ऐसे दो पुत्र हुए वाप के मरने पर कमठ को पुरोहित का पद मिला उससे घमंड में आकर मरुभूति की औरत से दुराचार कृत्य किया. मरुभूति ने राजा को फरयाद की राजा ने मरुभूति को निकाल दिया, उसने गांव बहार जाकर तापस की दीक्षा ली और तापस होकर गांव में आया मरु भूति जो पुरोहित हुआ था. उसने कमठ तापस को मस्तक नवाकर पूर्व अपराधकी क्षमा चाही परन्तु पूर्व वैरको यादकर के जोरसे वड़ा पत्थर मारा, मरुभूति मरगया.

दूसरे भवमें मरुभूति सुजातक नामका हाथी विंध्याटवी में हुआ कमठ का जीव कुर्कुट नामका उडता सर्प हुआ. अरविंद मुनि को उद्यान में देखकर हाथी को जाति स्मरण ज्ञान हुआ मुनि के पास श्रावक के (११ व्रत लेकर मुनिको वंदन कर गया, सर्प को पूर्व वैरमे द्वेष हुआ और दंश किया हाथी शुभ भाव से मरगया.

तीसरे भवमें मरुभूति (हाथी) का जीव आठवां देवलोक में गया और सांप पांचवी नर्क में गया चोथे भवमें मरुभूति (देव) जंबूद्वीप के महा विदेह क्षेत्रमें सुकच्छ नामकी विजय में वैताढ्य पर्वत की दक्षिण श्रेणि में तीलवती नगरी में करणवेग नाम का राजा हुआ. राजाने वैराग्य से दीक्षा ली और विहार कर हैमशैल पर्वत के शिखर उपर खड़े थे वहां कमठ का जीव नरक में से आकर सर्प हुआ उसने मुनिराज को काटा. शुभ ध्यान से मुनि मरगये.

मुनिराज पांचवां भव में वारहवां देवलोक में देव हुए और सर्प मर कर पांचवीं नरक में गया छठा भव में वह देवता जंबूद्वीप के महा विदेह में गंधीलावती विजय में शुभंकरा नगरी में वज्र नाम का राजा हुआ क्षेमंकर तीर्थंकर के पास देशना सुन वैराग्य आने से दीक्षा ली विहार करते निज्वलन पर्वत पर ध्यान में खड़े थे कमठ का जीव मरकर भील हुआ था उसने तीर मार प्राण लिये.

सातवां भव में मुनि मध्यम ग्रैवयक में देव हुए मुनिघातक सातवीं नरक में गया.

आठवां भव में देव जंबूद्वीप के महाविदेह क्षेत्र में शुभंकरा विजय में पुराण पुर नगर में सुवर्ण वाहुचक्रवर्ती हुए वृद्धावस्था में तीर्थंकर की देशना सुन वैराग्य से दीक्षा लेकर वीश स्थानक तप आराधकर तीर्थंकर नाम कर्म बांधा कमठ नरक से आकर सिंह हुआ था उसने मुनि को मार डाले.

नवमें भवमें मुनि प्राणत देवलोक में देव हुए सिंह मरकर चौथी नरक में गया.

दशमा भव में मरुभूति का जीव देवलोक से पार्श्वनाथ का जीव हुआ और चौदह स्वप्न माता ने देखे कमठ का जीव ब्राह्मण का पुत्र हुआ.

पासे णं अरहा पुरिसादाणीए तिन्नाणोवगए आवि हुत्था, तंजहा—चइस्सामित्ति जाणइ, चयमाणे न जाणइ, चुएमित्ति जाणइ, तेणं चेव अभिलावेणं सुविणदंसणविहा-णेणं सव्वं—जाव—नियगं गिहं अणुपविट्ठा, जाव सुहंसुहेणं तं गब्भं परिवहइ ॥ १५१ ॥

तेणं कालेणं तेणं समएणं पासे अरहा पुरिसादाणीए जे से हेमंताणं दुच्चे मासे तच्चे पक्खे पोसबहुले, तस्स णं पोसबहुलस्स दसमीपक्खे णं नवण्हं मासाणं बहुपडिपुण्णाणं अद्धट्ठमाणं राइंदियाणं विइक्कंताणं पुव्वरत्तावरत्तकालसमयंसि विसाहाहिं नक्खत्तेणं जोगमुवागएणं आरोग्गा आरोग्गं दारयं पयाया ॥ १५२ ॥

जं रयणिं च णं पासे० जाए, सा रयणी बहुहिं देवेहिं देवीहि य जाव उप्पिंजलगभूया कहकहगभूया यावि हुत्था ॥ १५३ ॥

सेसं तहेव, नवरं जम्मणं पासाभिलावेणं भाणिअव्वं. जाव तं होउ णं कुमारे पासे नामेणं ॥ १५४ ॥

महावीर स्वामी की तरह पार्श्वनाथ का च्यवन समय तीन ज्ञान का अधिकार स्वप्नों का और तीन ज्ञान का अधिकार जानना, और माता ने अच्छी तरह से गर्भ को वहन किया.

पार्श्वनाथ ने पौष वदी १० की मध्य रात्रि में जन्म लिया उस समय चन्द्र नक्षत्र विशाखा था और काया निरोग और सुन्दर थी और जन्म महोत्सव

करने को देव के आने जाने से गाँघाट बहुत हुआ जन्माभिषेक महोत्सव पूर्व की तरह जानना और पार्श्वनाथ नाम रखा.

उनका विशेष चरित्र ।

जब भगवान् युवाअवस्था में आये तब कुशस्थल के राजा प्रसेन जितको म्लेच्छ लोगों ने घेरलिया था. और उसको अश्वसेन राजा मदद करने को जाते देखकर पार्श्वनाथ स्वयं तैयार हुए इंद्रने सारथी सहित रथ भेजा रथमें बैठकर पार्श्वनाथ आकाश में जोरसे चलाकर वहां पहुंचे म्लेच्छ भाग गये जिस से प्रसेनजित राजा की पुत्री प्रसन्न होकर पिताकी आज्ञा लेकर पार्श्वनाथ के साथ लग्न किया, घरको आकर पूर्व पुण्य के अनुसार सुख भोगने लगे.

एक दिन पूर्व भवका संबंधी कमठ जो ब्राह्मण हुआ था और निर्धनता कुरूप और दुर्भाग्य. से तापस हुआ था, वो गंगानदी के किनारे पर पंचाग्नि तप कर रहाथा और बहुत से लोग उनके दर्शनार्थ जाते थे, झरुखा में बैठे हुए भगवान ने पूछा कि आज क्या है. और ये लोग कहां जाते हैं सेवक ने खुलासा किया पार्श्वनाथ भी देखने को गये अज्ञान कष्ट करने वाले तापस को प्रभुने कहा हेभद्र ! स्वपर को व्यर्थ कष्ट देनेवाला यह अज्ञान तप क्यों प्रारंभ किया है ! अधिक पूछने पर जीव दया प्रधान प्रभुने अग्नि कुंडमें से जलता काष्ट मगाकर चिराया और उसका मरण समीप देख कर सेवक पास नवकार मंत्र सुनाया सर्पने कोमल भाव से सुना और शुभ ध्यान सेमर धरणेंद्र देव हुआ, लोग आश्चर्य देखकर प्रभुकी दया और ज्ञानकी प्रशंसा कर घरको गये कमठ तापस की निंदा होने से उसने अधिक तप कर मरके मेघमालि देव हुआ.

पासे अरहा पुरिसादाणीए दक्खे दक्खपइन्ने पडिरूवे अल्लीणे भद्दए विणीए, तीसं वासाइं अगारवासमज्झे वसित्ता पुणरवि लोगंतिएहिं जिअकप्पेहिं देवेहिं ताहिं इट्ठाहिं जाव एवं वयासी ॥ १५५ ॥

"जय जय नंदा, जय जय भद्दा, भद्दं ते" जाव जयजयसद्दं पउंजंति ॥ १५६ ॥

पार्श्वनाथ दक्ष, दक्ष प्रतिज्ञा वाले, सुन्दर, गुणवान सरल स्वभावी और विनयवान थे.

पार्श्वनाथ प्रभुने एक दिन नेम और राजीमति का चित्र देखा वैराग्य आया और लोकांतिक देवने मधुर शब्द से प्रार्थना भी की और, जय जय नंदादि शब्दों की उद्घोषणा की.

पुव्विपि णं पासस्स णं अरहओ पुरिसादाणीयस्स माणुस्सगाओ गिहत्थधम्माओ अणुत्तरे आभोइए तं चेव सव्वं–जाव दाणं दाइयाणं परिभाइत्ता जे से हेमंताणं दुच्चे मासे तच्चे पक्खे पोसबहुले, तस्स णं पोसबहुलस्स इक्कारसी-दिवसे णं पुव्वण्हकालसमयंसि विसालाए सिविआए सदेव-मणुआसुराए परिसाए, तं चेव सव्वं, नवरं वाणारसिं नगरिं मज्झंमज्झेणं निग्गच्छइ निग्गच्छित्ता जेणेव आसमपए उज्जाणे, जेणेव असोगवरपायवे, तेणेव उवागच्छइ, उवाग-च्छित्ता असोगवरपायवस्स अहे सीयं ठावेइ, ठावित्ता सीयाओ पच्चोरुहइ, पच्चोरुहित्ता सयमेव आभरणमल्लालंकारं ओमुयइ, ओमुइत्ता सयमेव पंचमुट्ठियं लोअं करेइ, करित्ता अट्ठमेणं भत्तेणं अपाणएणं विसाहाहिं नक्खत्तेणं जोगमुवा-गएणं एगं देवदूसमादाय तिहिं पुरिससएहिं सद्धिं मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वइए ॥ १५७ ॥

पूर्वसे तीन ज्ञानथे और ज्ञान से दीक्षा का दिन भी जान लिया था' जिस से वार्षिक दान दिया और भाईयों को बांटकर दिया. और पोस वदी ११ के दिन पहली पोरसी में विशाला शिविका में बैठ कर देव मनुष्यों की सभा साथ वा-णारसी नगरी से निकल कर आश्रम पद उद्यान में जाकर अशोक वृक्ष की नीचे पालकी रखी तब भगवान ने नीकल कर आभरण दूरकर अपने हाथ से

पंच मूठी लोच किया तेलेका तपमें और चंद्रनक्षत्र विशाखा में ३०० पुरुषों के साथ दीक्षा लेकर साधु हुए और देवों का दिया हुआ देव दूष्य वस्त्र लिया.

(महोत्सव का अधिकार वीरप्रभु की तरह जानना)

पासे णं अरहा पुरिसादाणीए तेसीइं राइंदियाइं निच्चं वोसट्ठकाए चियत्तदेहे जे केइ उवसग्गा उप्पज्जंति, तंजहा दिव्वा वा माणुस्सा वा तिरिक्खजोणिआ वा अणुलोमा वा, पडिलोमा वा, ते उप्पन्ने सम्मं सहइ खमइ तितिक्खइ अहियासेइ ॥ १५८ ॥

पार्श्वनाथ ने ८३ दिन तक शरीर का मोह छोडकर देव मनुष्य तीर्यच के जो उपसर्ग परिसह अनुकुल प्रतिकुल आये उनको सम्यक् प्रकार से सहन किये प्रभुने दीक्षा लेकर पीछे विहार करते करते तापस के आश्रम में आकर सूर्यास्त के समय वड वृक्ष की नीचे कायोत्सर्ग किया, पूर्व के वैरी कमठ देवने विभंग ज्ञानसे जान कर प्रभु को रात्रि में वहुत दुःख दिया. धूली उडाई तो भी भगवान को निष्कंप देखकर मेघ वरसाया प्रभुके कंठ तक पानी का पूर चढा धर्णेंद्र देव का आसन कंपने से प्रभु के पास आया और पद्मावती देवीने और इन्द्रने सहाय की अवधिज्ञान से अकाल वृष्टिका कारण ढूंढ मेघमाली देवको जान शीघ्र उसको बुलाकर धमकाया कि रे अधम ! क्यों प्रभु को सताता है ? मैं तेरा अपराध नहीं सहन करूंगा ! कंपता कमठ प्रभुके चरण में पड़ा धरणेंद्र ने छोड दिया कमठ प्रभुको दश भवों का वैर की क्षमा चाह कर चला गया धरणेंद्र भी चला गया.

कमठे, धरणेंद्रे च स्वोचितं कर्म कुर्वति, प्रभोस्तुल्य मनोवृत्तिः, पार्श्वनाथः श्रियेऽस्तुवः ॥

कमठ और धरणेंद्र ने उनकी इच्छानुसार कृत्य किये तो भी करने वाले पर राग द्वेष प्रभुने नहीं किया वह पार्श्वनाथ तुम्हारे कल्याण के लिये हो ।

तएणं से पासे भगवं अणगारे जाए इरियासमिए भासासमिए–जाव अप्पाणं भावेमाणस्स तेसीइं राइंदियाइं

विइकंताइं, चउरासीइम राइंदिए अंतरा वट्टमाणे जे से गिम्हाणं पढमे मासे पढमे पक्खे चित्तबहुले, तस्स णं चित्तबहुलस्स चउत्थीपक्खे णं पुव्वराहकालसमयंसि धायइपायवस्स अहे छट्टेणं भत्तेणं अपाणएणं विसाहाहिं नक्खत्तेणं जोगमुवागएणं झाणंतरिआए वट्टमाणस्स अणंते अणुत्तरे निव्वाघाए निरावरणे जाव केवलवरनाणदंसणे समुप्पन्ने, जाव जाणमाणे पासमाणे विहरइ ॥ १५९ ॥

प्रभुने साधु का आचार उत्तम पाला जिससे ८४ वां दिन में चैत्र वदी ४ प्रभात में धातकी वृक्ष की नीचे चौविहार छठ की तपस्या में चन्द्र नक्षत्र विशाखा में भगवान को शुक्ल ध्यान के दूसरे भाग के अंत में उत्तम केवल ज्ञान हुआ और तीर्थ प्रकट किया.

पासस्स णं अरहओ पुरिसादाणीयस्स अट्ठ गणा अट्ठ गणहरा हुत्था, तंजहा—सुभे य १ अज्जघोसे य २, वसिट्ठ ३ बंभयारि य ४। सोमे ५ सिरिहरे ६ चेव, वीरभद्दे ७ जसेऽविय ८। ६ ॥ १६० ॥

पार्श्वनाथ प्रभु के आठ गणधर हुए शुभ, आर्य घोष, वशिष्ठ, ब्रह्मचारी, सोम, श्रीधर वीर भद्र, यशस्वी.

पासस्स णं अरहओ पुरिस्सादाणीयस्स अज्जदिण्णपामुक्खाओ सोलससमणसाहस्सीओ उक्कोसिआ समणसंपया हुत्था ॥ १६१ ॥

पासस्स णं अ० पुप्फचूलापामुक्खाओ अट्ठत्तीसं अज्जियासाहस्सीओ उक्कोसिआ अज्जियासंपया हुत्था ॥ १६२ ॥

पासस्स० सुव्वयपामुक्खाणं समणोवासगाणं एगा सय-साहस्सीओ चउसट्ठिं च सहस्सा उक्कोसिआ समणोवासगाणं संपया हुत्था ॥ १६३ ॥

पासस्स० सुनंदापामुक्खाणं समणोवासियाणं तिण्णि सयसाहस्सीओ सत्तावीसं च सहस्सा उक्कोसिआ समणोवा-सियाणं संपया हुत्था ॥ १६४ ॥

पासस्स० अट्ठसया चउद्दसपुव्वीणं अजिणाणं जिणसं-कासाणं सव्वक्खर–जाव–चउद्दसपुव्वीणं संपया हुत्था ॥१६५॥

पासस्स णं० चउद्दससया ओहिनाणीणं, दससया केव-लनाणीणं, इक्कारससया वेउव्वियाणं, छस्सया रिउमईणं, दससमणसया सिद्धा, वीसं अज्जियासया सिद्धा, अट्ठ-सया विउलमईणं, छसया वाईणं, बारससया अणुत्तरोववा-इयाणं ॥ १६६ ॥

पार्श्वनाथ की और संपदा.

आर्य दिन प्रमुख १६००० साधु, पुष्प चुला प्रमुख ३८००० साध्वी, सुव्रत प्रमुख १६४००० श्रावक, सुनंदा प्रमुख ३२७००० श्राविका, ३५० चौद पूर्वी, १४०० अवधि ज्ञानी, १००० केवल ज्ञानी, ११०० वैक्रिय लब्धि वाले, ६०० ऋजुमति मनपर्यव ज्ञानी, १००० साधु मोक्ष में गए २००० साध्वी मोक्ष में गई ८०० विपुल मति मन पर्यव ज्ञानी, ६०० वादी और १२०० अनुत्तर विमानवासी देव हुए.

पासस्स णं अरहओ पुरिसादाणीयस्स दुविहा अंतग-डभूमी हुत्था, तंजहा–जुगंतगडभूमी, परियायंतगडभूमी य, जाव चउत्थाओ पुरिसजुगाओ जुगंतगडभूमी, तिवासपरि-आए अंतमकासी ॥ १६७ ॥

पार्श्वनाथ प्रभु की जुगंत कृत भूमि में चार पट्ट तक मुक्ति कायम रही उन के तीर्थ से तीन वर्ष बाद कोई मुनि मोक्ष में गये.

तेणं कालेणं तेणं समएणं पासे अरहा पुरिसादाणीए तीसं वासाइं अगारवासमज्झे वसित्ता, तसीइं राइंदिआइं छउमत्थपरिआयं पाउणित्ता, देसूणाइं सत्तरि वासाइं केवलिपरिआयं पाउणित्ता, पडिपुरणाइं सत्तरि वासाइं सामरणपरिआयं पाउणित्ता, एकं वाससयं सव्वाउयं पालइत्ता खीणे वेयणिज्जाउयनामगुत्ते इमीसे ओसप्पिणीए दूसमसुसमाए समाए बहुविइक्कंताए जे से वासाणं पढमे मासे दुच्चे पक्खे सावणसुद्धे, तस्स णं सावणसुद्धस्स अट्ठमीपक्खे णं उप्पिं संमेअसेलसिहरंसि अप्पचउत्तीसइमे मासिएणं भत्तेणं अपाणएणं विसाहाहिं नक्खत्तेणं जोगमुवागएणं पुव्वरहकालसमयंसि वग्घारियपाणी कालगए विइक्कंते जाव सव्वदुक्खप्पहीणे ॥ १६८ ॥

पार्श्वनाथ के ३०-वर्ष ग्रहस्थावास में गये ८३ दिन छद्मस्थ साधुपना में, ७० वर्ष में इतने दिन कम केवल ज्ञान का पर्याय, ७० वर्ष कुल दीक्षा पर्याय कुल १०० वर्ष का आयु पूर्ण कर चार अघाति कर्म क्षीण होने पर चौथे आरे का थोड़ा समय बाकी रहा तब श्रावण सुदी ८ के रोज विशाखा नक्षत्र में संमेत शिखर पर्वत उपर ३३ पुरुषों के साथ एक मास की संलेखना चौविहार उपवास कर प्रभात में लंबे हाथ रखकर खड़े २ मोक्ष में गये सब दुःखों से मुक्त हुए (उनका मोक्ष खड़े खड़े ही हुआ है ।

पासस्स णं अरहओ जाव सव्वदुक्खप्पहीणस्स दुवालस वाससयाइं विइक्कंताइं, तेरसमस्स य अयं तीसइमे संवच्छरे काले गच्छइ ॥ १६९ ॥

कल्पसूत्र लिखाया उस समय पार्श्वनाथ के मोक्ष को १२३० वर्ष होगये थे अर्थात् महावीर और पार्श्वनाथ का निर्वाण का अंतर २५० वर्ष का है।

तेणं कालेणं तेणं समएणं अरहा अरिट्ठनेमी पंचचित्ते हुत्था, तंजहा-चित्ताहिं चुए चइत्ता गब्भं वक्कंते, तहेव उक्खेवो-जाव चित्ताहिं परिनिव्वुए ॥ १७० ॥

नेमिनाथ का चरित्र.

अरिष्ट नेमि प्रभु के पांच कल्याणक चित्रा नक्षत्र में च्यवन जन्म दीक्षा केवल ज्ञान और मोक्ष हुआ।

तेणं कालेणं तेणं समएणं अरहा अरिट्ठनेमी जे से वासाणं चउत्थे मासे सत्तमे पक्खे कत्तिअबहुले, तस्स णं कत्तियबहुलस्स बारसीपक्खे णं अपराजिआओ महाविमाणाओ बत्तीससागरोवमठिइआओ अणंतरं चयं चइत्ता इहेव जंबुद्दीवे दीवे भारहे वासे सोरियपुरे नयरे समुद्दविजयस्स रण्णो भारिआए सिवाए देवीए पुव्वरत्तावरत्तकालसमयंसि जाव चित्ताहिं गब्भत्ताए वक्कंते, सव्वं तहेव सुमिणदंसणदविणसंहरणाइअं इत्थ भाणियव्वं ॥ १७१ ॥

कार्तिक वदी १२ के रोज अपराजित नामका महाविमान से ३२ सागरोपम की स्थिति पूर्णकर जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में सोरीपुर नगर में समुद्र विजय राजा की शिवा देवी की कुक्षि में मध्य रात्रि में चित्रा नक्षत्र में आये स्वप्नों का अधिकार पूर्व की तरह जान लेना।

तेणं कालेणं तेणं समएणं अरहा अरिट्ठनेमी जे से वासाणं पढमे मासे दुच्चे पक्खे सावणसुद्धे, तस्स णं सावणसुद्धस्स पंचमीपक्खे णं नवण्हं मासाणं जाव चित्ताहिं नक्खत्ते-

एणं लोगसुयागएणं जाव आरोग्गा आरोग्गं दारयं पयाया ॥ जम्मणं समुद्दविजयाभिलावेणं नेयव्वं, जाव तं होउ णं कुमारे अरिट्ठनेमी नामेणं ॥ अरहा अरिट्ठनेमि दक्खे जाव तिण्णि-वाससयाइं कुमारे अगारवासमज्झे वसित्ता एणं पुणरवि लो-गंतिएहिं जिअकप्पिएहिं देवेहिं तं चेव सव्वं भाणियव्वं, जाव दाणं दाइयाणं परिभाइत्ता ॥ १७२ ॥

नेमिनाथ प्रभुका जन्म श्रावण सुदी ५. के रोज चंद्र नक्षत्र चित्रा में हुआ, और कुमार का नाम समुद्र विजय राजाने अरिष्ठनेमि रखा.

विशेष अधिकार ।

माताने जब पुत्र गर्भ में था तब अरिष्ठ रत्न की चक्र धारा देखी थी उस बात को जानकर पिताने उपर का नाम रखा. प्रभु जब युवक हुए तब माता शिवादेवी ने लग्न करने का पुत्र को कहा. नेमिनाथ ने कहा कि योग्य कन्या मिलने पर लग्न करुंगा. मित्रों के साथ एक समय कृष्ण वासुदेव की आयुधशा-ला में गए मित्रों के आग्रह से चक्र को उठाकर आंगुली पर फिराया, कमल नाल की तरह शृंगधनुस्य को टेढा किया. लकड़ी की तरह कौमुदकी गदा को उठाई. और पांच जन्य शंख को मुंह मे बजाया उन शब्दों से इतना आवाज हुआ कि हाथी घोड़े चमक कर अपना स्थान छोड इधर उधर भागे. लोग घब-रा गये वासुदेव के बिना और कोई ऐसा बलवान नहीं था कि वो ऐसा कार्य करे जिस से शत्रुभय से कृष्णजी भी देखने को आये दोनों के बीच में प्रेमथा तो भी कृष्णजी को नेमिनाथ से भीति हुई की ऐसा बलवान मेरा राज्य क्यों नहीं लेगा ? बलभद्र पास जाकर कहा कि नेमिनाथ ने मेरेशस्त्र को उठाये और मेरेसाथ युद्ध परिक्षा में भी मुजसे अधिक तेजी बताई इसलिये क्या करना ! दोनों चिंतामें पड़े तब आकाश वाणी हुई कि श्रीकृष्ण ; भूलगया कि नमिनाथ तीर्थंकर ने कह रखा है कि नेमिनाथ दीक्षा लेंगे वो निःस्पृह है. तब शांति हुई परन्तु ब्रह्मचारी की अधिक शक्ति है इसलिये जो उसकी श्यादी होवे तो घर-चिंता में दुःखी होने से शक्ति नष्ट होगी ऐसा विचार कर कृष्णजी ने अपनी

स्त्रीयों द्वारा नेमिनाथ को संसार में पडने की योजना की. सुंदरियां ने सुगंधि जलसे फुलोंकी वृष्टिसे श्रृंगार रस के वचनों से मोहित करना चाहा. किन्तु सत्यभामा रुक्मणी वगैरह अनेक रमणीयें मुग्ध हुई परन्तु नेमिनाथ को रोममें भी मोह नहीं हुआ किन्तु संसार में मोह कितना दुःख प्राणीओं को देता है वोही विचार कर प्रभु शांत और मौन रहे. मौन देखकर सुंदरीयों ने कहा कि नेमिनाथ शरम से बोलते नहीं है. इच्छा भीतर में जरूर है. कृष्णजी ने शिवादेवी की रजा लेकर उग्रसेन राजा की पुत्री राजिमती जो योग्य अवस्था में थी उसके साथ लग्न की तैयारी की. क्रोष्टिक नाम के निमित्तिक से अच्छा दिन पूछा तब वो बोला कि चौमासा में अच्छे कार्य नहीं करने उस से स्यादी भी नहीं करनी निमित्तिक को कहा कि देरका काम नहीं तब उसने श्रावण सुदी ६ का दिन बताया, विवाह के दिन सब तैयारी कर परिवार के साथ नेमिनाथ भी चले. जब उग्रसेन के घर समीप आये तब वाड़ो में पशूओं का पुकार सुन कर नेमिनाथ को करुणा आई सारथी से पूछा कि ये सब क्यों पूरे हैं ? सारथी ने वात सुनाई के आपके लिये है. नेमिनाथ ने विचारा कि अहो ! मनुष्यों की क्या दुर्दशा है कि विचारे निर्दोष प्राणीयों को अपनी अल्प मानी हुई मौज (जिव्हा स्वाद) के खातिर उनकी अमूल्य जींदगी का नाश करते हैं ! मैं उसका निमित्त कारण क्यों होउ ? ऐसा विचार कर रथ पिछा लौटाया, सखीयों के साथ राजिमती हास्य करती थी और श्वसुर पक्ष के अडंबर को देख रही थी और मनमें सुख वैभव के तरंग उठारही थी उसी समय वात सुनी कि वर राजा का रथ पिछा लोटा है और पशुओं को मुक्त कराये है वरके माता पिता और कन्या के माता पिता ने बहुत प्रार्थना नेमिनाथ को की कि जीव हिंसा नहीं होगी आप आने वाले स्वजनों की हासीं न करावे ! समझ कर स्यादी करलो ! किन्तु उपयोग देकर ज्ञान से अपनी दीक्षा का समय नजदीक जानकर और लोकांतिक देवों की प्रार्थना से मुक्ति रमणी को चित्त में स्थापित कर सब रिस्तेदारों को बोध देने लगे राजिमती भी उदास होकर प्रार्थना करने लगी परंतु प्रभु के वचन से सबको शांति हुई और राजिमती रागदशा को छोड बोली हे नाथ ! हाथ से नहीं मिला परन्तु दीक्षा समय शीर पर वो हाथ जरूर रहेगा (अर्थात् दीक्षा लेने के समय आपका हाथ का वासक्षेप मेरे मस्तक पर पडेगा)

जे से वासाणं पढमे मासे दुच्चे पक्खे सावणसुद्धे, तस्स

णं सावणसुद्धस्स छट्ठीपक्खे णं पुव्वण्हकालसमयंसि उत्तरकुराए सीयाए सदेवमणुआसुराए परिसाए अणुगम्ममाणमग्गे जाव बारवईए नगरीए मज्झंमज्झेणं निग्गच्छइ, निग्गच्छित्ता जेणेव रेवयए उज्जाणे, तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता असोगवरपायवस्स अहे सीयं ठावेइ, ठावित्ता सीयाओ पच्चोरुहइ, पच्चोरुहित्ता सयमेव आभरणमल्लालंकारं ओमुयइ, सयमेव पंचमुट्ठियं लोयं करेइ, करित्ता छट्ठेणं भत्तेणं अपाणएणं चित्तानक्खत्तेणं जोगमुवागएणं एगं देवदूसमादाय एगेणं पुरिससहस्सेणं सद्धिं मुंडे भवित्ता आगाराओ अणगारियं पव्वइए ॥ १७३ ॥

इन अरिष्टनेमि प्रभु ने ३०० वर्ष ब्रह्म चर्यावस्था में निर्वाह किये. और वार्षिक दान देकर दीक्षा श्रावण सुदी ६ को उत्तर कुरुशिविका में बैठकर द्वारिका नगरी में निकल कर गिरिनार पर्वत पर सहस्राम्र वनमें जाकर अशोक वृक्ष नीचे पालखी से उतर आभूषण छोडकर चित्रा नक्षत्र में चंद्रयोग आनेपर देवदूष्य वस्त्र इंद्र पास से लेकर १००० पुरुषों के साथ छठ का चोविहार तपमें पंच मुष्टि लोच कर साधु हुए.

अरहा णं अरिट्ठनेमी चउपन्नं राइंदियाइं निच्चं वोसट्ठकाए चियत्तदेहे, तं चेव सव्वं जाव पणपन्नगस्स राइंदियस्स अंतरा वट्टमाणस्स जे से वासाणं तच्चे मासे पंचमे पक्खे आसोयबहुले, तस्स णं आसोयबहुलस्स पन्नरसीपक्खे णं दिवसस्स पच्छिमे भाए उज्जिंतसेलसिहरे वेडसपायवस्स अहे छट्ठेणं भत्तेणं अपाणएणं चित्तानक्खत्तेणं जोगमुवागएणं झाणंतरियाए वट्टमाणस्स जाव अणंते अणुत्तरे-जाव सव्वलोए सव्वजीवाणं भावे जाणमाणे पासमाणे विहरइ ॥ १७४ ॥

५४ दिन तक शरीर मोह छोड़कर नेमिनाथ ने उपसर्ग परिसह सहन किये और ५५ वां दिवस में आसोज वदी ०)) के रोज पिछले पहर में गिरिनार पर्वत पर वेतस वृक्ष की नीचे तेले का चउविहार तप में चन्द्र नक्षत्र चित्रा में शुक्ल ध्यान के दूसरे भाग में केवल ज्ञान केवल दर्शन हुआ और सर्वज्ञ होकर विचरने लगे.

उद्यान रक्षक से कृष्ण वासुदेव को ज्ञात हुआ, प्रभु को वांदने को आये राजिमती भी आई उस समय प्रभु के उदेपश सेवरदत्त वगैरह दो हजार राजाओं ने दीक्षा ली राजिमती का अधिक स्नेह देखकर कृष्ण वासुदेव ने प्रभुसे कारण पूछा. प्रभुने कहा कि नवभव से हमारा स्नेह चला आता है.

(१) धन नाम का मैं राजपुत्र था और वो मेरी भार्या धनवती थी (२) सौधर्म देवलोक में देव देवी थे, (३) मैं चित्रगति विद्याधर और वो रत्नवती नामकी भार्या थी (४) महेन्द्र देवलोक में दोनों देव हुए (५) अपराजित राजा और प्रियतमा भार्या हुई (६) आरण देवलोक में दोनों देव हुए (७) मैं शंखराजा और वो यशोमति रानी थी (८) अपराजित अनुत्तर विमान में दोनों देव हुए (९) में नेमिनाथ और वो राजिमती हुई इस लिये उसका प्रेम है. सब वंदनकर चले गये, दूसरी वक्त नेमिनाथ विहार कर सहस्राम्र वन में आये तब उस वक्त बोध सुनकर राजिमती और नेमिनाथ के बंधु रहनेमि ने भी दीक्षा ली. साधु साध्वी विहार कर गए एक समय रहनेमि गिरिनार की गुफा में ध्यान करते थे. और राजिमती नेमिनाथ को वंदन कर पिछी आती थी वर्षा आने से कपड़े सूखाने को मर्यादा से गुफा के भीतर गई अंधेरे में उसको कुछ न दीखा परन्तु रहनेमि ने देखा सुंदरता से मुग्ध होकर प्रार्थना करने लगा कि अपन यौवन वयका दोनों लाभ लेवें ! राजिमती स्थिर चित्त रखकर गुह्य भाग को गोपकर धैर्यता से बोली अगंधन जातिका सर्प भी विषवमन कर फीर मुंहमें नहीं लेता तो अपन मनुष्य होकर कैसे भोगको त्यागकर ग्रहण करेंगे. रहनेमि समझ कर नेमिनाथ के पास जाकर प्रायश्चित लेकर तपकर केवल ज्ञान पाकर मुक्ति गये. राजिमती भी केवल ज्ञान पाकर मुक्ति गये.

अरहओ णं अरिट्ठनेमिस्स अट्ठारस गणा अट्ठारस गणहरा हुत्था ॥ १७५ ॥

अरहओ णं अरिट्ठनेमिस्स वरदत्तपामुक्खाओ अट्ठारस समणसाहस्सीओ उक्कोसिया समणसंपया हुत्था ॥ १७६ ॥

अरहओ णं अरिट्ठनेमिस्स अज्जजक्खिणिपामुक्खाओ चत्तालीसं अज्जियासाहस्सीओ उक्कोसिया अज्जियासंपया हुत्था.

अरहओ णं अरिट्ठनेमिस्स नंदपामुक्खाणं समणोवासगाणं एगा सयसाहस्सीओ अउणत्तरिं च सहस्सा उक्कोसिया समणोवासगाणं संपया हुत्था ॥ १७८ ॥

अरहओ णं अरिट्ठ० महासुव्वयापामुक्खाणं समणोवासिगाणं तिण्णि सयसाहस्सीओ छत्तीसं च सहस्सा उक्कोसिआ समणोवासिआणं संपया ॥ १७९ ॥

अरहओ णं अरिट्ठनेमिस्स चत्तारि सया चउदसपुव्वीणं अजिणाणं जिणसंकासाणं सव्वक्खर० जाव हुत्था ॥ १८० ॥

पन्नरससया ओहिनाणीणं, पन्नरससया केवलनाणीणं, पन्नरससया वेउव्विआणं, दससया विउलमईणं, अट्ठसया वाईणं, सोलससया अणुत्तरोववाइआणं, पन्नरस समणसया सिद्धा, तीसं अज्जियासयाइं सिद्धाइं ॥ १८१ ॥

नेमिनाथ का परिवार.

नेमिनाथ के १८ गणधर, १८ गण थे, १८००० साधु थे जिसमें वरदत्त बड़े थे, और ४०००० साध्वी में आर्य यक्षिणी बड़ी थी, नंद वगैरह १६९००० श्रावक थे श्राविका ३३६००० में महा सुव्रता बड़ी थी, ४०० चौदह पूर्वी थे, १५०० अवधि ज्ञानी १५०० केवल ज्ञानी, १५०० वैक्रिय लब्धि वाले, १००० विपुल मति मन पर्यव ज्ञानी, ८०० वादी १६०० अनुत्तर वैमानवासी, १५०० साधु मोक्ष में गये ३००० साध्वी मोक्ष में गईं.

अरहओ णं अरिट्ठनेमिस्स दुविहा अंतगडभूमी हुत्था, तंजहा—जुगंतगडभूमी परियायंतगडभूमी य—जाव अट्ठमाओ पुरिसजुगाओ जुगंतगडभूमी, दुवासपरिआए अंतमकासी ॥ १८२ ॥

नेमिनाथ प्रभु के आठ पट्ट तक मुक्ति रही, तीर्थ से १२ वर्ष बाद मुक्ति शरु हुई.

तेणं कालेणं तेणं समएणं अरहा अरिट्ठनेमी, तिण्णि वाससयाइं कुमारवासमज्झे वसित्ता चउपन्नं राइंदियाइं छउमत्थपरिआयं पाउणित्ता देसूणाइं सत्त वाससयाइं केवलिपरिआयं पाउणित्ता परिपुण्णाइं सत्तवाससयाइं सामण्णपरिआयं पाउणित्ता एगं वाससहस्सं सव्वाउअं पालइत्ता खीणे वेयणिज्जाउयनामगुत्ते इमीसे ओसप्पिणीए दूसमसुसमाए समाए बहुविइक्कंताए जे से गिम्हाणं चउत्थे मासे अट्ठमे पक्खे आसाढसुद्धे तस्स णं आसाढसुद्धस्स अट्ठमीपक्खे णं उप्पिं उज्जिंतसेलसिहरंसि पंचहिं छत्तीसेहिं अणगारसएहिं सद्धिं मासिएणं भत्तेणं अपाणएणं चित्तानक्खत्तेणं जोगमुवागएणं पुव्वरत्तावरत्तकालसमयंसि नेसज्जिए कालगए (ग्रं. ८००) जाव सव्वदुक्खप्पहीणे ॥ १८३ ॥

नेमिनाथ ३०० वर्ष ब्रह्मचारी, ५४ दिन छद्मस्थ दीक्षा, ७०० वर्ष में ५४ दिन बाद केवली पर्याय ७०० वर्ष का पूरा साधुपना पालकर १००० वर्ष का पूरा आयु पाल चार अघाति कर्म दूर होने से असाड सुदी ८ को चित्रा चन्द्र नक्षत्र में गिरिनार पर्वत उपर ५३६ साधूओं के साथ एक मास का अनशन कर मध्य रात्रि में मुक्ति गये.

अरहओ णं अरिट्ठनेमिस्स कालगयस्स जाव सव्वदु-

क्खप्पहीणस्स चउरासीइं वाससहस्साइं विइक्कंताइं, पंचासी-इमस्स वाससहस्सस्स नव वाससयाइं विइक्कंताइं, दसमस्स वाससयस्स अयं असीइमे संवच्छरे काले गच्छइ ॥ १८४ ॥२२॥

नेमिनाथ मोक्ष गये उसको कल्पसूत्र लिखने के समय ८४९८० वर्ष हो गये थे (नेमिनाथ और महावीर दोनों का निर्वाण का अंतर ८४००० वर्ष का है)

नमिस्स णं अरहओ कालगयस्स जाव सव्वदुक्खप्पही-णस्स पंच वाससयसहस्साइं, चउरासीइं च वाससहस्साइं नव य वाससयाइं विइक्कंताइं, दसमस्स य वाससयस्स अयं असी-इमे संवच्छरे काले गच्छइ ॥ १८५ ॥ २१ ॥

नेमिनाथ से लेकर अजितनाथ प्रभु तक का अंतर बताया है नेमिनाथ को कल्पसूत्र लिखने के समय ५८४९७० वर्ष हुए.

मुणिसुव्वयस्स णं अरहओ कालगयस्स इक्कारस वास-सयसहस्साइं चउरासीइं च वाससहस्साइं नव वाससयाइं वि-इक्कंताइं, दसमस्स य वाससयस्स अयं असीइमे संवच्छरे काले गच्छइ ॥ १८६ ॥ २० ॥

मल्लिस्स णं अरहओ जाव सव्वदुक्खप्पहीणस्स पन्नट्ठिं वाससयसहस्साइं चउरासीइं च वाससहस्साइं नव वाससया-इं विइक्कंताइं, दसमस्स य अयं असीइमे संवच्छरे काले ग-च्छइ ॥ १८७ ॥ १९ ॥

अरस्स णं अरहओ जाव सव्वदुक्खप्पहीणस्स एगे वा-सकोडिसहस्से विइक्कंते, सेसं जहा मल्लिस्स—तं च एयं-पंचस-ट्ठिं लक्खा चउरासीइं सहस्सा विइक्कंता, तंमि समए महावी-रो निव्वुओ, तओ परं नव वाससया विइक्कंता दसमस्स य

वाससयस्स अयं असीइमे संवच्छरे काले गच्छइ। एवं अग्ग-ओ जाव सेयंसा ताव दट्ठवं ॥ १८८ ॥ १८ ॥

मुनिसुव्रत से ११८४६८० वर्ष हुए. मल्लिनाथ से ६५८४६८० अरनाथ से १००० क्रोड ६५८४९८० वर्ष कल्पसूत्र लिखने के समय.

कुंथुस्स णं अरहओ जाव सव्वदुक्खप्पहीणस्स एगे च-उभागपलिओवमे विइक्कंते, पंचसट्ठिं वाससयसहस्सा, सेसं जहा मल्लिस्स ॥ १८६ ॥ १७ ॥

कुंथुनाथ से ¼ पल्योपम और अरनाथ का अंतर गिनलेना.

संतिस्स णं अरहओ जाव सव्वदुक्खप्पहीणस्स एगे च-उभागूणे पलिओवमे विइक्कंते पन्नट्ठिं च, सेसं जहा मल्लि-स्स ॥ १६० ॥ १६ ॥

धम्मस्स णं अरहओ जाव सव्वदुक्खप्पहीणस्स तिण्णि सागरोवमाइं विइक्कंताइं, पन्नट्ठिं च, सेसं जहा मल्लि स्स ॥ १६१ ॥ १५ ॥

अणंतस्स णं अरहओ जाव सव्वदुक्खप्पहीणस्स सत्त सागरोवमाइं विइक्कंताइं पन्नट्ठिं च, सेसं जहा मल्लि स्स ॥ १६२ ॥ १४ ॥

विमलस्स णं अरहओ जाव सव्वदुक्खप्पहीणस्स सो-लस सागरोवमाइं विइक्कंताइं, पन्नट्ठिं च, सेसं जहा मल्लि स्स ॥ १६३ ॥ १३ ॥

वासुपुज्जस्स णं अरहओ जाव सव्वदुक्खप्पहीणस्स छायालीसं सागरोवमाइं विइक्कंताइं पन्नट्ठिं, सेसं जहा म-ल्लिस्स ॥ १६४ ॥ १२ ॥

सिज्जंसस्स णं अरहओ जाव सव्वदुक्खप्पहीणस्स एगे सागरोवमसए विइक्कंते पन्नट्ठिं च, सेसं जहा मल्लिस्स ॥ १६५ ॥ ११ ॥

शांतिनाथ से ||| ($\frac{3}{4}$) पल्योपम ६५८४६८० वर्ष. धर्मनाथ से ३ सागरोपम और मल्लिनाथ का अंतर अनंतनाथ से ७ सागरोपम और मल्लिनाथ का अंतर विमलनाथ से १६ सागरोपम वासु पूज्य से ४६ सागरोपम श्रेयांसनाथ से १०० सागरोपम और मल्लिनाथ का अंतर.

सीअलस्स णं अरहओ जाव सव्वदुक्खप्पहीणस्स एगा सागरोवमकोडी तिवासअद्धनवमासाहिअबायालीसवाससहस्सेहिं ऊणिआ विइक्कंता, एयंमि समए वीरे निव्वुओ, तओऽवि य णं परं नव वाससयाइं विइक्कंताइं, दसमस्स य वाससयस्स अयं असीइमे संवच्छरे काले गच्छइ ॥ १६६ ॥ १० ॥

सुविहिस्स णं अरहओ पुप्फदंतस्स जाव सव्वदुक्खप्पहीणस्स दस सागरोवमकोडीओ विइक्कंताओ, सेसं जहा सीअलस्स, तंच इमं—तिवासअद्धनसवमाासाहिअबायालीसवाससहस्सेहिं ऊणिआ विइक्कंता इच्चाइ ॥ १६७ ॥ ९ ॥

चंदप्पहस्स णं अरहओ जाव—प्पहीणस्स एगं सागरोवमकोडिसयं विइक्कंते, सेसं जहा सीअलस्स, तंच इमं—तिवासअद्धनवमासाहियबायालीससहस्सेहिं ऊणगमिच्चाइ ॥ १६८ ॥ ८ ॥

सुपासस्स णं अरहओ जाव—प्पहीणस्स एगे सागरोवमकोडिसहस्से विइक्कंते, सेसं जहा सीअलस्स, तंच इमं-तिवासअद्धनवमासाहिअबायालीससहस्सेहिं ऊणिआ इच्चाइ ॥ १६९ ॥ ७ ॥

पउमप्पहस्स णं अरहओ जावप्पहीणस्स दस सागरोवमकोडिसहस्सा विइक्कंता, तिवासअद्धनवमासाहियबायालीससहस्सेहिं इच्चाइयं, सेसं जहा सीअलस्स ॥ २०० ॥ ६ ॥

सुमइस्स णं अरहओ जाव० प्पहीणस्स एगे सागरोवमकोडिसयसहस्से विइक्कंते, सेसं जहा सीअलस्स, तिवासअद्धनवमासाहियबायालीससहस्सेहिं इच्चाइयं ॥ २०१ ॥ ५ ॥

अभिनंदणस्स णं अरहओ जाव० प्पहीणस्स दस सागरोवमकोडिसयसहस्सा विइक्कंता, सेसं जहा सीअलस तंच इमं तिवासअद्धनवमासाहियबायालीसवाससहस्सेहिं इच्चाइयं ॥ २०२ ॥ ४ ॥

शीतलनाथ और महावीर का मोक्ष समय अंतर १ क्रोड़ सागरोपम में ४२००३ वर्ष ८॥ मास कम है उसके ९८० वर्ष बाद कल्पसूत्र लिखा गया है

सुविधिनाथ से १० क्रोड़	सागरोपम	और शीतलनाथ की तरह	जानना.
चन्द्र प्रभु से १०० क्रोड़	,,	,,	,,
सुपार्श्वनाथ से १००० क्रोड़	,,	,,	,,
पद्मप्रभु से १०००० क्रोड़	,,	,,	,,
सुमतिनाथ से ९ लाख क्रोड़	,,	,,	,,
अभिनंदन से १ लाख क्रोड़	,,	,,	,,

संभवस्स णं अरहओ जाव० प्पहीणस्स वीसं सागरोवमकोडिसयसहस्सा विइक्कंता, सेसं जहा सीअलस्स, तिवासअद्धनवमासाहियबायालीसवाससहस्सेहिं इच्चाइयं ॥२०३॥३॥

अजियस्स णं अरहओ जावप्पहीणस्स पन्नासं सागरोवमकोडिसयसहस्सा विइक्कंता, सेसं जहा सीअलस्स, तिवासअद्धनवमासाहियबायालीसवाससहस्सेहिं इच्चाइयं ॥ २०४ ॥ २ ॥

तेणं कालेणं तेणं समएणं उसभे एं अरहा कोसलिए चउउत्तरासाढे अभीइपंचमे हुत्था, तंजहा–उत्तरासढाहिं चुए चइत्ता गब्भं वक्कंते जाव अभीइणा परिविव्वुए ॥ २०५ ॥

संभवनाथ से २० लाख क्रोड़ सागरोपम और शेष शीतलनाथ की तरह. अजितनाथ से ५० लाख क्रोड़ सागरोपम और शेष शीतलनाथ की तरह.

ऋषभदेव प्रभु का चरित्र कहते हैं तेरह भव पहिले सम्यक्त्व पाया उन तेरह भवों का वर्णन:—

(१) धनासार्थवाह ने मुनि को घी का दान दिया वहां सम्यक्त्व पाया (२) उत्तर कुरुक्षेत्र में युगलिक (३) सौधर्म देवलोक में देव (४) जंबूद्वीप के पश्चिम महाविदेह मे गंधिलावती विजय में महावल राजा (५) ईशान देव लोक में ललितांग देव (६) जंबूद्वीप के पूर्व महाविदेह में पुष्कलावती विजय में लोहार्गलनगर में वज्र जंघ राजा, (७) उत्तर कुरुक्षेत्र में युगलिक, (८) प्रथम देवलोक में देव, (६) जंबूद्वीप महाविदेह क्षिति प्रतिष्ठित नगर में सुविधि वैद्य, (१०) छै मित्रों के साथ बारमा देवलोक में देव, (११) जंबूद्वीप के महाविदेह में पुष्कलावती विजय में पुंडरीकिणी नगरी में पूर्व मित्रों के साथ भाई हुए वैद्य का जीव वज्रनाभ चक्रवर्त्ती हुए छै भाई के साथ दीक्षा ली चक्रवर्त्ती ने २० स्थानक पद आराधी तीर्थंकर पद बांधा, (१२) छे भाई सर्वार्थ सिद्ध विमान में देव हुए, (१३) ऋषभदेव तीर्थंकर हुए.

ऋषभदेव के ४ कल्याणक उत्तराषाढा और मोक्ष अभिजित नक्षत्र में हुए. च्यवन, जन्म दीक्षा केवल ये चार उत्तराषाढा में और मोक्ष अभिजित नक्षत्र में हुआ.

कुलकरों की उत्पत्ति ।

ऋषभदेव इस अवसर्पिणी के तीसरे आरे के अंत में हुए हैं उनके पूर्वज कुलकर कहलाते थे पल्योपम का आठवा भाग ($\frac{1}{8}$) बाकी रहा तब युगलिकों में विमल वाहन युगलिक मनुष्य हुवा उसका पूर्व भव का मित्र कपट कर 'हाथी' हुआ था वो स्नेह से अपने पर बैठाकर चलता था कल्पवृक्ष का रसकम देखकर ममत्व बढा और न्याय करने को सबने मिलकर जाति स्मरण ज्ञान

वाले विमल वाहन को कुलकर (मुखिया) बनाया विमल वाहन ने इन युगलिकों के हितार्थ गुनहगार को दंड "हकार" शब्द रखा उसकी भार्या का नाम चंद्रयश था और दोनों नवसो धनुष्य ऊंचे थे.

(२) उनका पुत्र चक्षुष्मान हुआ, (३) यशः स्वान (४) अभिचंद्र (५) प्रसेनाजित (६) मरुदेव (७) नाभि कुलकर थे उनकी भार्या मरुदेवा थी इसके कुल में ऋषभदेव हुए.

दो के समय में हाकार दो के समय में माकार, दो के समय में धिक्कार और सातवे कुलकर के समय में तीनों ही थे

तेणं कालेणं तेणं समएणं उसभे अरहा कोसलिए जे से गिम्हाणं चउत्थे मासे सत्तमे पक्खे आसाढबहुले तस्स णं आसाढबहुलस्स चउत्थीपक्खे णं सव्वट्ठसिद्धाओ महाविमाणाओ तित्तीसंसागरोवमट्ठिइआओ अणंतरं चयं चइत्ता इहेव जंबुद्दीवे दीवे भारहेवासे इक्खागभूमीए नाभिस्स कुलगरस्स मरुदेवीए भारिआए पुव्वरत्तावरत्तकालसमयंसि आहारवक्कंतीए जाव गब्भत्ताए वक्कंते ॥ २०६ ॥

उस समय ऋषभदेव तीर्थंकर आषाढ़ वदी ४ के रोज सर्वार्थ सिद्ध विमान से ३३ सागरोपम आयुपूर्ण कर एकदम इस भरत क्षेत्र में इक्ष्वाकु भूमी में कौशल्य (अयोध्या) देश में (कौशल देश में उत्पन्न होने से) कौशिल्क मरुदेवी की कुक्षि में मध्य रात्रि में आये.

उसभे णं अरहा कोसलिए तिन्नाणोवगए आविहुत्था, तंजहा-चइस्सामित्ति जाणइ- जाव-सुमिणे पासइ, तंजहा-गय-गाहा । सव्वं तहेव-नवरं पढमं उसभं मुहेणं अइंतं पासइ-सेसाओ गयं । नाभिकुलगरस्स साहइ, सुविणपाढगा नत्थि, नाभिकुलगरो सयमेव वागरेइ ॥ २०७ ॥

भगवान् को तीन ज्ञान होने से भूत भविष्य का हाल जाने पण च्यवन का वर्त्तमान समय न जाने चौद स्वप्न का अधिकार में भेद यह है कि माता प्रथम वृषभ देखे बाकी सब पूर्व माफिक जानना स्वप्न पाठक न होने से नाभि कुल करने स्वयं अपनी बुद्धि अनुसार कहा था.

तेणं कालेणं तेणं समएणं उसभे णं अरहा कोसलिए जे से गिम्हाणं पढमे पक्खे चित्तबहुले तस्स णं चित्तबहुलस्स अट्ठमीपक्खे णं नवण्हं मासाणं बहुपडिपुण्णाणं अद्धट्ठमाणं राइंदियाणं जाव आसाढाहिं नक्खत्तेणं जोगमुवागएणं जाव आरोग्गा आरोग्गं दारयं पयाया ॥ २०८ ॥

तं चेव सव्वं-जाव देवा देवीओ य वसुहारवासं वासिंसु, तहेव चारगसोहणं माणुम्माणवड्ढणं-उस्सुक्कमाइयट्ठिइवडियजूयवज्जं सव्वं भाणिअव्वं ॥ २०९ ॥

ऋषभदेव का जन्म चैत्र वदी ८ के रोज हुआ बाकी सब पूर्व की तरह है, मरुदेवी माता ने निरोगी सुंदर पुत्र को जन्म दिया.

देव देवियों का आना गोंचार होना, द्रव्य वृष्टि करना पिता का दश दिनों का महोत्सव पूर्व की तरह जान लेना.

ऋषभदेव प्रभु सुन्दर रूप वाले देव और युगलिक मनुष्यों से घेरे हुए फिरते थे बाल्यावस्था में अमृत पान करते थे और बड़े होने बाद दीक्षा समय तक कल्पवृक्ष के फल खाते थे अमृत को अंगुठे में देवता ने रखा था और उत्तरकुरु से कल्पवृक्ष के फल भी लादिये थे.

प्रभु के वंश की स्थापनार्थ इन्द्र इक्षु लेकर आया एक वर्ष की उम्र में प्रभु थे तो भी ज्ञान से इन्द्र का अभिप्राय जानकर लंबा हाथकर इक्षु (सेंठा, गन्ना) लिया इन्द्र ने उससे उनके कुल का नाम इक्ष्वाकु रखा गोत्र का नाम काश्यप रखा.

एक युगलिक (स्त्री पुरुष) का जोड़ा फिरता था छोटी उम्र में पुरुष को ताल वृक्ष का फल लगने से प्रथम अकाल मृत्यु हुआ छोटी लड़की का कोई रक्षक न रहने से नाभि कुलकर को दी उनके साथ वो फिरती थी बड़ी हुई

तब नाभि कुलकर ने उस सुन्दरी जिसका नाम सुनन्दा था और सुमंगला जो साथ जन्मी थी इन दो कन्याओं के साथ ऋषभदेव की ष्यादी की लग्न विधि का सब अधिकार प्रथम तीर्थंकर का इन्द्र को करने का है इसलिये इन्द्र इन्द्राणी ने आकर लग्नविधि बताई. (जैन लग्न विधि की उस दिन से शुरुवात हुई है).

पुत्रोउत्पत्ति.

छ लाख पूर्व (८४०००० वर्ष का पूर्वांग होता है ८४०००० पूर्वांग का पूर्व होता है) तक संसारवास में ऋषभदेव प्रभु को सुमंगला से भरत, ब्राह्मी, पुत्र पुत्री हुए (दोनों साथ जन्मने वाले को युगलिक कहते हैं) और सुनंदा को बाहुबल सुंदरी पुत्र पुत्री हुए उसके बाद ९८ पुत्र सुमंगला को ४९ जोड़ के से हुए. सब मिलके दो रानी के १०० पुत्र और २ पुत्री हुई.

उसभे णं अरहा कोसलिए कासवगुत्ते णं, तस्स णं पंच नामधिज्जा एवमाहिज्जंति, तंजहा- उसभे इ वा, पढमराया इ वा, पढमभिक्खायरे इ वा, पढमजिणे इ वा, पढमतित्थ-यरे इ वा ॥ २१० ॥

ऋषभदेव के नाम.

ऋषभदेव के ओर नाम प्रथम राजा, प्रथम साधु, प्रथम जिन, प्रथम तीर्थंकर सब मिल के पांच नाम हैं.

कल्पवृक्ष का रस कम होने से ममत्व बढा परस्पर युगलिक लड़ने लगे हा, मा, धिक ऐसी नीति से मानते नहीं थे ऋषभदेव के पास सबने जाकर वह बात सुनाई प्रभुने कहा अब तुमारे को एक राजा मुकरर करना कि जो गुनहगारको दंड देवे उन्होंने वह मंजूर किया और नाभिकुलकर को राजा के लिये प्रार्थना की ऋषभदेव को योग्य देखकर नाभिकुलकरने उन युगलिकों द्वारा राजा बनाने को राज्याभिषेक के लिये कमल पत्रों में जल लाने को कहा वे लावें उस पहिले इन्द्र ने अवधि ज्ञान द्वारा जान कर स्वयं आकर प्रभु को योग्य रीति से राज्याभिषेक की सब विधि की युगलिक आये तब ऋषभदेव

को विभूषित देखकर इन्द्र का विनय रखने को उसकी पूजन में भेद न पड़े इस लिये प्रभु के चरणों में जल डाला इन्द्रने प्रसन्न होकर कुबेर द्वारा ऋषभदेव के लिये जो सब समृद्धि से भरपूर नगरी बनाई. जो १२ योजन लंबी ९ योजन चौडी थी उसका नाम "विनीता" रखा और शत्रु के योधा से अजित थी इसलिये दूसरा नाम अयोध्या हुआ।

उग्रभोग राजन्य क्षात्रिय ऐसे चार कुलों की स्थापना की।

कल्पवृक्ष की त्रूटी से युगलिकों को खाने की मुश्केली हुई उससे जो फल फूल मिले वो खाने लगे परंतु पाचन नहीं होने से ऋषभदेव ने खाने की विधि बताई पहिले छिलके उतारना बताया (२) पानी में भिगो कर खाना बताया, (३) बगल में अनाज रख गरम कर खाना बताया अंत में अग्नि वृक्षों के घर्षण से उत्पन्न हुआ देखकर युगलिक गभराये लेने लगे जलकर भागे, प्रभु को फर्याद की प्रभु ने मट्टी के बरतन बना कर उनको पहिले बताया कि ऐसे बरतन बनाकर उसको पका कर उसमें अनाज पका कर खाओ कुंभार कला के बाद प्रभु ने लोहार, चितारा, कपडा बुनना, और हजाम की ऐसी पांच मुख्य कला और प्रत्येक के २० भेद होने से कुल १०० भेद शीखाये ।

उसभे णं अरहा कोसलिए दक्खे दक्खपइराणे पडिरूवे अल्लीणे भद्दए विणीए वीसं पुव्वसयसहस्साइं कुमारवासमज्झे वसइ, वसित्ता तेवट्ठिं पुव्वसयसहस्साइं रज्जवासमज्झे वसइ, तेवट्ठिं च पुव्वसयसहस्साइं रज्जवासमज्झे वसमाणे लेहाइआओ गणियप्पहाणाओ सउणरुयपज्जवसाणाओ बावत्तरिं कलाओ, चउसट्ठिं महिलागुणे, सिप्पसयं च कम्माणं, तिन्निवि पयाहिआए उवदिसइ, उवदिसित्ता पुत्तसयं रज्जसए अभिसिंचइ, अभिसिंचित्ता पुणरवि लोअंतिएहिं जिअकप्पिएहिं देवेहिं ताहिं इट्ठाहिं जाव वग्गूहिं, सेसं तं चेव सव्वं भाणिअव्वं, जाव दाणं दाइआणं परिभाइत्ता जे से गिम्हाणं पढमे मासे पढमे पक्खे चित्तबहुले, तस्स णं चित्तबहुलस्स

अट्ठमीपक्खे एं दिवसस्स पच्छिमे भागे सुदंसणाए सीयाए सदेवमणुआसुराए परिसाए समणुगम्ममाणमग्गे जाव विणीयं रायहाणिं मज्झंमज्झेणं णिग्गच्छइ, णिग्गच्छित्ता जेणेव सिद्धत्थवणे उज्जाणे जेणेव असोगवरपायवे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता असोगवरपायवस्स जाव सयमेव चउमुट्ठिअं लोअं करेइ, करित्ता छट्ठेणं भत्तेणं अपाणएणं आसाढाहिं नक्खत्तेणं जोगमुवागएणं उग्गाणं भोग्गाणं राइण्णाणं खत्तियाणं च चउहिं पुरिससहस्सेहिं सद्धिं एगं देवदूसमादाय मुंडे भवित्ता आगाराओ अणगारियं पव्वइए ॥ २११ ॥

ऋषभदेव प्रभु सब उत्तम गुणों से भूषित थे २० लाख पूर्व कुमार रहे ६३ लाख पूर्व राज्याधीश रहे उस समय पर लेखन वगैरह गणित प्रधान पत्नी का अनाज जानना तक पुरुष की ७२ कलाएं सीखाई स्त्री की ६४ कलाए शिल्प सो जाति का ये तीन बातें प्रजा के हितार्थ सीखाई और १०० पुत्रों को राज्याभिषेक किया ।

पुरुष की ७२ कलाएं ।

लेखन, गणित, गीत, नृत्य, वाद्य, पठन, शिक्षा, ज्योतिष, छंद, अलंकार, व्याकरण, निरुक्ती, काव्य, कात्यायन, निघंटु, गजारोहण, अश्वारोहण उन दोनों की शिक्षा, शास्त्राभ्यास, रस, मंत्र, यंत्र, विष, खन्य, गंधवाद, प्राकृत, संस्कृत, पैशाचिक अपभ्रंश, स्मृति, पुराण, विधि, सिद्धांत, तर्क, वैद्यक वेद आगम संहिता इतिहास, सामुद्रिक विज्ञान, आचार्य कविद्या, रसायन, कपट, विद्यानुवाद, दर्शन, संस्कार, धूर्त, संबलक, मणिकर्म, तरु चिकित्सा, खेचरी कला, अमरी कला, इंद्रजाल, पाताल सिद्धि, यंत्रक, रसवती, सर्व करणी प्रासाद लक्षण, पण, चित्रोपल, लेप, चर्म कर्म पत्र छेद, नख छेद, पत्र परीक्षा, वशीकरण, काष्ठ घटन, देश भाषा, गारुड, योगांग धातुकर्म केवल विधि शकुन रुत ।

स्त्री की ६४ कलाएं।

नृत्य, औचित्य. चित्र वार्जित्र, मंत्र, तंत्र, धन वृष्टि, कलाकृष्टि. संस्कृत वाणी, क्रिया कल्प, ज्ञान, विज्ञान, दंभ, जल स्थंभ गीत. ताल, आकृति गोपन आराम रोपण, काव्य शक्ति, वक्रोक्ति, नर लक्षण. गज परीक्षा, अश्व परीक्षा वास्तु शुद्धि लघु बृद्धि, शकुन विचार धर्माचार, अंजन योग. चूर्ण योग, गृही धर्म, सुप्रसादन कर्म. सोना सिद्धि. वर्णिका वृद्धि, वाक पाटव, कर लाघव. ललित चरण, तैलसुरभिकरण, मृत्योपचार, गेहाचार, व्याकरण, पर निराकरण, विणानाद वितंडावाद, अंकस्थिति, जनाचार, कुंभक्रम, सारिश्रम, रत्न मणिभेद, लिपि परिच्छेद, वैद्य क्रिया, कामा विष्करण, रसोई, के शबंध, शालि खंडन. मुख मंडन, कथा कथन, कुसुम ग्रंथन, वरवेश सर्व भाषा विशेष, वाणिज्य. भोज्य, अभिधान परिज्ञान, यथा स्थान आभूषण धारण, अंत्याचारिका और प्रहेलिका.

अठारह लिपि।

हंस, भूत, यक्ष, राक्षस, उड्डि, यावनी, तुरकी, कीरी, द्राविडी, सैंधवी, मालवी. बडी, नागरी, भाटी, पारसी, अनिमित्ति, चाणाकी मूल देवी।

एक से लेकर दश दश गुणी संख्या परार्ध तक संख्या बताई।

ऋषभदेव ने ब्राह्मी कुमारी को जमणे हाथ से अठारह लिपि सिखाई सुन्दरी को गणित सिखाया भरत को काष्ट कर्म और बाहु बली को पुरुष लक्षण सिखाये.

ऋषभदेव के सोपुत्र।

भरत, बाहुवलि, शंख, विश्वकर्मा, विमल, सुलक्षण, अमल. चित्रांग, ख्यात कीर्त्ति, वरदत्त, सागर, यशोधर, अमर, रथवर, कामदेव, ध्रुव, वत्सनंद, सुर, सुनंद, कुरु, अंग, बंग, कौशल, वीर. कलिंग, मागध, विदेह, संगम, दशार्ण, गंभीर, वसुवर्मा, सुवर्मा, राष्ट्र, सौराष्ट्र, बुद्धिकर, विविधिकर, सुयशा यशः कीर्त्ति, यशस्कर, कीर्त्तिकर, सुरण, ब्रह्मसेन, विक्रांत, नरोत्तम, पुरुषोत्तम, चंद्रसेन, महासेन, नभसेन, भानु, सुकांत, पुष्पयुत, श्रीधर, दुर्दश, सुसुमार, दुर्जय, अजयमान, सुधर्मा, धर्मसेन, आनंदन, आनंद, नंद, अपराजित, विश्वसेन, हरिषेण, जय, विजय, विजयंत, प्रभाकर अरिदमन, मान, महाबाहु,

दीर्घबाहु, मंघ, सुघोष, विश्व, वराह, सुसेन. सेनापति, कुंजरवल, जयदेव, नागदत्त, काश्यप, वल, वीर, शुभमति सुमति, पद्मनाभ, सिंह, सुजाति, संजय, सुनाम मरुदेव चित्तहर, सरवर. द्रढरथ, प्रभंजन.

देशों के थोडेनाम।

अंग, वंग, कलिंग, गोड, चौड, करणाट, लाट, सौराष्ट्र. काश्मीर, सौवीर. आभर, चीन, महाचीन, गुर्जर, बंगाल, श्रीमाल, नेपाल, जहाल, कौशल, मालव, सिंहल, मरुस्थल.

इस तरह सौ पुत्रों को राज्य दिया तब लोकांतिक देवों ने विज्ञप्ति की कि आप धर्म तीर्थ प्रवर्तावे। प्रभुने पहिले से ही अपना दीक्षा काल अवधि ज्ञान से जान लिया था इसलिये धन वगैरह उत्तम वस्तुओं का सम्बंध छोड़कर पुत्र पौत्रों को हिस्से बांट दिये और वार्षिक दान देना शरु किया और चैत्र वदी ८ के रोज दिन के तीसरे पहर में सुदंसणा पालखी में बैठकर विनीता नगरी से वहार आकर सिद्धार्थ वन में अशोक वर पादप के नीचे पालखी से उतर कर सब अलंकार छोड़कर चउविहार छट्ट की तपस्या में चंद्र नक्षत्र पूर्वाषाढा में उग्र भोग राजन्य क्षत्रियों के ४००० पुरुषों के साथ एक देव दूष्य वस्त्र ग्रहण मुंड होकर साधु हुए.

(चार मुठी लोच होने बाद थोड़े वाल बाकी रहगये वो इन्द्र ने सुशोभित देखकर विज्ञप्ति की कि आप रखें प्रभु ने उसकी विज्ञप्ति सुनकर उन वालों को रहने दिये)

प्रभु ने दीक्षा ली परन्तु भिक्षा लेने को गये तब कोई भी भिक्षा देना नहीं जानता था और हाथी घोड़ा कन्या धन भेट करे वो प्रभु लेवे नहीं न उत्तर देते थे जिससे ४००० दीक्षितों ने भूख के दुःख का निवारण प्रभु से पूछा उत्तर न मिलने से घर जाने को अच्छा न समझा तब गंगा के किनारे फल फूल खाने वाले तापस बने परन्तु अन्तराय कर्म को हटाने को प्रभु तो समर्थ होकर विचरते ही रहे.

कच्छ महा कच्छ के नमि विनमि पुत्रों को ऋषभदेव ने पुत्र माने थे वे दोनों राज्य बांटने के वक्त विदेश गये थे जिससे जब आये तब प्रभु को नहीं देखकर उनके पीछे पीछे फिरे और प्रभु को साधु अवस्था में मौन देखकर सेवा करने

रहे, एक दिन धरणेन्द्र ने प्रभु की भक्ति में दोनों को रक्त जान कर संतुष्ट होकर वैताढ्य पर्वत पर दोनों को राज्य दिया और विद्यायें दी उन दोनों का परिवार भी साथ गया दक्षिण श्रेणि में नमि और उत्तर श्रेणि में विनमि रहा उस दिन से विद्याधरों का वंश चला भरत महाराजा दोनों का दादा था उसको पूछ कर दोनों ने इंद्र की सहाय से दक्षिण में ५० और उत्तर में ६० नगर बसाये।

प्रभु का प्रथम पारणा ।

प्रभु विनीता से दीक्षा लेकर फिरते २ हस्तिनापुर गये वहां पर बाहु बालिका पुत्र सोम प्रभा राज्य करता था उसका पुत्र श्रेयांस कुमार ने ऋषभदेव को साधु वेष में देखे और जाति स्मरण ज्ञान शुभ भाव से होजाने से पूर्व भव का संबंध देख कर साधु को कैसा आहार देना वो जान कर वैशाख सुद ३ अक्षय तृतीया के दिन इक्षु (शेरडी) के रस के घड़े जो कोई भेट कर गया था उसका दान प्रभु को दिया प्रभु ने भी हाथ में रस लेकर पान किया उस दिन से साधु को कैसा आहार देना वो लोगों ने श्रेयांस कुमार से पूछ लिया और प्रभु को सर्वत्र शुद्धाहार दान मिलने लगा (श्रेयांस कुमार को लोगों ने पूछा कि आपने कैसे यह बात जानी तब श्रेयांसकुमार ने लोगों को कहा कि आठ भव का हमारे सम्बन्ध है (१) ललितांग नाम के ईशान देव लोग में प्रभु देव थे मैं निर्नामिका नामकी स्वयं प्रभा उनकी देवी थी. (२) पूर्व महा विदेह में वज्र जंघ राजा थे मैं श्रीमती नामकी रानी थी (३) उत्तर कुरु में युगल युगली हुए (४) सौधर्म देवलोक में दोनों मित्र देव हुए (५) अपर विदेह में वैद्यपुत्र और मैं उनका मित्र जीर्ण शेठ का पुत्र केशव था (६) प्रभु पुंडरीकिणी नगरी में वज्रनाभ और मैं उनका सारथी था (७) सर्वार्थ सिद्ध विमान में दोनों देव (८) प्रभु ऋषभदेव और मैं उनका प्रपौत्र हुआ किन्तु मुझे जाति स्मरण उनका साधु वेष देखने से हुआ तब मैं ने पूर्व में साधुपणा लेकर गोचरी ली थी वो याद आने से और प्रभु को पिछानने से उत्तम सुपात्र जानकर निर्दोष आहार दिया)

प्रभुने पूर्व भव में बारह पहर तक बैल का मुंह बंधवायाथा उस पाप से इतने दिन शुद्धाहार न मिला.

उसभे णं अरहा कोसालिए एगं वाससहस्सं निच्चं वोसट्ठकाए चियत्तदेहे जे केइ उवसग्गा जाव० अप्पाणं भावेमाणस्स इक्कं वाससहस्सं विइक्कंतं, तओ णं जे से हेमंताणं चउत्थे मासे सत्तम पक्खे फग्गुणबहुले, तस्स णं फग्गुणबहुलस्स इक्कारसीपक्खेणं पुव्वण्हकालसमयंसि पुरिमतालस्स नयरस्स वहिआ सगडमुहंसि उज्जाणंसि नग्गोहवरपायवस्स अहे अट्ठमेणं भत्तेणं अपाणएणं आसाढाहिं नक्खत्तेणं जोगमुवागएणं झाणंतरिआए वट्टमाणस्स अणंते जाव० जाणमाणे पासमाणे विहरइ ॥ २१२ ५

एक हजार वर्ष तक प्रभुजी छद्मस्थ अवस्था में रहे और साधुपना योग्य पालने से १००० वर्ष बाद फागण वदी ११ के रोज पहले पहर में पुरिमतालनगर के शकट मुख उद्यान में वड़ वृक्ष के नीचे तेले के चउ विहार तप में पूर्वाषाढा नक्षत्र में चन्द्र योग आने पर शुक्ल ध्यान के दूसरे पाया में प्रभु को केवल ज्ञान हुआ सर्वज्ञ होकर सबको प्रत्यक्ष देखते विचरने लगे.

विनितानगरी के पुरिमताल नाम के पुरा में प्रभुको केवल ज्ञान हुआ उस समय भरत महाराज की आयुधशाला में देवताधिष्ठित चक्ररत्न हुआ तो भी धर्म रक्त भरत महाराजा ने प्रभु का महिमा पहला किया मरुदेवा माता जो पुत्र वियोग से रोती थी उसको हाथी पर बैठा कर लेचले रास्ते में पुत्र के वैभव की बात सुनकर हर्ष के आंसु आने से आंखें खुलगई और दूर से ऋद्धि देख कर विचारने लगे कि मैने पुत्र के लिये इतना दुःख भोगा परन्तु ऐसी ऋद्धि वाला पुत्र मुझे कहलाता भी नहीं था इसलिये सब स्वार्थी है! अपना आत्मा ही राग द्वेष से व्यर्थ कर्म बन्ध करता है । ऐसा विचार में केवल ज्ञान हुआ और आयु भी पूर्ण हुई थी जिससे मुक्ति में गये देवोंने मरुदेवा का अंतिम महोत्सव किया पीछे प्रभु के पास गये प्रभुने देशना दी भरत के ५०० पुत्र ७०० प्रपुत्र ने दीक्षा ली ऋषभसेन आदि ८४ गणधर स्थापन किये.

ब्राह्मी ने दीचाली श्रावक धर्म भरत ने स्वीकृत किया, सुन्दरी को भरत महाराज दीक्षा नहीं लेने दी जिससे वो श्राविका हुई कच्छ महा कच्छ वगैरह ने तापस दीक्षा को छोड़ फिर दीक्षाली.

भरत महाराज चक्ररत्न से ६०००० वर्ष तक फिर कर छे खंड साधकर आये इतने समय तक सुन्दरी ने तपकर काया को सुखादी अयोध्या में भरतजी आने पर वैराग्य में दृढ सुन्दरी ने समझा कर दीक्षाली.

प्रभु के पास ९८ भाई ने जाकर पूछा कि भरत राजा हमें कहता है कि आप हमारे वश में रहो तो हमें क्या करना चाहिये ! प्रभु ने उनको वैतालिय अध्ययन से संसार तृष्णा को बढती बनाकर कहा कि तृष्णा का छेद करो ! अर्थात् दीक्षा विना मुक्ति नहीं होती तब सब ने उसी वक्त दीक्षाली.

बाहुबली को भी भरत ने कहलाया कि मेरे वश में रहो, तब बाहुबली ने उसके साथ युद्ध किया बड़ा युद्ध हुआ इन्द्र ने आकर कहा कि बहुत मनुष्य मरगये अब दोनों भाई दृष्टि युद्ध वचन युद्ध बाहुयुद्ध मुष्टियुद्ध दंडयुद्ध स्वयं करो सब में भरत हारा तब उसने चक्र मारा बाहुबली एक गोत्र का होने से चक्र लगा नहीं तब भरत ने मुक्की मारी बाहुबल को क्रोध चडा उसने मुकी मारने को उठाई परन्तु बड़ा भाई का नाश करना बुरा समझ कर वो ही मुष्टी से अपने बालों का लोच कर साधु होगया, भरत को बड़ा खेद हुआ चरणों में पड़ा क्योंकि राज्य लोभ और मान से ९९ भाई का अपमान किया था परंतु निराकांक्षी बाहुबली ने उसको बोध देकर संतुष्ट किया तब तक्ष शिला का राज्य उसके पुत्र को दिया और भरत अयोध्या लौट आये. बाहुबलि ने दीक्षा लेकर विचारा कि:-

९८ भाई छोटे होने पर भी दीक्षा लेने से बड़े थे उन को मैं उम्र में बड़े होने से कैसे वंदन करूं ? इसलिये केवल ज्ञान प्राप्त करने को एक वर्ष तक वो कायोत्सर्ग में रहे ऋषभदेव प्रभुने ब्राह्मी सुंदरी साध्वी द्वारा बोध कराकर अपने पास बुलाये बाहुबली ने मान को दूरकर साधुओं को वंदनार्थ जाने को पैर उठाया कि शीघ्र केवल ज्ञान हुआ.

भरत महाराजा ने एक दिन विचारा कि सब भाई साधु हुये तो मैं उनकी भक्ति करूं ! जिमाने के लिये ५०० गाड़ी भरकर मिठाई ले आये-प्रभुने साधु-

ओं का आचार समझाकर राजपिंड और साधु निमित्त बनाया और सामने लाया इत्यादि दोष युक्त आहार न लेने दिया तब भरत महाराजा ने पूछा कि मैं उस का क्या करूं ? इन्द्रने कहा आपसे अधिक गुणियों की भक्ति करो तब से साधु नहीं पर साधु जैसी निस्पृही वृत्ति रखने वाले बारह व्रतधारी ब्रह्मचर्य को प्रधान मानने वाले माहन बोलने वाले ब्रह्म तत्त्वविद् ब्राह्मणों को भोजन जिमाया उनको पिछानने के लिये सम्यक् दर्शन ज्ञान चारित्र तीन रत्न प्रधान मानने वाले यह हैं इसलिये उनके कंगणी रत्न से तीन रेखायें की पीछे वे ही रेखायें यज्ञोपवित के रूप में परिवर्तन हुई प्रजा के सुखार्थ लोक नीति प्रधान ऋषभदेव की स्तुति रूप चार वेद भरतजी ने बनाये उन द्वारा ब्राह्मण ज्ञान देने लगे।

(हिंसक यज्ञ की प्रवृत्ति होने से और ब्राह्मणों ने निःस्पृहता छोड़दी जिससे जैनधर्म से धीरे धीरे ब्राह्मण अलग हुये और वेद की गौणता होगई जैनों ने दया प्रधान धर्म स्याद्वाद नाम से प्रचलित किया)

ऋषभदेव प्रभु जब आते थे तब भरत महाराजा उद्यान में वांदने को जाते वैराग्य से भरी हुई वाणी सुनकर लीन होता था एक दिन महल में आरिसा (आयना) भवन में वस्त्रालंकार पहरते समय एक अंगूठी निकल पड़ी तब शोभा कम देखकर सब भूषण उतारे तो जान लिया कि शोभा पर पुद्गल (जड पदार्थ) से है ! उसमें कौन भव्यात्मा मोह करेगा ! आत्म भावना में दृढता हुई और शुद्ध भाव से केवल ज्ञान प्राप्त किया, देवता ने मुनि वेश दिया वो पहरकर १०००० दस हजार दीक्षित राजाओं के साथ साधुपन में फिरकर मोक्ष में गये भरत का पुत्र आदि यशः उस का पुत्र महायश, अभिबल, बल-भद्र, बलवीर्य, कीर्त्तिवीर्य, जलवीर्य, दंडवीर्य ऐसे आठ वंश परम्परा आरिसा भवन में केवली होकर मोक्ष गये.

उसभस्स णं अरहओ कोसलिअस्स चउरासीई गणा, चउरासीई गणहरा हुत्था ॥ २१३ ॥

उसभस्स णं० उसभसेणपामुक्खाणं चउरासीइओ समण-साहस्सीओ उक्कोसिया समणसंपया हुत्था ॥ २१४ ॥

उसभस्स णं० बंभिसुंदरिपामुक्खाणं अज्जियाणं तिण्णि सयसाहस्सीओ उक्कोसिया अज्जियासंपया हुत्था ॥ २१५ ॥

उसभस्स णं० सिज्जंसपामुक्खाणं समणोवासगाणं तिण्णि सयसाहस्सीओ पंचसहस्सा उक्कोसिया समणोवासगसंपया हुत्था ॥ २१६ ॥

उसभस्स णं० सुभद्दापामुक्खाणं समणोवासियाणं पंचसयसाहस्सीओ चउपण्णं च सहस्सा उक्कोसिया समणोवासियाणं संपया हुत्था ॥ २१७ ॥

उसभस्स णं० चत्तारि सहस्सा सत्तसया पण्णासा चउद्दसपुव्वीणं अजिणाणं जिणसंकासाणं जाव उक्कोसिया चउद्दसपुव्विसंपया हुत्था ॥ २१८ ॥

उसभस्स णं नव सहस्सा ओहिनाणीणं उक्कोसिया० ॥२१९॥

उसभस्स णं वीससहस्सा केवलनाणीणं उक्कोसिया ०॥२२०॥

उसभस्स णं० वीससहस्सा छच्च सया वेउव्वियाणं० उक्कोसिया० ॥ २२१ ॥

उसभस्स णं० बारस सहस्सा छच्च सया पण्णासा विउलमईणं अड्ढाइज्जेसु दीवसमुद्देसु सन्नीणं पंचिंदियाणं पज्जत्तगाणं मणोगए भावे जाणमाणाणं पासमाणाणं उक्कोसिआ विउलमइसंपया हुत्था ॥ २२२ ॥

उसभस्स णं० बारस सहस्सा छच्च सया पण्णासा वाईण० ॥ २२३ ॥

उसभस्स णं० वीसं अंतेवासिसहस्सा सिद्धा, चत्तालीसं अज्जियासाहस्सीओ सिद्धाओ ॥ २२४ ॥

उसभस णं० अरहओ वावीससहस्सा नवसया अणुत्तरो-ववाइयाणं गइकल्लाणाणं जाव भद्दाणं उक्कोसिआ ॥ २२५ ॥

ऋषभदेव का परिवार.

८४ गणधर, ८४ गण, ऋषभसेन प्रमुख, ८४ हजार साधु, ब्राह्मी सुंदरी वगेरह ३ लाख साध्वी श्रेयांस वगेरह ३०५००० श्रावक, सुभद्रा वगेरह ५५४००० श्राविका, ४७५० चौद पूर्वीश्रुत केवली, नव हजार अवधि ज्ञानी, २०००० केवल ज्ञानी, २०६०० वैक्रिय लब्धि वाले, १२६५० विपुलमति पर्यव ज्ञानी १२६५० वादी थे, २०००० साधु चालीस हजार साध्वी मोक्ष में गई २२६०० साधु अनुत्तर विमान में गये.

उसभस्स णं० अरहओ दुविहा अंतगडभूमी हुत्था, तं-जहा-जुगंतगडभूमी य परियायंतगडभूमी य, जाव असंखि-ज्जाओ पुरिसजुगाओ जुगंतगडभूमी, अंतोमुहुत्तपरिआए अंतमकासी ॥ २२६ ॥

दो प्रकार की अंतकृत भूमि थी जुगांतकृत भूमि में असंख्यात पाट मोक्ष में गये, पर्याय अंतकृत भूमि में अंत मुहूर्त्त मे मरुदेवी मोक्ष में गई.

तेणं कालेणं तेणं समएणं उसभे अरहा कोसलिए वीसं पुव्वसयसहस्साइं कुमारवासमज्झे वसित्ता णं तेवट्ठिं पुव्वसय-सहस्साइं रज्जवासमज्झे वसित्ता णं तेसीइं पुव्वसयसहस्साइं अगारवासमज्जे वसित्ता णं एगं वाससहस्सं छउमत्थपरिआयं पाउणित्ता एगं पुव्वसयसहस्सं वाससहस्साणं केवलिपरिआयं पाउणित्ता पडिपुण्णं पुव्वसयसहस्सं सामण्णपरियागं पाउणि-त्ता चउरासीइं पुव्वसयसहस्साइं सव्वाउयं पालइत्ता खीणे वे-यणिज्जाउयनामगुत्ते इमीसे ओसप्पिणीए सुसमदुसमाए समाए बहुविइक्कंताए तिहिं वासेहिं अद्धनवमेहि य मासेहिं सेसेहिं जे

से हेमंताणं तच्चे मासे पंचमे पक्खे माहबहुले, तस्स णं माहबहुलस्स (ग्रं० ६००) तेरसीपक्खे णं उप्पिं अट्ठावयसेलसिहरंसि दसहिं अणगारसहस्सेहिं सद्धिं चोद्दसमेणं भत्तेणं अपाणएणं अभीइणा नक्खत्तेणं जोगमुवागएणं पुव्वण्हकालसमयंसि संपलियंकनिसण्णे कालगए विइक्कंते जाव सव्वदुक्खप्पहीणे ॥ २२७ ॥

२० लाख पूर्व कुमार वास, ६३ लाख पूर्व राज्य वास १००० छद्मस्थ दीक्षा १००० वर्ष कम एकलाख पूर्व केवलि पर्याय पालकर ८४ लाख वर्ष का आयुपूर्ण पालकर महा माम की कृष्ण तृयोदशी के रोज अष्टापद पर्वत उपर दस हजार साधुओं के साथ छ चौविहार उपवास में चन्द्र नक्षत्र अभिजित् आने पर प्रभात के प्रहर में पल्यंक आसन में बैठे हुए ऋषभदेव प्रभु सर्व दुःखों का क्षय कर मुक्ति में गये.

आसन कंपने से सौधर्म इन्द्र आया इस तरह ६४ इन्द्र मिले बाद तीन चिताए कराई एक में प्रभु को दूसरे में गणधरों को तीसरे में सामान्य साधुओं को स्नान कराके गोशीर्ष चन्दन का लेप कर हंस लक्षण वस्त्र ढांककर उत्तम चन्दन की लकड़ियें और सुगन्धी पदार्थों से जलाये सब देवों ने यथोचित निर्वाण महोत्सव की भक्ति की पीछे अग्नि बुझाकर बाकी जो हड्डियें रही थी वो कल्पानुसार सौधर्म इन्द्र ने दाहिणी उपर की दाढा ली ईशान इन्द्र ने उपर की डांबी दाढा ली चमरेंद्र बलींद्र ने नीचे की ली दूसरे देवों ने और हड्डीयें ली इन्द्र ने तीन चिताएं उपर तीन स्तुप बनवाये पिछे नंदीश्वर द्वीप में जाकर अठाइ महोत्सव कर अपने स्थानक को गये इन्द्रों ने जो दाढाएं ली थी उनकी पूजा देवलोक में करते हैं.

उसभस्स णं अरहओ कोसलियस्स कालगयस्स जाव सव्वदुक्खप्पहीणस्स तिण्णि वासा अद्धनवमा य मासा विइक्कंता, तओवि परं एगा सागरोवमकोडाकोडी तिवासअद्धनवमासाहियबायालीसाए वाससहस्सेहिं ऊणिया विइक्कंता,

नववाससया विइक्कंता, दसमस्सय वाससयस्स अयं असीइमे संवच्छरे काले गच्छइ ॥ २२८ ॥

तीसरा आरा के जब ३ वर्ष ८॥ मास बाकी रहे तब उनका मोक्ष हुआ अर्थात् ऋषभदेव और महावीर के बीच मे १ कोडा कोडी सागरोपम में ४२००० वर्ष कम इतना अंतर है और ६८० वर्ष बाद कल्पसूत्र लिखा गया है.

॥ सातवां व्याख्यान समाप्त होता है ॥

तेणं कालेणं तेणं समएणं समणस्स भगवओ महावीरस्स नव गणा, इक्कारस गणहरा हुत्था ॥ १ ॥

से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ—समणस्स भगवओ महावीरस्स नव गणा, इक्कारस गणहरा हुत्था ॥ २ ॥

समणस्स भगवओ महावीरस्स जिट्ठे इंदभूई अणगारे गोयमगुत्ते णं पंच समणसयाइं वाएइ, मज्झिमगए अग्गिभूई अणगारे गोयमगुत्ते णं पंचसमणसयाइं वाएइ, कणीअसे अणगारे वाउभूई गोयमगुत्तेणं पंच समणसयाइं वाएइ, थेरे अज्जिवियत्ते भारद्दाए गुत्तेणं पंच समणसयाइं वाएइ, थेरे अज्जसुहम्मे अग्गिवेसायणे गुत्तेणं पंच समणसयाइं वाएइ, थेरे मंडितपुत्ते वासिट्ठे गुत्तेणं अद्धुट्ठाइं समणसयाइं वाएइ, थेरे मोरिअपुत्ते कासव गुत्तेणं अद्धुट्ठाइं समणसयाइं वाएइ, थेरे अकंपिए गोयमे गुत्तेणं-थेरे अयलभाया हारिआयणे गुत्तेणं पत्तेयं एते दुण्णिनि थेरा तिण्णि तिण्णि समणसयाइं वाएंति, थेरे अज्जमेइज्जे-थेरे पभसे-एए दुण्णिवि थेरा कोडिन्ना गुत्तेणं तिण्णि तिण्णि समणयाइं वाएंति। से तेणट्ठेणं अज्जो!

एवं वुच्चइ—समणस्स भगवओ महावीरस्स नव गणा, इक्कारस गणहरा हुत्था ॥ ३ ॥

स्थविरावलि ।

वीर प्रभु के नवगण और ११ गणधर थे शिष्य का प्रश्न है कि ऐसा क्यों हुआ दूसरे तीर्थंकरों में जितने गण उतने गणधर है.

आचार्य उत्तर देते हैं:—

(१) इन्द्रभूति	गौतम गोत्र	५०० साधु को वाचना देते थे.	
(२) अग्निभूति	,,	,,	
(३) वायुभूति	,,	,,	
(४) आर्यव्यक्त	भारद्वाज गोत्र	,,	
(५) सौधर्म स्वामी	अग्निवेश्यायन,,	,,	
(६) मंडित पुत्र	वाशिष्ठ ,,	३५०	
(७) मौर्य पुत्र	काश्यप ,,	३५०	
(८) अकंपित	गौतम ,,	३००	एक
(९) अचलभ्राता	हारितायन ,,	३००	वाचना.
(१०) मेतार्य	कोडिन्न गोत्र	३००	एक
(११) प्रभास	,,	३००	वाचना.
		४४००	

इस बात से यह सूचन किया कि ८-९ और १-११ एक एक वाचनां देते थे उनका समुदाय साथ बैठकर पढते थे इससे नव समुदाय हुए और गणधर ११ हुए.

सव्वेवि णं एते समणस्स भगवओ महावीरस्स एक्कारसवि गणहरा दुवालसंगिणो चउदसपुव्विणो समत्तगणिपिडगधारगा रायगिहे नगरे मासिएणं भत्तेणं अपाणएणं काल गया जाव सव्वदुक्खप्पहीणा ॥ थेरे इंदभूई, थेरे अज्जसुहम्मे य सिद्धिगए महावीरे पच्छा दुण्णवि थेरा परिनिव्वुया ॥

जे इमे अज्जत्ताए समणा निग्गंथा विहरंति, एए णं सव्वे अज्जसुहम्मस्स अणगारस्स आवच्चिज्जा, अवसेसा गणहरा निरवच्चा वुच्छिन्ना ॥ ४ ॥

महावीर प्रभु के ११ गणधर १२ अंग के ज्ञाता, १४ पूर्व के जानने वाले समस्त सिद्धांत धारक, थे और राजग्रहनगर में एक मास के चौविहार उपवास से मोक्ष में गये हैं नवगणधर वीर प्रभु के समय में मोक्ष गये दोनों रहे थे इन्द्र भूति गौतम, और सुधर्मा स्वामी वे पीछे मोक्ष में गये. सबने अपना परिवार सुधर्मा स्वामी को दिया जिससे आज जितने साधु विचरते हैं वे सब सुधर्मा स्वामी का ही परिवार माना जाता है.

समणे भगवं महावीरे कासवगुत्ते णं । समणस्स णं भगवओ महावीरस्स कासवगुत्तस्स अज्जसुहम्मे थेरे अंतेवासी अग्गिवेसायणगुत्त १, थेरस्स णं अज्जसुहम्मस्स अग्गिवेसायणगुत्तस्स अज्जजंबुनामे थेरे अंतेवासी कासवगुत्तेणं २, थेरस्स णं अज्जजंबुणामस्स कासवगुत्तस्स अज्जप्पभवे थेरे अंतेवासी कच्चायणसगुत्ते ३, थेरस्स णं अज्जप्पभवस्स कच्चायणसगुत्तस्स अज्जसिज्जंभवे थेरे अंतवासी मणगपिया वच्छसगुत्ते ४, थेरस्स णं अज्जसिज्जंभवस्स मणगपिउणो वच्छसगुत्तस्स अज्जजसभद्दे थेरे अंतेवासी तुंगियायणसगुत्ते।५।

सुधर्मा स्वामि का शिष्य आर्य जंबू स्वामि काश्यप गोत्र के थे.

जंबू स्वामी ने सुधर्मा स्वामी की देशना सुनकर वैराग्य आने से ब्रम्हचर्य व्रत धारण कर घरको आकर मातपिता की आज्ञा चाही परन्तु उन्होंने आग्रह कर ८ कन्याओं के साथ स्यादी की रात्रि को आठ कन्याओं ने संसार विलास से युक्त करना चाहा, परन्तु जंबू स्वामी ने संसार की असारता बताकर वैराग्य वान्ती बनादी रात को ५०० चोर चोरी करने को आये थे वे सौभगार की बातें सुनकर समझ गये कि जिस धनकी आकांक्षा से हम यहां पर आकर चोरी करने का इरादा रखते हैं उस धन में इतना दुःख है कि वह छोड़कर

जंबू स्वामी जाते हैं तो हमें भी उसको छोड़ना चाहिये इन में प्रभवाजी बड़े थे ५०० चोर आठ स्त्री और जंबू स्वामी और सब के माता पिता कुल ५२७ ने एक साथ दीक्षा ली जंबू स्वामी तक केवल ज्ञान था सबसे अंतिम केवली मोक्ष में जाने वाले जंबू स्वामी हैं.

जंबू स्वामी के शिष्य प्रभवा स्वामी हुए उनका कात्यायन गोत्र था प्रभवा स्वामी के शिष्य शय्यंभवसूरि हुए उनका दूसरा नाम मनकपिता था उनका वच्छस गोत्र था.

शय्यंभवजी ब्राह्मण थे एक समय वो यज्ञ करते थे उस समय दो साधुओं ने कहा कि यज्ञ का वो इतना कष्ट उठाता है परन्तु तत्त्व को जानता नहीं है जिससे साधुओं के पीछे जाकर उनके गुरु प्रभवा स्वामी से पूछा कि तत्त्व क्या है? गुरु ने कहा कि तुझे तेरा यज्ञ कराने वाला बतावेगा जिससे पीछा आकर पूछा तो यज्ञ के नीचे गुप्त रखी हुई शांतिनाथ की प्रतिमा का दर्शन कराया जाति स्मरण ज्ञान प्रकट हुआ जिससे संसार की असारता नजर आई और सब को छोड़ साधु हुआ और सिद्धांत पढ़कर आचार्य हुए जो भार्या को छोड़कर आए थे उसको उसी समय पूछा कि तुझे कुछ गर्भ है! उसने कहा कि मनाक (थोड़ा दिन का) है पीछे पुत्र हुआ उसका नाम मनाक् (मनक) रहगया माता द्वारा सत्य बात जानकर छोटी उम्र में मनक् बालक अपने बाप के पास जाकर साधु हुआ उसकी थोड़ी उम्र (छे मास) देखकर सिद्धांतों का सार रूप दशवैकालिक सूत्र की रचना कर पढ़ाया आज भी वो सूत्र हरेक साधु को प्रथम पढ़ाया जाता है, शय्यंभवजी के शिष्य तुंगिकायन गोत्र के यशोभद्र शिष्य हुए.

यशोभद्रजी के दो शिष्य हुए संभूति विजय माढर गोत्र के थे, प्राचीन गोत्र के भद्रबाहु स्वामी थे संभूति विजय के शिष्य आर्य स्थूली भद्रजी गौतम गोत्र वाले हुए.

स्थूली भद्रजी नंदराजा के मंत्री शकडाल के बड़े पुत्र थे कला शीखने को एक कोश्या नाम की रूपवती गुणिका के घर को १२ वर्ष रहे थे राज्य खटपट से उस मंत्री की मृत्यु हुई और छोटे भाई श्रीयक की प्रेरणा से प्रधान पद देने को राजा ने बुलाये परन्तु रास्ते में संभूति विजय का उपदेश और प्रत्यक्ष बाप की मृत्यु का विचार से साधु होकर छोटे भाई को पदवी दिलाई उनकी सात भगीनिओं ने भी दीक्षा ली गुरुने योग्यता देखकर वोही कोश्या के घर को स्थूली

भद्र को भेज चार मास तक वेश्या ने उनको मुग्ध करना चाहा परन्तु मुनिराज ने उसको प्रतिबोध कर श्रावकव्रत धारण कराकर परम श्राविका बनाई. वेश्या रागवती होने पर भी उसके घर में रहकर ब्रह्मचर्य पालना दुष्कर होने से स्थूलीभद्र का महिमा अधिक माना जाता है प्रभवा स्वामी, शय्यंभव स्वामी, यशोभद्र, संभूतिविजय, भद्रबाहु यह पांच पूर्ण चौद पूर्वधारी हुए परन्तु सात साध्वीएं वांदने को गई उस समय स्थूलीभद्रजी ने अपनी विद्या का प्रभाव बताने को सिंह रूप किया वह बात जानकर भद्रबाहु जो स्थूलीभद्र को पढाने वाले थे उन्होंने १० पूर्व अर्थ साथ पढाये परन्तु संघ के आग्रह से ४ पूर्व मूल सूत्र दिये अर्थ नहीं दिया.

स्थूलीभद्रजी के दो शिष्य हुए एलापत्य गोत्र के आर्य महागिरि और वाशिष्ठ गोत्र के आर्य सुहस्ति स्वामी हुए.

आर्य महागिरि क्रियापात्र जिन कल्प विच्छेद होने पर भी उसकी तुलना करते थे आर्य सुहस्ति के हाथ से एक रंक ने दीक्षा पाकर एकही दिन में अजीर्ण रोग से मरने के समय उत्तम भाव रखने से उज्जयिनी नगरी में संप्रति नामका राजा हुआ और वो ही गुरु को रथयात्रा में देखकर जाति स्मरण ज्ञान पाकर पूर्वोपकारी गुरु को महल से नीचे उतर कर नमस्कार किया गुरु को स्मृति देने से श्रुतबल से गुरु ने उसको पिछान कर साधु होने को कहा परन्तु राजा ने वो अशक्य बताकर श्रावक व्रत लिये और जैनधर्म की महिमा बढाई १। लाख मंदिर सवा क्रोड प्रतिमा बनवाई जैनधर्म बढाने के उपाय किये अशोक राजा का वंशज संप्रति राजा हुआ है।

संखित्तवायणाए अज्जजसभद्दाओ अग्गओ एवं थेरावली भणिया. तंजहा—थेरस्स णं अज्जजसभद्दस्स तुंगियायणसगुत्तस्स अंतेवासी दुवे थेरा—थेरे अज्जसंभूअविजए माढरसगुत्ते, थेरे अज्जभद्दबाहू पाईणसगुत्ते, थेरस्स णं अज्जसंभूअविजयस्स माढरसगुत्तस्स अंतेवासी थेरे अज्जथूलभद्दे गोयमसगुत्ते, थेरस्स णं अज्जथूलभद्दस्स गोयमसगुत्तस्स अंतेवासी दुवे थेरा—थेरे अज्जमहागिरी एलावच्चसगुत्ते, थेरे

अज्जसुहत्थी वासिट्ठसगुत्ते, थेरस्स णं अज्जसुहत्थिस्स वासिट्ठसगुत्तस्स अंतेवासी दुवे थेरा सुट्ठियसुप्पडिबुद्धा कोडियकाकंदगा वग्घावच्चसगुत्ता, थेराणं सुट्ठियसुप्पडिबद्धाणं कोडियकाकंदगाणं वग्घावच्चसगुत्ताणं अंतेवासी थेरे अज्जइंददिन्ने कोसियगुत्ते, थेरस्स णं अज्जइंददिन्नस्स कोसियगुत्तस्स अंतेवासी थेरे अज्जदिन्ने गोयमसगुत्ते, थेरस्स णं अज्जदिन्नस्स गोयमसगुत्तस्स अंतेवासी थेरे अज्जसीहगिरी जाइस्सरे कोसियगुत्ते, थेरस्स णं अज्जसीहगिरिस्स जाइस्सरस्स कोसियगुत्तस्स अंतेवासी थेरे अज्जवइरे गोयमसगुत्ते, थेरस्स णं अज्जवइरस्स गोयमसगुत्तस्स अंतेवासी थेरे अज्जवइरसेणे उक्कोसियगुत्ते, थेरस्स णं अज्जवइरसेणस्स उक्कोसिअगुत्तस्स अंतेवासी चत्तारि थेरा—थेरे अज्जनाइले १ थेरे अज्जपोमिले २ थेरे अज्जजयंते ३ थेरे अज्जतावसे ४ थेराओ अज्जनाइलाओ अज्जनाइला साहा निग्गया, थेराओ अज्जपोमिलाओ अज्जपोमिला साहा निग्गया, थेराओ अज्जजयंताओ अज्जजयंती साहा निग्गया, थेराओ अज्जतावसाओ अज्जतावसी साहा निग्गया ४ इति ॥ ६ ॥

आर्य सुहस्ति के सुस्थित और सुप्रति बद्ध नामके दो शिष्य हुए जिनके गोत्र कोटिक काकंदग व्याघ्रापत्य था उनका शिष्य इन्द्र दिन्न कौशिक गोत्र का था उनका शिष्य आर्यदिन्न मुनि गौतम गोत्र के थे, उनके अंते वासी (अतिप्रिय शिष्य) आर्य सिंहगिरि कौशिक गोत्र के थे, उनके शिष्य जातिस्मरण ज्ञान वाले आर्यवज्र स्वामी गौतम गोत्र के थे.

आर्यवज्र स्वामी ।

छे मासकी वयमें किसी के पास परमें अपने पिता धनगिरि की दीक्षा सु-

भकर वज्रस्वामी को शुभ भावना से जातिस्मरण ज्ञान हुआ दीक्षा लेने का भाव कर माता को खेद लाने को रोना शुरु किया माने उसी पुत्र खेद लाकर उसके बापको दिया वो बोले कि गुरु आज्ञा से लेजाना हूं परन्तु अब लेकर तुझे पिछा नहीं मिलेगा ऐसा सुनकर भी माताने पुत्र का प्रेम छोड़ दीदि- या गुरुने उसका वोझा देखकर वज्रनाम रखा बडे होने से दीक्षा दी और उ- न्होंने छोटी उम्र में ही सब सूत्र दुसरों के मुह से सुनकर सीख लिये थे और अधिक ज्ञान होने से आचार्य पदवी वज्रस्वामी को ही मिली एक सेठ पुत्री ने उनके गुणों को सुनकर उनसे परणना चाहा जिसने पुत्री और धन दोनों उनके पास लेजा कर दिये परन्तु निराकांक्षि मुनि ने वैराग्य स्वरूप समझा कर क- न्या रुकमणी को दीक्षा दीलवाई और धन दीक्षा महोत्सव में खरचाया. दो वख्त देवोंने परीक्षा कर निस्पृही अप्रमादि मुनिको दो विद्यायें दी उनके प्र- त्युत्तम गुणों का कथन उनके चरित्र से ही जान लेना दशपूर्वधारी मुनि यहां तक रहे आर्यवज्र स्वामी के शिष्य आर्यवज्रसेन उत्कौशिक गोत्रके थे.

आर्य वज्रसेन के चार शिष्य हुए ।

आर्य नागिल, पोमिल्ल, जयंत, तापस उन चारों से नागिला, पोमिला, जयंति, तापसी शाखा निकली है.

वित्थरवायणाए पुण अज्जजसभद्दाओ पुरओ थेरावली एवं पलोइज्जइ, तंजहा—थेरस्स णं अज्जजसभद्दस्स तुंगिया- गणसगुत्तस्स इमे दो थेरा अंतेवासी अहावच्चा अभिण्णाया हुत्था, तंजहा—थेरे अज्जभद्दबाहू पाईणसगुत्ते, थेरे अज्जसं- भूयविजए माढरसगुत्ते, थेरस्स णं अज्जभद्दबाहुस्स पाईणस- गुत्तस्स इमे चत्तारि थेरा अंतेवासी अहावच्चा अभिण्णाया हुत्था, तंजहा—थेरे गोदासे १, थेरे अग्गिदत्ते २, थेरे जण्ण- दत्ते ३, थेरे सोमदत्ते ४ कासवगुत्तेणं, थेरेहिंतो गोदासेहिंतो कासवगुत्तेहिंतो इत्थणं गोदासगणे नामं गणे निग्गए, तस्स णं इमाओ चत्तारि साहाओ एवमाहिज्जंति, तंजहा—ताम-

लित्तिया १, कोडीवरिसिया २, पंडुवद्धणिया ३ दासीखब्बढि-
या ४, थेरस्स णं अज्जसंभूयविजयस्स माढरसगुत्तस्स इमे
दुवालस थेरा अंतेवासी अहावच्चा अभिण्णाया हुत्था. तंज-
हा—नंदणभद्द १ ॥ उवनंदण-भद्दे २ तह तीसभद्द ३ जसभद्दे
४। थेरे य सुमणभद्दे ५, मणिभद्दे ६ पुण्णभद्दे ७ य ॥ १ ॥

थेरे अ थुलभद्दे ८, उज्जुमई ९ जंबुनामधिज्जे १० य।
थेरे अ दीहभद्दे ११ थेरे तह पंडुभद्ददे १२ य ॥ २ ॥

उपर छोटी वाचना (संक्षेप से) कही बडी (विस्तार से) वाचना अब कहते हैं.

आर्य यशोभद्र से इस मुजब है:-

यशोभद्र के संभूतिविजय, भद्रबाहु शिष्य थे भद्रबाहु के चार शिष्य स्थविर गोदास, अग्निदत्त यज्ञदत्त, सोमदत्त काश्यप गोत्र के थे. गोदास से गोदास-गण निकला. उसकी चार शाखायें निकली तामलिसिका, कोटि वर्षि का, पुंड्र वर्धनिका, दासीं खर्वटिका.

थेरस्स णं अज्जसंभूअविजयस्स माढरसगुत्तस्स इमाओ
सत्त अंतेवासिणीओ अहावच्चा अभिण्णाया हुत्था, तंजहा-
जक्खा १ य जक्खदिण्णा २, भूया ३ तह चेव भूयदिण्णा य ४।
सेणा ५ वेणा ६ रेणा ७, भगिणीओ थूलभद्दस्स ॥ १ ॥

संभूतिविजय को १२ शिष्य पुत्र समान थे नंदभद्र, उपनंदभद्र, तिष्यभद्र, यशोभद्र, सुमनोभद्र मणिभद्र, पूणभद्र, स्थूलीभद्र, रुजुमति, जंबूनामधेय, दीर्घभद्र, पांडुभद्र संभूतिविजय की सात साध्वी जो स्थूलीभद्र की भगिनियें थी येजक्षा, जक्षदिन्ना, भूता, भूतदिन्ना, सेनावेणारेणा मुख्य साध्वी थीं ।

थेरस्स णं अज्जथूलभद्दस्स गोयमसगुत्तस्स इमे दो थेरा
अंतेवासी आहावच्चा अभिण्णाया हुत्था, तंजहा-थेरे अज्ज-

महागिरी एलावच्चसगुत्ते १, थेरे अज्जसुहत्थी वासिट्ठसगुत्ते २. थेरस्स णं अज्जमहागिरिस्स एलावच्चसगुत्तस्स इमे अट्ठ थेरा अंतेवासी अहावच्चा अभिएणाया हुत्था, तंजहा-थेरे उत्तरे १, थेरे बलिस्सहे २, थेरे धणड्ढे ३, थेरे सिरिड्ढे ४, थेरे कोडिन्ने ५, थेरे नागे ६, थेरे नागमित्ते ७, थेरे छलूए रोहगुत्ते कोसियगुत्तेणं ८, थेरेहिंतो णं छलूएहिंतो रोहगुत्तेहिंतो कोसियगुत्तेहिंतो तत्थ णं तेरासिया निग्गया। थेरेहिंतो णं उत्तरबलिस्सहेहिंतो तत्थ णं उत्तरबलिस्सहे नाम गणे निग्गए-तस्स णं इमाओ चत्तारि साहाओ एवमाहिज्जंति, तंजहा—कोसंबिया १, सोइत्तिया २, कोडंबाणी ३, चंदनागरी ४, थेरस्स णं अज्जसुहत्थिस्स वासिट्ठसगुत्तस्स इमे दुवालस थेरा अंतेवासी अहावच्चा अभिएणाया हुत्था, तंजहा-थेरे अ अज्जरोहण १, जसभद्दे २ मेहगणी ३ य कामिड्ढी ४। सुट्ठिय ५ सुप्पडिबुद्धे ६, रक्खिय ७ तह रोहगुत्ते ८ अ ॥ १ ॥

इसिगुत्ते ९ सिरिगुत्ते १०, गणी अ बंभे ११ गणी य तह सोमे १२। दस दो अ गणहरा खलु, एए सीसा सुहत्थिस्स ॥२॥

आर्य स्थूलीभद्र के आर्य महागिरि और आर्यसुहस्ती मुख्य शिष्य थे.

आर्य महागिरि के आठ मुख्य शिष्य थे. उत्तर, बलिस्सह, धनाढ्य, श्रीभद्र, कौडिन्य नाग, नागमित्र, षडुलक रोहगुप्त. षडुलक रोहगुप्त से जीव अजीव नोजीव नामकी तीन राशि वाला पंथ की उत्पत्ति हुई जो वर्तमान में वैशेषिक मत कहा जाता है.

अन्य दर्शनी के साथ एक वक्त चर्चा में गया वहां पर वाद में और चमत्कारी विद्या में रोहगुप्त गुरु के प्रताप से जीता तब राज्य सभा में अन्य दर्शनी ने जैन का पक्ष स्वीकार कर जीव और अजीव ऐसी दो राशि स्थापन की रोहगुप्त ने बात झूठी कर अपनी जय मनाने को जीव, अजीव, नोजीव (जैसे

छिपकली की कटी हुई पूंछ उछलती है) ऐसे तीन राशि स्थापन कर तीन लोक तीन देव इत्यादि बनाये जिससे राज्य सभा में जीतगया गुरु को सब बात सुनाई गुरुने कहा असत्य बोलकर जीतना बहुत बुरा है फिर जाकर माफी मांगो (मिथ्या दुष्कृत दो) वो बोला कि ऐसा नहीं होसक्ता चाहे आप भी मेरे से चर्चा करलो तब राज्य सभा में गुरु शिष्य का वाद हुआ निकाल नहीं हुआ तब देवी अधिष्ठित दुकान जहां सब वस्तु मिलती थी वहां से तीन वस्तु मंगाई सिर्फ जीव अजीव दो मिले गुरुने राज्य सभा में उसको निकाल दिया.

उत्तर और बलि स्सह से उत्तर बलिस्सह गच्छ निकला है, उसकी चार शाखाएं कोशांबिका, सौरितिका, कोडंबाणी, चन्द्र नागरी हुई.

आर्य सुहस्ति के १२ शिष्य मुख्य थे. आर्यरोहण, भद्रयशा, मेघगणि-कामर्द्धि, सुस्थित सुप्रतिबद्ध, रक्षित, रोहगुप्त, ऋषिगुप्त, श्रीगुप्त, ब्रह्म सोम काश्यप गोत्री आर्यरोहण से उद्देह गोत्र निकला. उसकी चार शाखा थीः—

थेरेहिंतो णं अज्जरोहणेहिंतो णं कासवगुत्तेहिंतो णं तत्थ णं उद्देहगणे नामं गणे निग्गए, तस्सिमाओ चत्तारि साहाओ निग्गयाओ, छच्च कुलाइं एवमाहिज्जंति। से किं तं साहाओ ? साहाओ एवमाहिज्जंति, तंजहा—उदुंबरिज्जिया १ मासपूरिआ २, मइपत्तिया ३, पुण्णपत्तिया ४, से तं साहाओ, से किं तं कुलाइं ? कुलाइं एवमाहिज्जंति, तंजहा—पढमं च नागभूयं, बिइयं पुण सोमभूइयं होइ। अह उल्लगच्छ तइअं ३ चउत्थयं हत्थलिज्जं तु ॥ १ ॥

उदुंबरिका, मासपूरिका, मतिपत्रिका, पूर्णपत्रिका और छे कुल. नागभूत सोमभूतिक, उल्लगच्छ, हस्तलिप्त, नंदित्य, पारिहासक, हुए.

पंचमगं नंदिज्जं ५, छट्ठं पुण पारिहासयं ६ होइ। उद्देहगणस्सेए, छच्च कुला हुंति नायव्वा ॥ २ ॥

हारितम गोत्र वाले श्रीगुप्त मुनि से चारण गच्छ निकला उसकी चार शाखाएं:—हारित मालाकारी, संकाशिका गवेधुका, वज्रनागरी हुई.

सात कुल—वत्सलिप्त, प्रीति धर्मिक, हालित्य, पुष्पमित्र, मालित्य, आर्य चेटक, कृष्ण सख हुए.

थेरेहिंतो णं सिरिगुत्तेहिंतो हारियसगुत्तेहिंतो इत्थ णं चारणगणे नामं गणे निग्गए. तस्स णं इमाओ चत्तारि साहाओ, सत्त य कुलाइं एवमाहिज्जंति, से किं तं साहाओ! साहाओ एवमाहिज्जंति, तंजहा—हारियमालागारी १, संकासीआ २, गवेधुया ३, वज्जनागरी ४। से तं साहाओ, से किं तं कुलाइं ! कुलाइं एवमाहिज्जंति, तंजहा—पढमित्थ वत्थलिज्जं १ बीयं पुण पीइधम्मिअं २ होइ। तइअं पुण हालिज्जं ३ चउत्थयं पूसमित्तिज्ज ॥ १ ॥

पंचमगं मालिज्जं ५ छट्ठं पुण अज्जवेडयं ६ होइ। सत्तमयं कण्हसहं ७ सत्त कुला चारणगणस्स ॥ २ ॥

थेरेहिंतो भद्दजसेहिंतो भारद्दायसगुत्तेहिंतो इत्थ णं उडुवाडियगणे नामं गणे निग्गए. तस्स णं इमाओ चत्तारि साहाओ तिण्णि कुलाइं एवमाहिज्जंति से किं तं साहाओ ! साहाओ एवमाहिज्जंति तंजहा—चंपिज्जिया १ भद्दिज्जिया२ काकंदिया ३ मेहालज्जिया। से तं साहाओ से किं तं कुलाइं! कुलाइं एवमाहिज्जंति तंजहा—भद्दजसियं १ तह भद्दगुत्तियं २ तइयं च होई जसभद्दं ३। एयाइं उडुवाडिय—गणस्स तिण्णेव य कुलाइं ॥ १ ॥

भारद्वायस गोत्री भद्रयश मुनि से उडुवाटिय गच्छ निकला उसकी शाखायें

चौंपिज्जिका, भद्रार्जिका, काकंदिका, मेखलार्जिका हुई तीनकुल भद्रयशिक, भद्रगुप्तिक, यशोभद्र हुए.

थेरेहिंतो णं कोमिड्ढिहिंतो कोडालसगुत्तेहिंतो इत्थ णं वेसवाडियगणे नामं गणे निग्गए तस्स णं इमाओ चत्तारि कुलाइं एवमाहिज्जंति । से किं तं साहाओ ! सा० तंजहा,— सावत्थिया १ रज्जपालिआ २, अंतरिज्जिया ३, खेमलिज्जिया ४ । से तं साहाओ, से किं तं कुलाइं ! कुलाइं एवमाहिज्जंति, तंजहा,—गणियं १ मेहिय २ कामड्ढिअं ३ च तह होइ इंदपुरगं ४ च । एयाइं वेसवाडिय—गणस्स चत्तारि उ कुलाइं ॥ १ ॥

कुंडलस गोत्री कामर्द्धि से वेपवाडिय गच्छ निकला उसकी चार शाखाए श्रावस्तिका, राज्यपालिका, अंतरंजिका चेमलिजिका, हुई चार कुल गणित, मोहित- कामर्द्धि, इंद्रपुरक.

थेरेहिंतो णं इसिगुत्तेहिंतो काकंदएहिंतो वासिट्ठसगुत्तेहिंतो इत्थ णं माणवगणे नामं गणे निग्गए, तस्स णं इमाओ चत्तारि साहाओ, तिण्णि य कुलाइं एवमाहिज्जंति, से किं तं साहाओ ? साहाओ एवमाहिज्जंति, तंजहा,—कासवज्जिया १, गोयमज्जिया २, वासिट्ठिया ३, सोरट्ठिया ४ । से तं साहाओ, से किं तं कुलाइं ? कुलाइं एवमाहिज्जंति, तंजहा,—इसिगुत्ति इत्थ पढमं १, बीयं इसिदत्तिअं मुणेयव्वं २। तइयं च अभिजयंतं ३, तिण्णि कुला माणवगणस्स ॥ १ ॥

वाशिष्ट गोत्री ऋषिगुप्त से कोष्टिक काकंदिसे माणवक गच्छ निकला उसकी चार शाखाए काश्यपर्जिका, गौतमार्जिका, वाशिष्ठिका, सौराष्ट्रिका, तीनकुल, ऋषिगुप्त, ऋषिदत्त, अभिजयंत, आर्य सुस्थित सुप्रतिबद्ध कौष्टिक काकंदि व्या-

प्रापत्य गोत्रवाले से कोटिक गच्छ निकला उसकी चार शाखा. उच्चानागरी, विद्याधरी, वज्री. मध्यमा, चारकुल ब्रह्मलिप्त, वत्सलिप्त, वाणिज्य, प्रश्नवाहन हुए उनमें पांचस्थविर आर्यइंद्रदिन्न प्रियग्रन्थ, काश्यपगोत्री विद्याधर गोपाल ऋषिदत्त, अर्हद्दत्त, हुए प्रियग्रन्थ से मध्यमा शाखा निकली है.

थेरेहिंतो सुट्ठिय–सुप्पडिबुद्धेहिंतो कोडिय–काकंदएहिंतो वग्घावच्चसगुत्तेहिंतो इत्थ णं कोडियगणे नामं गणे निग्गए, तस्स णं इमाओ चत्तारि साहाओ, चत्तारि कुलाइं एवमाहिज्जंति । से किं तं साहाओ ? साहाओ एवमाहिज्जंति, तंजहा–उच्चानागरि १ विज्जाहरी य २ वइरी य ३ मज्झिमिल्ला ४ य । कोडियगणस्स एया, हवंति चत्तारि साहाओ ॥ १ ॥

से तं साहाओ ॥ से किं तं कुलाइं ? कुलाइं एवमाहिज्जंति, तंजहा–पढमित्थ वंभलिज्जं १, बिइयं नामेण वत्थलिज्जं तु २ । तइयं पुण वाणिज्जं ३, चउत्थयं पण्हवाणयं ४ ॥ १ ॥

थेराणं सुट्ठियसुप्पडिबुद्धाणं कोडियकाकंदयाणं वग्घावच्चसगुत्ताणं इमं पंच थेरा अंतेवासी अहावच्चा अभिण्णाया हुत्था, तंजहा–थेरे अज्जइंददिन्ने १ थेरे पियगंथे २ थेरे विज्जाहरगोवाले कासवगुत्ते णं ३ थेरे इसिदिन्ने ४, थेरे अरिहदत्ते ५ । थेरेहिंतो णं पियगंथेहिंतो एत्थ णं मज्झिमा साहा निग्गया, थेरेहिंतो णं विज्जाहरगोवालेहिंतो कासवगुत्तेहिंतो कासवगुत्तेहिंतो एत्थ णं विज्जाहरी साहा निग्गया ॥ थेरस्स णं अज्जइंददिन्नस्स कासगुत्तस्स अज्जदिन्ने थेरे अंतेवासी गोयमसगुत्ते । थेरस्स णं अज्जदिन्नस्स गोयमसगुत्तस्स इमे दो थेरा अंतेवासी अहावच्चा अभिण्णाया हुत्था, तं०–थेरे

अज्जसंतिसेणिए माढरसगुत्ते १, थेरे अज्जसीहगिरी जाइस्सरे कोसियगुत्ते २। थेरेहिंतो णं अज्जसंतिसेणिएहिंतो माढरसगुत्तेहिंतो एत्थ णं उच्चानागरी साहा निग्गया। थेरस्स णं अज्जसंतिसेणियस्स माढरसगुत्तस्स इमे चत्तारि थेरा अंतेवासी अहावच्चा अभिण्णाया हुत्था, तंजहा-(ग्रं० १०००) थेरे अज्जसेणिए, थेरे अज्जकुबेरे, थेरे अज्जइसिपालिए। थेरेहिंतो णं अज्जसेणिएहिंतो एत्थ णं अज्जसेणिया साहा निग्गया, थेरेहिंतो णं अज्जतावसेहिंतो एत्थ णं अज्जतावसेहिंतो एत्थ णं अज्जतावसी साहा निग्गया, थेरेहिंतो णं अज्जकुबेरेहिंतो एत्थ णं अज्जकुबेरा साहा निग्गया,। थेरेहिंतो णं अज्जइसिपालिएहिंतो एत्थ णं अज्जइसिपालिया साहा निग्गया। थेरस्स णं अज्जसीहगिरिस्स जाइस्सरस्स कोसियगुत्तस्स इमे चत्तारि थेरा अंतेवासी अहावच्चा अभिण्णाया हुत्था, तंजहा-थेरे धणगिरी थेरे अज्जवइरे, थेरे अज्जसमिए, थेरे अरिहदिन्ने। थेरेहिंतो णं अज्जसमिएहिंतो गोयमसगुत्तेहिंतो इत्थ णं बंभदीविया साहा निग्गया, थेरेहिंतो णं अज्जवइरेहिंतो गोयमसगुत्तेहिंतो इत्थ णं अज्जवइरी साहा निग्गया। थेरस्स णं अज्जवइरस्स गोयमसगुत्तस्स इमे तिण्णि थेरा अंतेवासी अहावच्चा अभिण्णाया हुत्था, तंजहा थेरे अज्जवइरसेणे, थेरे अज्जपउमे, थेरे अज्जरहे। थेरेहिंतो णं अज्जवइरसेणेहिंतो इत्थ णं अज्जनाइली साहा निग्गया, थेरेहिंतो णं अज्जपउमेहिंतो इत्थ णं अज्जपउमा साहा निग्गया, थेरेहिंतो णं अज्जरहेहिंतो इत्थ णं अज्जजयंती-

साहा निग्गया। थेरस्स णं अज्जरहस्स वच्छसगुत्तस्स अज्जपूसगिरी थेरे अंतेवासी कोसियगुत्ते। थेरस्स णं अज्जपूसगिरिस्स कोसियगुत्तस्स अज्जफग्गुमित्ते थेरे अंतेवासी गोयमसगुत्ते। थेरस्स णं अज्जफग्गुमित्तस्स गोयमसगुत्तस्स अज्जधणगिरी थेरे अंतेवासी वासिट्ठसगुत्ते। थेरस्स णं अज्जधणगिरिस्स वासिट्ठसगुत्तस्स अज्जसिवभूई थेरे अंतेवासी कुच्छसगुत्ते। थेरस्स णं अज्जसिवभूइस्स कुच्छसगुत्तस्स अज्जभद्दे थेरे अंतेवासी कासवगुत्ते। थेरस्स णं अज्जभद्दस्स कासवगुत्तस्स अज्जनक्खत्ते थेरे अंतेवासी कासवगुत्ते। थेरस्स णं अज्जनक्खत्तस्स कासवगुत्तस्स अज्जरक्खे थेरे अंतेवासी कासवगुत्ते। थेरस्स णं अज्जरक्खस्स कासवगुत्तस्स अज्जनागे थेरे अंतेवासी गोअमसगुत्ते। थेरस्स णं अज्जनागस्स गोअमसगुत्तस्स अज्जजेहिले थेरे अंतेवासी वासिट्ठसगुत्ते। थेरस्स णं अज्जजेहिलस्स वासिट्ठसगुत्तस्स अज्जविण्हू थेरे अंतेवासी माढरसगुत्ते। थेरस्स णं अज्जविण्हुस्स माढरसगुत्तस्स अज्जकालए थेरे अंतेवासी गोयमसगुत्ते। थेरस्स णं अज्जकालयस्स गोयमसगुत्तस्स इमे दो थेरा अंतेवासी गोयमसगुत्ता—थेरे अज्जसंपलिए १, थेरे अज्जभद्दे २। एएसि णं दुण्हवि थेराणं गोयमसगुत्ताणं अज्जवुड्ढे थेरे अंतेवासी गोयमसगुत्ते। थेरस्स णं अज्जवुड्ढस्स गोयमसगुत्तस्स अज्जसंघपालिए थेरे अंतेवासी गोयमसगुत्ते। थेरस्स णं अज्जसंघपालिअस्स गोयमसगुत्तस्स अज्जहत्थी थेरे अंतेवासी कासवगुत्ते। थेरस्स णं अज्जहत्थिस्स कासवगुत्तस्स अज्जधम्मे थेरे अंतेवासी सावयगुत्ते। थेरस्स णं

अज्जधम्मस्स सावयगुत्तस्स अज्जसिंहे थेरे अंतेवासी कासवगुत्ते। थेरस्स णं अज्जसिंहस्स कासवगुत्तस्स अज्जधम्मे थेरे अंतेवासी कासवगुत्ते। थेरस्स णं अज्जधम्मस्स कासवगुत्तस अज्जसंडिल्ले थेरे अंतेवासी॥ वंदामि फग्गुमित्तं, च गोयमं धणगिरिं च वासिट्ठं। कुच्छं सिवभूइंपिय, कौसिय दुज्जंतकण्हे अ॥ १॥

विद्याधर गोपाल से विद्याधरी शाखा आर्यइंद्रदिन्न को गौतमगोत्र वाले आर्यदिन्न शिष्य थे.

आर्यदिन्न के दो शिष्य थे आर्य शांतिसेन माढर गोत्र आर्यसिंह गिरि जाति स्मरण ज्ञान वाले कौशिक गोत्रवाले थे. आर्यशांतिसेन से उच्चानगरी शाखा निकली है उनमें चार स्थविर हुए आर्य श्रेणिक, आर्य तापस, आर्य-कुवेर, आर्य ऋषिपाल.

आर्यश्रेणिक से श्रेणिक शाखा निकली, आर्य तापस से तापसी, शाखा निकली आर्यकुवेर से कुवेरी शाखा निकली, आर्य ऋषिपाल से ऋषिपालिक शाखा निकली.

आर्य सिंहगिरि के चार बड़े साधु स्थविर थे (१) धनगिरि, वज्रस्वामी आर्यसमिति, आर्य दिन्न आर्य समित से ब्रह्म दीपिका शाखा निकली. वज्र स्वामी से अज्जवईरी (आर्य वज्री) शाखा निकली.

वज्रस्वामी के तीन स्थविर प्रसिद्ध हुए. आर्य वज्रसेन, आर्य पद्म, आर्य रथ. आर्य वज्र से आर्य नाइली (आर्य नागिली) शाखा निकली, आर्य पद्म से पद्मा शाखा, और आर्य रथ से आर्य जयंती शाखा निकली है.

आर्य रथ वछस गोत्र के थे उनके शिष्य कौशिक गोत्र वाले आर्य पुष्प गिरि हुए. उनका शिष्य आर्य फल्गुमित्र गोतम गोत्र वाले थे उनका शिष्य धनगिरि वाशिष्ठ गोत्र के थे उनका शिष्य आर्य शिवभूति कोछस गोत्र के थे उन का शिष्य आर्यभद्र काश्यप गोत्र के थे उनका शिष्य वोही गोत्र के आर्य नक्षत्र शिष्य हुए उनका शिष्य आर्य रक्ष मुनि हुए.

आर्य रक्ष के शिष्य गौतम गोत्री आर्य नाग थे उनके शिष्य आर्य जेहिल वाशिष्ठ गोत्र के थे, उनके शिष्य माढर गोत्र के आर्य त्रिष्णु (त्रिश्नु) हुए. उनके शिष्य आर्य कालिक गौतम गोत्र के थे कालिकाचार्य के दो शिष्य आर्य संपलिक और यशोभद्र मुनि वोही गोत्र के थे.

उन दोनों का शिष्य आर्य वृद्ध स्थविर गौत्तम गोत्र के थे. विक्रम राजा जो उज्जयिनी में हुआ उसके समय में कुमुदचंद्र अपरनाम सिद्धसेन दिवाकर जिनों ने अनेक ग्रन्थ गद्य पद्य बनाये है संमति तर्क और कल्याण मंदिर प्रसिद्द है. उनके गुरु येही है. ऐसा ज्ञात होता है]

आर्यवृद्ध के शिष्य गौतम गोत्रवाले आर्य संघपालिक हुए उनके शिष्य आर्य धर्म सुव्रत गोत्रके थे. उनके शिष्य आर्यसिंह काश्यप गोत्री थे. उनके शिष्य आर्य धर्म काश्यप गोत्री थे उनके शिष्य आर्य संडिल थे.

उन सब स्थविरों की गाथा लिखते हैं ।

ते वंदिऊण सिरसा, भद्दं वंदामि कासवसगुत्तं । नक्खं कासवगुत्तं, रक्खंपिय कासवं वंदे ॥ २ ॥

वंदामि अज्जनागं, च गोयमं जेहिलं च वासिट्ठं । विरहु माढरगुत्तं, कालगमवि गोयमं वंदे ॥ ३ ॥

गोयमगुत्तकुमारं, संपलियं तहय भद्दयं वंदे । थेरं च अज्जवुड्ढं, गोयमगुत्तं नमंसामि ॥ ४ ॥

तं वंदिऊण सिरसा, थिरसत्तचरित्तनाणसंपन्नं । थेरं च संघवालिय, गोयमगुत्तं पणिवयामि ॥ ५ ॥

वंदामि अज्जहत्थिं, च कासवं खंतिसागरं धीरं । गिम्हाण पढममासे । कालगयं चेव सुद्धस्स ॥ ६ ॥

वंदामि अज्जधम्मं, च सुव्वयं सीललद्धिसंपन्नं । जस्स निक्खमणे देवो, छत्तं वरमुत्तमं वहइ ॥ ७ ॥

हत्थिं कासवगुत्तं, धम्मं सिवसाहगं पणिवयामि । सीहं कासवगुत्तं, धम्मंपिय कासवं वंदे ॥ ८ ॥

तं वंदिऊण सिरसा, थिरसत्तचरित्तनाणसंपन्नं । थेरं च अज्जजंबु, गोयमगुत्तं नमंसामि ॥ ९ ॥

मिउमद्दवसंपन्नं, उवउत्त नाणदंसणचरित्ते । थेरं च नंदियंपिय, कासवगुत्तं पणिवयामि ॥ १० ॥

तत्तो य थिरचरित्तं, उत्तमसम्मत्तसत्तसंजुत्तं । देवड्ढिगणि-खमासमणं, माढरगुत्तं नमंसामि ॥ ११ ॥

तत्तो अणुओगधरं, धीरं मइसागरं महासत्तं । थिरगुत्त-खमासमण, वच्छसगुत्तं पणिवयामि ॥ १२ ॥

तत्तो य नाणदंसण—चरित्ततवसुट्ठियं गुणमहंतं । थेरं कुमारधम्मं, वंदामि गणिं गुणोवेयं ॥ १३ ॥

सुत्तत्थरयणभरिए, खमदममद्दवगुणेहिं संपन्ने । देविड्ढिखमासमणे, कासवगुत्ते पणिवयामि ॥ १४ ॥

(स्थविरावली सम्पूर्णा)

मैं वंदन करता हूं, फलगुमित्र गौतम गोत्रवाले और धनगिरि वासिष्ठ गोत्र-वाले. कुत्सिक गोत्रवाले शिवभूति और दुज्जंत गोत्रवाले कृष्णमुनि को (१) काश्यप गोत्री भद्रमुनि. नक्षत्र और रक्षक मुनिको वंदन करता हूं (२) गौतम गोत्र वाले आर्यनाग वाशिष्ट गोत्र वाले जेहिल, माढर गोत्रवाले विष्णु और गौतम गोत्री कालकाचार्य को वंदन करता हूं. (३)

गौतम गोत्री गुप्तकुमार, संपालिक मुनि, भद्रमुनि और आर्यवृद्ध मुनिको नमस्कार करता हूं. ४

स्थिर धैर्य चारित्र और ज्ञान संपन्न काश्यप गोत्री संघपालक मुनि को वंदन करता हूं. ५

काश्यप गोत्री क्षमा सागर धीर आर्य हस्ती महाराज को वंदन करता हूं जो चैत्र सुदी में स्वर्गवासी हुए हैं, ६

उत्तम व्रतवाले शील लब्धियुक्त आर्य धर्म मुनि को वंदन करता हूं जिनके दीक्षा समय में देवता उत्तम छत्र धरके चला था. १

[पूर्व भवका कोई मित्र देवता हुआ था उसने भक्ति पूर्वक छत्र धराथा]

काश्यप गोत्री हस्तमुनि और मोक्ष साधन धर्ममुनि को मैं वंदन करता हूं. और सिंहमुनि और (दूसरे) धर्म मुनिको वंदन करता हूं.

उनके बाद में आर्य जंबू जो तीन रत्नों में उत्तम थे उनको वंदन करता हूं. ९

कोमल, सरल, तीन रत्न युक्त काश्यप गोत्री नंदिनी पिता मुनिको नमस्कार करता हूं.

उनके बाद स्थिर चारित्र वाले सम्यक्त्वधारक माढर गोत्री देवर्द्धि क्षमा श्रमण को वंदन करता हूं.

अनुयोग धारण करने वाले धैर्यवन्त बुद्धि के समुद्र महासत्व वाले वत्सग गोत्री स्थिर गुप्त मुनि को वंदन करता हूं.

ज्ञान दर्शन चारित्र तप संयुक्त गुणोंसे भरे हुए कुमार धर्म को वंदन करता हूं.

उसके बाद देवर्द्धि क्षमा श्रमण जो सूत्रार्थ रत्न से भरे हैं साधु गुणों से युक्त काश्यप गोत्री हैं उनको वंदन करता हूं (जिनों के समय में सूत्र लिखे हैं उनका कोई शिष्य ने गुरुमुखसे स्थविरावली सुनकर लिखी है भद्रबाहु विरचितकल्प सूत्र आदीश्वर चरित्र तक है ऐसा ज्ञान होता है.

आठवां व्याख्यान समाप्त.

॥ तेणं कालेणं तेणं समएणं समणं भगवं महावीरे वासाणं सवीसइराए मासे विइक्कंते वासावासं पज्जोसवेइ ॥ १ ॥

से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ 'समणे भगवं महावीरे वासाणं सवीसइराए मासे विइक्कंते वासावासं पज्जोसवेइ? जओ णं पाएणं अगारीणं अगाराइं कडियाइं उक्कंपियाइं छन्नाइं लित्ताइं गुत्ताइं घट्ठाइं मट्ठाइं संपधूमियाइं खाओदगाइं खायनिद्धमणाइं अप्पणो अट्ठाए कडाइं परिभुत्ताइं परिणामियाइं भवंति. से तेणट्ठेणं एवं वुच्चइ 'समणे भगवं महावीरे वासाणं सवीसइराए मासे विइक्कंते वासावासं पज्जोसवेइ ॥ २ ॥

जहा णं समणे भगवं महावीरे वासाणं सवीसइराए मासं विइक्कंते वासावासं पज्जोसवेइ, तहा णं गणहरावि वासाणं सवीसइराए मासे विइक्कंते वासावासं पज्जोसविंति॥३॥

जहा णं गणहरा वासाणं सवीसइराए जाव पज्जोसविंति, तहा णं गणहरसीसावि वासाणं जाव पज्जोसविंति॥४॥

जहा णं गणहरसीसा वासाणं जाव पज्जोसविंति, तहा णं थेरावि वासावासं पज्जोसविंति ॥ ५ ॥

जहा णं थेरा वासाणं जाव पज्जज्जोसविंति, तहा णं जे इमे अज्जत्ताए समणा निग्गंथा विहरंति, तेविअ णं वासाणं जाव पज्जोसविंति ॥ ६ ॥

जहा णं जे इमे अज्जत्ताए समणा निग्गंथा वासाणं सवीसइराए मासे विइंक्कते वासावासं पज्जोसविंति, तहा णं अम्हंपि आयरिया उवज्झाया वासाणं जाव पज्जोसविंति॥७॥

जहा णं अम्हंपि आयरिया उवज्झाया वासाणं जाव पज्जोसविंति, तहा णं अम्हेवि वासाणं सवीसइराए मासे विइक्कंते वासावासं पज्जोसवेमो, अंतरावि य से कप्पइ, नो से कप्पइ तं रयणिं उवाइणावित्तए ॥ ८ ॥

❀ नवम व्याख्यान—समाचारी चौमासा सम्बन्धी है ❀

भगवान महावीर के साधु एक मास २० दिन होने बाद पर्युषणा करते हैं शिष्य ने पूछा कि पर्युषणा क्यों करनी ? उसका आचार्य समाधान करते हैं.

साधु ग्रहस्थों के घरों में उतरते हैं वे अपने कार्य के लिये छत ऊपर सादरी (   ) से ढांके, चूना से सफेद करे, घास से ढांके, गोबर से लींपे, गुपन करे, जमीन बरोबर करे, पाषाण से घसे, सुगंधी धूप करे, पानी की

नाली बनावे, मोरी बनावे, वे सब (साधु के लिये न करे) अपने लिये करे बाद साधु उसमें निवास करे.

(ज्ञान की मंदता से जैन ज्योतिष के अभाव में चोमासा में भी अधिक मास आजाने से कितनेक इस सूत्रानुसार ५० दिन में पर्युषणा करते हैं कितनेक अधिक मास को नहीं गिनकर भाद्रवा मास में ही अर्थात् ८० दिन में करते हैं उनके बारे में समभाव छोड़ कलुषित वचनों से आक्षेप कर आत्महित के बदल संसार बढाने का रास्ता लेते हैं इसलिये मुमुक्षु (मोक्षाभिलाषी) ओं से प्रार्थना है कि तत्व केवलिगम्य रखकर ५० वा ८० दिन में पर्युषणा इच्छानुसार कर पर्युषण में कहाहुआ आत्म सद्गतिरूप धर्म अच्छी तरह आराधन करना जिसका आत्मा शुद्धभाव से दोनों दिन में कोई भी दिन में करेगा उस का कल्याण होगा. क्लेश से कलुषित अनात्मार्थी क्लेश बढाकर स्वयं डूबेगा अथवा डुबाएगा उनके फंदों में फंसकर अपना हित का नाश नहीं करना चाहिये. सुज्ञ पुरुषों को अधिक क्या कहना अर्थात् दंत कलह छोड़ अपने आम्नायानुसार प्रवृत्ति करना चाहिये और माध्यस्थ भाव रखना चाहिये).

महावीर प्रभु की तरह गणधरों ने और गणधर शिष्यों ने भी पर्युषणा पर्व किये हैं इसी तरह स्थविरों ने भी पर्युषणापर्व किया है. इसी तरह आज के साधु निग्रंथों को भी पर्युषणा का पर्व करना चाहिये और वे करते हैं ऐसे ही हमें आचार्य उपाध्याय और साधु (इस ग्रन्थ लिखने वाले) को भी पर्युषणा पर्व करना चाहिये.

जैसे आचार्य उपाध्याय पर्युषण करते हैं ऐसे हम ५० दिन में पर्युषणा करते हैं उसके भीतर करना कल्पे किन्तु एक रात्रि भी अधिक नहीं बढानी चाहिये.

(यहां पर ८० दिन में करने वाले को ५० दिन वाले कहते हैं कि ८० दिन में नहीं करना किन्तु अधिक के नहीं गिनने से वे ५० ही मानते हैं तत्त्व भेदियों को पर्युषणा का अर्थ यह है कि एक जगह बैठकर चौमासे में धर्म ध्यान करना किंतु वर्षाऋतु में फिरने से स्थावर को पीड़ा नहीं देनी और चौमासा जैन टीपणा के अनुसार चार मास का है ५० दिन प्रथम कारणे बदल सकता है किंतु पिछले ७० दिन तो ठहरना ही चाहिये इसमें भी ज्ञान कारण से विहार होवे बिना कारण विहार नहीं होवे इसलिये पर्युषणा पर ७० दिन

बैठना किंतु अब तो आचार्यों ने चोमासा असाड सुदी १४ बैठाया वो कार्तिक सुदी १४ तक पूरा होना है और बीच में कोई भी आत्मार्थी साधु फिरता नहीं है इसलिये ५०—८० दिन का झगड़ा करना व्यर्थ है और संवछरी प्रतिक्रमण वगैरह खूब भाव से अंतरंग शुद्धि से करना द्वेष घटाना जो पूर्णिमा को चोमासा बैठावे व पंचमी की संवच्छरी करे उनको कटु वचन नहीं कहना चाहिये कोई उदय तिथि कोई संध्या की तिथि लेवे तो भी कोमल भाव रखकर मध्यस्थता से प्रतिक्रमण शुद्ध भाव से करेंगे उनकी ज्ञान पूर्वक क्रिया सफल है. वीतराग प्रभु के सूत्रों में जिन्हों का सच्चा भाव है उन सबको मिलकर क्लेश राग द्वेष की परिणति घटानी चाहिये उसमें भी महामंगलीक पर्व में अमारिपटह बजाना तो फिर अनेक गुणों से विभूषित जैन श्रावक साधु को तो कैसे कटु वचन कहवे ! यह बात हमारे बहुत से भाई भूलकर लड़ते हैं उनसे हमारी नम्र प्रार्थना है कि आत्म तत्व में ही रमणता कर बाह्य क्रिया करो कि परपीडक कटु वचन आपके शांत वदन में से न निकले.

वासावासं पज्जोसवियाणं कप्पइ निग्गंथाण वा निग्गंथीण वा सव्वओ समंता सक्कोस जोयणं उग्गहं ओगिण्हित्ता णं चिट्ठिउं अहालंदमवि उग्गहे ॥ ९ ॥

वासावासं पज्जोसवियाणं कप्पइ निग्गंथाण वा निग्गंथीण वा सव्वओ समंता सक्कोसं जोयणं भिक्खायरियाए गंतुं पडिनियत्तए ॥ १० ॥

चोमासा में रहे हुए साधु साध्वीओं को पांच कोस तक चारों दिशा में जाना कल्पे. उपाश्रय से २॥ २॥ कोस प्रत्येक दिशा में जावे चोमासा चार मास का होवे परन्तु अधिक मास आजावे तो पांच मास भी रहसक्ते हैं अथवा विना अधिक वर्षा ऋतु पहिले वा पीछे बढे यानि जो पानी ज्यादा गिरे कीचड़ जादा होतो छमास भी रहसक्ते हैं. अधिक विचार के लिये बड़ी टीकाएं देखनी.

गोचरी जाने के लिये भी चोमासा में २॥ कोस तक जाना और पीछा आना चाहिये ।

जत्थ नई निच्चोयगा निच्चसंदणा, नो से कप्पइ सव्वओ समंता सक्कोसं जोयणं भिक्खायरियाए गंतु पडिनियत्तए ॥११॥

एरावई कुणालाए जत्थ चक्किया सिया, एगं पायं थले किच्चा, एवं चक्किया एवं णं कप्पइ सव्वओ समंता सक्कोसं जोयणं गंतुं पडिनियत्तए ॥ १२ ॥

एवं च नो चक्किया, एवं से नो कप्पइ सव्वओ समंता सक्कोसं जोयणं गंतुं पडिनियत्तए ॥ १३ ॥

जो नदी निरंतर बीच में बहती हो तो ऐसे रस्ते २॥ कोस जाना न कल्पे किन्तु एरावती नदी कुणाला में है अथवा ऐसी नदी जहां हो वहां निरन्तर न बहती हो और वहां थोड़ा पानी हो जमीन हो वहां रेती पर पग रखकर जाना कल्पे अर्थात् छोटे नाले वर्षा में चले पीछे बंद होवे वहां पर जाने में हरज नहीं किन्तु जो पानी में पग रखकर जाना पड़े और पानी के जीवों को दुःख होना हो तो ऐसी जगह गोचरी जाना न कल्पे (सिर्फ यह अधिक गोचरी के लिये ही है स्थंडिल के लिये जरूर पड़े और दूसरा रस्ता न होतो वहां से भी जा सक्ता है).

वासावासं पज्जोसवियाणं अत्थेगइयाणं एवं वुत्तपुव्वं भवइ—दावे भंते ! एवं से कप्पइ दावित्तए, नो से कप्पइ पडिगाहित्तए ॥ १४ ॥

वासावासं पज्जोसवियाणं अत्थेगइयाणं एवं वुत्तपुव्वं भवइपडिगाहेहि भंते ! एवं से कप्पइ पडिगाहित्तए, नो से कप्पइ दावित्तए ॥ १५ ॥

वासावासं० दावे भंते ! पडिगाहे भंते ! एवं से कप्पइ दावित्तएवि पडिगाहित्तएवि ॥ १६ ॥

गुरु महाराजने या श्रावकने गोचरी जाने वाले को कहा है कि यह वस्तु बीमार के लिये है वह आप लेना दूसरे बीमार को देना, तो बीमार को देना

चाहिये अपने को खानी नहीं चाहिये, किन्तु गुरुने वा श्रावकने अपने वास्ते कहा होतो बीमार को नहीं देना यदि दोनों के वास्ते कहा होतो दोनों को कल्पे.

वासावासं पज्जोसवियाणं नो कप्पइ निग्गंथाण वा निग्गंथीण वा हट्ठाणं तुट्ठाणं आरोगाणं बलियसरीराणं इमाओ नव रसविगइओ अभिक्खणं २ आहारित्तए, तंजहा-खीरं १ दहिं २, नवणीयं ३, सप्पि ४, तिल्लं ५, गुडं ६, महुं ७, मज्जं ८, मसं ९ ॥ १७ ॥

चौमासा में रहे हुए साधुओं को शरीर निरोगी हो और शक्ति अच्छी होतो नवविकृति विकार करने वाली वस्तु उपयोग मे वारंवार लेनी न कल्पे विकृति विगई नव है इन के दो विभाग हैं. दुध, दही, घी, तेल, गुड (साकर वगैरह) यह वस्तु भक्ष्य हैं मक्खन, मधु (शहद) मद्य (शराब) मांस, यह चार अभक्ष्य हैं. भक्ष्य वस्तु खाने में काम लगती है अभक्ष्य वस्तु दवा में शरीर पर लगाने में काम लगती है किंतु इन नव विकृतिओं को वारंवार उपयोग में चौमासा में नहीं लेना चाहिये. उसमें भी मदिरा और मांस का तो प्राणांत कष्ट आवे तो भी उसका बाह्य उपयोग करना नहीं चाहिये किन्तु प्राण न निकले आर्त्तध्यान होवे घर को जा न सके छोटी उम्र हो असाध्य रोग हो दूसरे साधुओं को पीड़ा होनी हो पठन पाठन में विघ्न होता होतो कृपासागर आचार्यों ने ऐसे जीवों के समाधि के लिये बाह्य उपयोगार्थ कारणवशात् यह दो शब्द रक्खे हैं और उसका भी अच्छे होने बाद महान् प्रायश्चित है वह प्रायश्चित अधिकार गुरु गम्य है इत्यादि विचार बड़े पुरुषों से जान लेना क्योंकि मांस मदिरा का स्वप्न में भी भोगने का विचार साधु न करे ऐसा सूयगडांग सूत्र में कहा हैः-

द्वितीय श्रुतस्कंध में छट्ठे अध्ययन में ३५ वीं गाथा से ४० गाथा तक वही अधिकार है. (प्रसंगोपात् यहां पर लिखते हैं कि बालजीव भ्रम में न पड़े.

जीवाणुभागं सुविचिंतयंता, आहारिया अन्न विहाय सोहिं ।
न वियागरे छन्न पओपजीवी, एसोणुधम्मो इह संजयाणं ॥ ३५ ॥

सिणायगाणं तुदुवे सहस्से, जे भोयए निहए भिक्खुयाणं ।
असंजए लोहिय पाणि सेऊ, नियच्छत गरिहं मिहेवलोए ॥ ३६ ॥

जीवों की दया चिंतवन कर अन्न शुद्धि देखकर आहार लेकर खावे किंतु पात्रा में मांस पड़ा भी दोष के लिये नहीं है ऐसा न कहे किन्तु निष्कपटी होकर संजम धर्म पाले ऐसा जैन साधु का आचार है (यह वचन बौद्धों को शिक्षा के लिये कहा है) फिर कहा है कि आप बौद्ध साधु तो ऐसा जड़ कहते हो कि साधुओं को मांस से भी दो हजार वर्ष भोजन देना ये आपको दुर्गति का हेतु है.

थूलं उरब्भं इहमारियाणं, उद्दिट्ठ भत्तं च पगप्पएत्ता ।
तंल्लोण तेलेण उवक्खडेत्ता, सपिप्पलीयं पगरंती मांसं ॥ ३७ ॥
तं भुंजमाणा पिसितंपभूतं, ण उवलिप्पामो वयं रएण ।
इच्चेव माहंसु अणज्ज धम्मं, अणारिया बाल रसेसुगिद्धा ॥ ३८ ॥

जो बाल अनार्य हैं वे रसगृद्ध होकर जीवों को मारकर उसको तेल लूण से स्वादिष्ट कर खाते हैं और कहते हैं कि हम तो पाप से लिप्त नहीं होते.

आर्द्रकुमार फिर भी कहते हैं किः–

जेयावि भुजंति तहप्पगारं, सेवंतिते पावग जाणमाणा ।
मणंन एवं कुसला करंति, वायावि एसाबुइयाउ मिच्छा ॥ ३९ ॥

जो पाप को नहीं जानते व परभव का डर जिसको नहीं है या शास्त्र नहीं मानते वे ही ऐसा पूर्व कथित मांस का आहार खाते हैं परन्तु जैनधर्म रक्त मेधावी कुशल पुरुष मनमें भी मांस खाने की अभिलाषा न करे न ऐसा असत्य वचन बोले कि मांस खाने से पाप नहीं है.

फिर भी साधु का आचार कहते हैः–

सव्वेसिं जीवाण दयट्ठयाए, सावज्जदोसं परिवज्जयंता, तस्संकिणो इसिणो नायपुत्ता उद्दिट्ठं भत्तंपरिवज्जयंति ॥ ४० ॥

सब जीवों की दया के लिये पाप हिंसा को छोड़ भगवान महावीर के शिष्य साधु उद्दिष्ट भोजन अर्थात् साधु के लिये बनाया हुआ अन्न भी न लेवें, शंका होवे कि यह मेरे लिये बनाया है तो भी न लेवे. और राजा कुमारपालने जो मांस भक्षण किया वह जैन धर्म स्वीकारने बाद मांस छोड़दिया था परन्तु [illegible] खाने

के समय मांस का स्वाद आने लगा वह बात आचार्य हेमचन्द्र को सुनाई गुरु महाराज ने कहा कि घेवर भी नहीं खाना कि ऐसी दुष्ट भावना भी न हो. कुमारपाल ने वह छोड़ दिया परन्तु उस दुष्ट वासना का दंड मंगा गुरु महाराजने कहा कि ३२ दांत गिरा देना चाहिये. उसने मंजूर किया लुहार को बुलाया कुमारपाल की धैर्यता देख दांत रखवाकर ३२ जिन मंदिर बनाने का फरमाया. इसलिये भव्यात्मा साधु वा श्रावक मांस मदिरा से निरन्तर दूर रहवे.

वासावासं पज्जोसवियाणं अत्थेगइआणं एवं वुत्तपुव्वं भवइ, अट्ठो भंते ! गिलाणस्स, से य पुच्छियव्वे-केवइएणं अट्ठो ? सेवएज्जा, एव इएणं अट्ठो गिलाणस्स; जं से पमाणं वयइ से य पमाणओ धित्तव्वे, से य विन्नविज्जा, से य विन्नवे माणे लभिज्जा, से य पमाणपत्ते होउ अलाहि-इय वत्तव्वं सिआ ? से किमाहु भंते ! ?, एवइएणं अट्ठो गिलाणस्स, सिया णं एवं वयंतं परो वइज्जा-पडिगाहेह अज्जो ! पच्छा तुमं भोक्खसि वा पाहिसि वा, एवं से कप्पइ पडिगाहित्तए, नो से कप्पइ गिलाणनीसाए पडिगाहित्तए ॥ १८ ॥

कोई बीमार साधु के लिये गुरुने दूसरे साधु को कहा हो कि बीमार को विकृति दूध वगैरह लादेना तो बीमार को पूछकर जितना वह कहे वह गुरु को कहकर ग्रहस्थ के घर से लावे किन्तु बीमार को जितना चाहिये इतना मिलने पर ज्यादा न लेवे परन्तु ग्रहस्थ कहवे कि आपको अधिक चाहिये तो लो बचे वह आप खाना वा दूसरों को देना ऐसा कहने पर साधु लेकर आवे और बीमार को देकर बचे वह आप खासके किन्तु बीमार की निश्रा से विना कारण आप विकृति खाने की इच्छा न करे बचे वह बांटकर खावे.

वासावासं पज्जो० अत्थि णं थेराणे तहप्पगाराइं कुलाइं कडाइं पत्तिआइं थिज्जाइं वेसासियाइं संमयाइं बहुमयाइं अणुमयाइं भवंति, जत्थ से नो कप्पइ अदक्खु वइत्तए

अत्थि ते आउसो ! इमं वा २" मे किमाहु भंते ! ?, सड्ढी गिही गिण्हइ वा, तेणियंपि कुज्जा ॥ १६ ॥

चौमासा में रहे हुए साधुओं को भक्त घरों में भी विना देखी वस्तु न मांगनी देखे वही मांगे क्योंकि वह भक्त होने से साधु को देने के लिये ग्रहस्थी चोरी वा जुल्म करे वा दोषित वस्तु लाकर देगा इसलिये शिष्य को गुरुने समझाया कि विना देखी वस्तु भक्त के घर की न मांगे. कृपण वा अभक्त घरों में अदेखी वस्तु भी जरूर हो तो मांगनी क्योंकि वह होगी तो देगा न होगी तो न देगा भक्ति में अन्धा होकर अनाचार नहीं करेगा.

वासावासं पज्जोसवियस्स निच्च भत्तियस्स भिक्खुस्स कप्पइ एगं गोअरकालं गाहावइकुलं भत्ताए वा पाणाए वा निक्खमित्तए पविसित्तए वा, नन्नत्थायरियवेयावच्चेण वा एवं उवज्झायवे० तवस्सिवे० गिलाणवे० खुड्डुएण वा खुड्डियाए वा अवंजणजायएण वा ॥ २० ॥

चोमासा में स्थित साधुओं को नित्य भोजन करने वालों को गोचरी के लिये एक ही वक्त ग्रहस्थी के घरको जाना आना कल्पे किन्तु आचार्य उपाध्याय तपस्वी बीमार छोटा साधु, जिसके दाढ़ी मूंछ न हो ऐसे साधुओं को वा उनकी वैयावृत्य (सेवा) करने वालों को दो वक्त भी जाना कल्पे. अर्थात् इन्द्रियाँ पुष्ट करने को आहारादि न लेवे).

वासावासं पज्जोसवियस्स चउत्थभत्तियस्स भिक्खुस्स अयं एवइए विसेसे—जं से पाओ निक्खम्म पुव्वामेव वियडगं भुच्चा पिच्चा पडिग्गहगं संलिहिय संपमज्जिय से य संथरिज्जा. कप्पइ से तद्दिवसं तेणेव भत्तट्ठेणं पज्जोसवित्तए—से य नो संथरिज्जा, एवं से कप्पइ दुच्चंपि गाहावइकुलं भत्ताए वा पाणाए वा निक्खमित्तए वा पविसित्तए वा ॥ २१ ॥

किन्तु एकांतरीय उपवास करने वालों को पारणा के दिन एक वक्त खाने से न चले तो दूसरी वक्त भी गोचरी के लिये जाना कल्पे (जो क्षुधा वेदनी शांत न होवे तो दूसरी वक्त जावे).

वासावासं पज्जोसवियस्स छट्ठभत्तियस्स भिक्खुस्स कप्पंति दो गोअरकाला गाहावइकुलं भत्ताए वा पाणाए वा निक्ख० पविसि० ॥ २२ ॥

वासावासं पज्जोसवियस्स अट्ठमभत्तियस्स भिक्खुस्स कप्पंति तओ गोअरकाला गाहावइकुलं भत्ताए वा पाणाए वा निक्खमि० पविस० ॥ २३ ॥

वासावासं पज्जोसवियस्स विगिट्ठभत्तिअस्स भिक्खुस्स कप्पंति सव्वेवि गोअरकाला गाहा० भ० पा० निक्खमि० पविसि० ॥ २४ ॥

बेले का तप करे और तीसरे दिन खावे उनको दो वक्त गोचरी लाकर खाना कल्पे, तीन उपवास करे चोथे दिन खावे उसको तीन वक्त गोचरी लाकर खाना कल्पे चार उपवास से लेकर अधिक तप करने वाले को चाहे उस वक्त ग्रहस्थी के घरको दिन में जाकर लाकर दिन में ही खाना कल्पे (चोमासा में रहने वालों के लिये यह नियम अधिक प्रचलित है ज्यादह खाकर अजीर्ण का रोग न बढावे न पढने में प्रमाद होवे किन्तु पढने वालों के लिये गुरु आज्ञा पर है एक वक्त खावे चाहे दो वक्त खावे).

वासावासं पज्जोसवियस्स निच्चभत्तियस्स भिक्खुस्स कप्पंति सव्वाइं पाणगाइं पडिगाहित्तए। वासावासं पज्जोसवियस्स चउत्थभत्तियस्स भिक्खुस्स कप्पंति तओ पाणगाइं पडिगाहित्तए, तंजहा—ओसेइमं, संसेइमं, चाउलोदगं। वासावासं पज्जोसवियस्स छट्ठभत्तियस्स भिक्खुस्स कप्पंति तओ

पाणगाइं पडिगाहित्तए, तंजहा—तिलोदगं वा, तुसोदगं वा, जवोदगं वा । वासावासं पज्जोसवियस्स अट्ठमभत्तियस्स भिक्खुस्स कप्पंति तओ पाणगाइं पडिगाहित्तए तंजहा--आयामे वा, सोवीरे वा, सुद्धवियडे वा । वासावासं पज्जोयवियस्स विगिट्ठभत्तियस्स भिक्खुस्स कप्पइ एगे उसिणवियडे पडिगाहित्तए, सेविय एं असित्थे नोविय एं ससित्थे । वासावासं पज्जोसवियस्स भत्तपडियाइक्खियस्स भिक्खुस्स कप्पइ एगे उसिणवियडे पडिगाहित्तए, सेविय एं असित्थे नो चेव एं ससित्थे, सेविय एं परिपूए नो चेव एं अपरिपूए. सेविय एं परिमिए नो चेव एं अपरिमिए, सेविअ एं बहुसंपन्ने नो चेव एं अबहुसंपन्ने ॥ २५ ॥

नित्य खाने वाले को सब जाति के फासु पानी पीने को काम लगे एकांतरीय उपवासी को तीन जाति के पानी कल्पे (१) आटा से खरडा हुआ पानी (२) पत्ते वगेरह से उकाला पानी, (३) चावल का धोवन कल्पे दो उपवास वाले के लिये तीन पानी तिल का धोवन, तुस का धोवन जवों का धोवन काम लगे, तीन उपवास वाले को ओसामन का पानी, कांजी का पानी, तता (उष्ण) पानी उससे अधिक तप करने वाले को सिर्फ उष्ण पानी ही काम लगे और उस पानी में कोई भी जाति का अन्न का अंश नहीं होना चाहिये.

अनशन जिसने किया हो और पानी की छूट रखी हो तो उसको सिर्फ उष्ण जलही पीने को काम लगे वो पानी अन्न के अंश बिना का होना चाहिये और वो भी छान के पानी लेना चाहिये और वो भी प्यास जितना ही पीना अधिक नहीं पीना.

वासावासं पज्जोसविअस्स संखादत्तियस्स भिक्खुस्स कप्पंति पंच दत्तीओ भोअणस्स पडिगाहित्तए पंच पाणगस्स, अहवा चत्तारि भोअणस्स पंच पाणगस्स, अहवा पंच भोअ-

एस्स चत्तारि पाणगस्स । तत्थ णं एगा दत्ती लोणासायणमित्तमवि पडिगाहिआ सियाकप्पइ से तद्दिवसं तेणेव भत्तट्ठेणं पज्जोसवित्तए, नो से कप्पइ दुच्चंपि गाहावइकुलं भत्ताए वा पाणाए वा निक्खमित्तए वा पविसित्तए वा ॥ २६ ॥

साधुओं को पांच दत्ती चोमासा में निरंतर लेनी कल्पे, पांच भोजन की और पांच पानी की अथवा ४ भोजन की ५ पानी की अथवा पांच भोजन की ४ पानी की लेनी किंतु दत्ती में जो अनाज में नमक समान अर्थात् थोड़ी वस्तु भी आजावे तो उस दिन इतना ही खाना चाहिये किन्तु दूसरी वक्त नहीं जाना चाहिये.

एक वक्त मे जितना ग्रहस्थी देवे वो दत्ती गिनी जाती है (उसका प्रयोजन यह है कि स्वाद के लिये वो विना श्रम ग्रहस्थिओं का माल खाकर साधु प्रमाद कर दुर्गति में न जावे)

वासावासं पज्जोसवियाणं नो कप्पइ निग्गंथाण वा निग्गंथीण वा जाव उवस्सयाओ सत्तघरंतरं संखडिं संनियट्टचारिस्स इत्तए, एगे पुण एवमाहंसु—नो कप्पइ जाव उवस्सयाओ परेण सत्तघरंतरं संखडिं संनियट्टचारिस्स इत्तए, एगे पुण एवमाहंसु—नो कप्पइ जाव उवस्सयाओ परंपरेणं संखडिं संनियट्टचारिस्स इत्तए ॥ २७ ॥

साधु साध्वी को चोमासे में उपाश्रय से ७ घर नजदीक में हो उस में जिमण हो तो वहां गोचरी जाना न कल्पे, कोई आचार्य कहते हैं कि उपाश्रय को अलग मान सात घर छोड़ना चाहिये कोई कहते हैं कि उपाश्रय से परंपरा के घरों में जिमनवार में गोचरी नहीं जाना (जिमन में साधु को गोचरी जाना मना है परन्तु उपाश्रय के निकट घरों में तो अवश्य नहीं जाना)

वासावासं पज्जोसवियस्स नो कप्पइ पाणिपडिग्गहियस्स भिक्खुस्स कणगफुसियमित्तमवि वुट्ठिकायंसि निवयमाणंसि

निवयमाणंसि जाव गाहावइकुलं भ० पा० निक्ख० पविसित्तए वा ॥ २८ ॥

जब वृष्टि थोड़ी भी होती हो ऐसे समय पर जिन कल्पी साधु गोचरी न जावे (जिन कल्पी साधु जम्बू स्वामी के वाद नहीं होते हैं वो कल्प विच्छेद होगया है)

वासावासं पज्जोसवियस्स पाणिपडिग्गहियस्स भिक्खुस्स नो कप्पइ अगिहंसि पिंडवायं पडिगाहित्ता पज्जोसवित्तए, पज्जोसवेमाणस्स सहसा वुट्ठिकाए निवइज्जा देसं भुच्चा देसमादाय से पाणिणा पाणिं परिपिहित्ता उरंसि वा णं निलिज्जिज्जा, कक्खंसि वा णं समाहडिज्जा, अहाछन्नाणि वा लेणाणि वा उवागच्छिज्जा, रुक्खमूलाणि वा उवागच्छिज्जा, जहा से तत्थ पाणिंसि दए वा दगरए वा दगफुसिआ वा नो परिआवज्जइ ॥ २९ ॥

जिन कल्पी साधुको उपर से न ढका हो ऐसी जगह में गोचरी करनी न कल्पे कदाचित् बैठ गये और वृष्टि आजावे तो जितना वचा हो वो लेकर दूसरे हाथ से वा छाती से कांख में ढककर ढके हुए मकान में जाकर गोचरी करे घर न मिले तो पेड़ के नीचे चला जावे कि जिससे पानी के विंदुओं से संघटन होकर वे पानी के जीवों को पीडा न होवे.

वासावासं पज्जोसवियस्स पाणिपडिग्गहियस्स भिक्खुस्स जं किंचि कणगफुसियमित्तंपि निवडेति, नो से कप्पइ गाहावइकुलं भत्ताए वा पाणाए वा निक्खमित्तए वा पविसित्तए वा ॥ ३० ॥

सूत्र २९ में वताया कि जीवों को पीडा न हो इसलिये सूत्र ३० में वताया कि प्रथम से जिन कल्पि उपयोग देकर जानकर रास्ते में पानी आने का मालुम

हो तो गोचरी न जावे चाहे थोड़े बिंदु भी क्यों न बरसे तो भी जिन कल्पी गोचरी न जावे.

वासावासं पज्जोसवियस्स पडिग्गहधारिस्स भिक्खुस्स नो कप्पइ वग्घारियवुट्ठिकायंसि गाहावइकुलं भत्ताए वा पाणाए वा निक्खमित्तए वा पविसित्तए वा, कप्पइ से अप्पवुट्ठिकायंसि संतरुत्तरंसि गाहावइकुलं भत्ताए वा पाणाए वा निक्खमित्तए वा पविसित्तए वा ॥ २१ ॥

जिन कल्पि विना जो स्थविर कल्पि साधु हो तो उनको अखंडित मेघ की धारा वर्षे तब गोचरी नहीं जाना परन्तु अल्प वृष्टि होतो कारणवश से गोचरी जाना कल्पे उस वक्त सूत्र के कपड़े पर कम्बल ओढकर जासक्ते हैं (यहां बताया है कि कोई देश में वृष्टि होने बाद भी थोडी वृष्टि सारा दिन भी रहती है और छोटे वा क्षुधा पीड़ित साधुओं को असमाधि होवे तो बारीक वृष्टि में भी कम्बली ओढकर गोचरी जासक्ते हैं).

(ग्रं० ११००) वासावासं पज्जोसविअस्स निग्गंथस्स निग्गंथीए वा गाहावइकुलं पिंडवायपडियाए अणुपविट्ठस्स निगिज्झिय २ वुट्ठिकाए निवइज्जा, कप्पइ से अहे आरामंसि वा, अहे उवस्सयंसि वा अहे वियडगिहंसि वा अहे रुक्खमूलंसि वा उवागच्छित्तए ॥ ३२ ॥

गोचरी जाते रास्ते में वृष्टि ज्यादा होवे तो उद्यान में वा उपाश्रय नीचे, वा जाहिर मकान नीचे अथवा वृक्ष (पेड़) की नीचे खड़े रहसक्ते हैं.

तत्थ से पुव्वागमणेणं पुव्वाउत्ते चाउलोदणे पच्छाउत्ते भिलिंगसूवे, कप्पइ से चाउलोदणे पडिगाहित्तए, नो से कप्पइ भिलिंगसूवे पडिगाहित्तए ॥ ३३ ॥

तत्थ से पुव्वागमणेणं पुव्वाउत्ते भिलिंगसूवे पच्छाउत्ते चाउलोदणे, कप्पइ से भिलिंगसूवे पडिगाहित्तए, नो से कप्पइ चाउलोदणे पडिगाहित्तए ॥ ३४ ॥

गृहस्थी के घरमें खड़े रहे हों और वहां पर पहिले चावल तयार होते हों पीछे दाल बनाई हो तो साधु को पहिले चावल चढ़े हों वही काम लगे परन्तु साधु खड़ा रहे उस बाद दाल चढ़ाई होतो वह दाल न कल्पे किन्तु पहिले दाल चढाई होतो दाल कल्पे चावल पीछे चढ़ाये होंतो चावल काम न लगे.

और यदि पहले दोनों चढाए होंतो दोनों काम लगे दोनों पिछे चढे होतो दोनो काम नलगे .

तत्थ से पुव्वागमणेणं दोवि पुव्वाउत्ताइं कप्पंति से दोवि पडिगाहित्तए। तत्थ से पुव्वागमणेणं दोवि पच्छाउत्ताइं, एवं नो से कप्पंति दोवि पडिगाहित्तए, जे से तत्थ पुव्वागमणेणं पुव्वाउत्ते, से कप्पइ पडिगाहित्तए, जे से तत्थ पुव्वागमणेणं पच्छाउत्ते, नो से कप्पइ पडिगाहित्तए ॥ ३५ ॥

कहना तात्पर्य यह है कि साधु खड़े रहे बाद जो चीज तैयार करे वह न कल्पे पहले चूले चढी हो वही चीज साधु लेसक्के हैं.

वासावासं पज्जोसवियस्स निग्गंथस्स निग्गंथीए वा गाहावइकुलं पिंडवायपडियाए अणुपविट्ठस्स निगिज्भिय २ वुट्ठिकाए निवइज्जा, कप्पइ से अहे आरामंसि वा अहे उवस्सयंसि वा अहे वियडगगिहंसि वा अहे रुक्खमूलंसि वा उवागच्छित्तए, नो से कप्पइ पुव्वगहिएणं भत्तपाणेणं वेलं उवायणावित्तए, कप्पइ से पुव्वामेव वियडगं भुच्चा पडिग्गहगं संलिहिय २ संपमज्जिय २ एगाययं (एगओ) भंडगं कट्टु

सावसेमे सूरे जेणेव उवस्सए तेणेव उवागच्छित्तए, नो से कप्पइ तं रयणिं तत्थेव उवायणावित्तए ॥ ३६ ॥

साधु को गोचरी जाने बाद वर्षा होवे तो प्रथम कहे हुए स्थान में खड़ा रहवे परन्तु गोचरी थोड़ी आगई हो तो थोड़ी देर राहा देखकर एक स्थान में बैठकर गोचरी करलेवे और पीछे पात्र साफ कर उपाश्रय में चला जावे. चाहे वर्षा होती होतो भी सूर्यास्त पहले उपाश्रय में जाना चाहिये किन्तु रास्ते में वा गृहस्थी के घर में साधु को रहना नहीं चाहिये (यहां पर वृष्टि के पानी में जीवों की विराधना का जो दोष है, उससे अधिक दोष साधु अकेला ग्रहस्थ के घरमें वा उद्यान में रहे तो लगता है क्योंकि शील रक्षण उपाश्रय में ही अच्छी तरह रहसक्ता है.

वासावासं पज्जोसवियस्स निग्गंथस्स निग्गंथीए वा गाहावइकुलं पिंडवायपडियाए अणुपविट्ठस्स निगिज्जिय २ वुट्ठिकाए निवइज्जा, कप्पइ से अहे आरामंसि वा अहे उवस्सयंसि वा उवागच्छित्तए ॥ ३७ ॥

साधु साध्वी गोचरी जावे रास्ते में वृष्टि के कारण खड़ा रहना पड़े तो एक साधु एक साध्वी साथ खड़ा रहना न कल्पे. एक साधु दो साध्वी को साथ रहना न कल्पे दो साधु दो साध्वी को भी साथ रहना न कल्पे किन्तु एक छोटी साध्वी वा साधु होतो खड़े रहसकते हैं. अथवा तो जहां जाने आने वाले सबकी दृष्टि पड़ती होतो वहां खड़े रहसकते हैं.

तत्थ नो कप्पइ एगस्स निग्गंथस्स एगाए य निग्गंथीए एगयओ चिट्ठित्तए १, तत्थ नो कप्पइ एगस्स निग्गंथस्स दुण्हं निग्गंथीण एगयओ चिट्ठित्तए२, तत्थ नो कप्पइ दुण्हं निग्गंथाणं एगाए निग्गंथीए य एगयओ चिट्ठित्तए ३। तत्थ नो कप्पइ दुण्हं निग्गंथाणं दुण्हं निग्गंथीण य एगयओ चिट्ठित्तए ४।

अत्थि य इत्थ केइ पंचम खुड्डए वा खुड्डिया इ वा अन्नेसिं वा संलोए सपडि दुवारे एव एहं कप्पइ एगयओ चिट्ठित्तए ॥३८॥

इस तरह साधु साध्वीओं ग्रहस्थ वा ग्रहस्थिणी के साथ उपर की तरह अकेले वा दो खड़े न रहवे अर्थात् एक साधु एक ग्रहस्थिणी के साथ अथवा एक साध्वी एक ग्रहस्थी के साथ उपर मुजब खड़े न रहवे क्योंकि ब्रह्मचर्य व्रत के भंग की लोगों को शंका होवे अथवा मनमें दुर्ध्यान होवे इस तरह दो साधु एक ग्रहस्थिणी अथवा दो साधु दो ग्रहस्थिणी अथवा दो साध्वी दो ग्रहस्थों के साथ खडा रहना न कल्पे. किन्तु जाने आने वाले देखे ऐसे खड़े रहने में हरजा नहीं अथवा छोटा बच्चा साथहो.

वासावासं पज्जोसवियस्स निग्गंथस्स गाहावइकुलं पिंडवायपडियाए उवागच्छित्तए, तत्थ नो कप्पइ एगस्स निग्गंथस्स एगाए य अगारीए एगयओ चिट्ठित्तए, एवं चउभंगी। अत्थि णं इत्थ केइ पंचमयए थेरे वा थेरिया वा अन्नेसिं वा संलोए सपडिदुवारे, एवं कप्पइ एगयओ चिट्ठित्तए। एवं चेव निग्गंथीए आगारस्स य भाणियव्वं ॥ ३९ ॥

इस तरह ग्रहस्थी के घरमें गोचरी साधु साध्वी जावे तो भी उपरकी तरह साधु साध्वी समझ कर खड़े रहवे.

वासावासं पज्जोसवियाणं नो कप्पइ निग्गंथाण वा निग्गंथीण वा अपरिण्णाएणं अपरिण्णयस्स अट्ठाए असणं वा १ पाणं वा २ खाइमं वा ३ साइमंवा ४ जाव पडिगाहित्तए ॥४०॥

से किमाहु भंते ? इच्छा परो अपरिण्णए भुंजिज्जा, इच्छा परो न भुंजिज्जा ॥ ४१ ॥

साधू को साध्वी को चोमासे में दूसरे साधू साध्वियों को विना पूछे

उनकी गोचरी न लाना क्योंकि उनकी इच्छा हो तो खावे नहीं तो नहीं खावे वो परठना पडे.

वासावासं पज्जोसवियाणं नो कप्पइ निग्गंथाण वा निग्गंथीण वा उदउल्लेण वा ससिणिद्धेण वा काएणं असणं वा १ पा० २ खा० ३ सा० ४ आहारित्तए ॥ ४२ ॥

से किमाहु भंते ? सत्त सिणेहाययणा पण्णत्ता, तंजहा पाणी १, पाणिलेहा २, नहा ३, नहसिहा ४, भमुहा ५, अहरोट्ठा ६, उत्तरोट्ठा ७। अह पुण एवं जाणिज्जा–विगओदगे मे काए छिन्नसिणेहे, एवं से कप्पइ असणं वा १ पा० २ खा० ३ सा० ४ आहारित्तए ॥ ४३ ॥

साधु साध्वी के शरीर ऊपर पानी टपकता हो तो उस समय खाना न कल्पे क्योंकि दो हाथ, दो हाथ की रेखायें नख, नख शिखा, भ्रकुटी, दाढी, मूछ, वो वर्षा के पानी से भीगते रहते हैं वे सूख जाने की प्रतीति होवे तब गोचरी करे जिससे सचित पानी के जीवों की विराधना न होवे.

वासावासं पज्जोसवियाणं इह खलु निग्गंथीण वा निग्गंथीण वा इमाइं अट्ठ-सुहुमाइं, जाइं छउमत्थेणं निग्गंथेण वा निग्गंथीए वा अभिक्खणं २ जाणियव्वाइं पासिअव्वाइं पडिलेहियव्वाइं भवंति, तंजहा–पाणसुहुमं १, पणगसुहुमं २, बीअसुहुमं ३, हरियसुहुमं ४, पुप्फसुहुमं ५, अंडसुहुमं ६, लेणसुहुमं ७, सिणेहसुहुमं ८ ॥ ४४ ॥

चौमासा में रहे हुए आठ सूक्ष्मों को अच्छी तरह समझना और वारंवार उनकी रक्षा करने का उद्यम करना.

१ सूक्ष्म जीव, २ सूक्ष्म काई ३ बीज ४ वनसपति ५ पुष्प ६ अंडे ७ बिल ८ अपकाय उन सब की रक्षा करनी.

से किं तं पाणसुहुमे? पाणसुहुमे पंचविहे पन्नत्ते, तंजहा—किरहे १, नीले २, लोहिए ३, हालिद्दे ४, सुकिल्ले ५। अत्थि कुंथु अणुद्धरी नामं, जा ठिया अचलमाणा छउमत्थाणं निग्गंथाण वा निग्गंथीण वा नो चक्खुफासं हव्वमागच्छइ, जा अट्ठिया चलमाणा छउमत्थाणं निग्गंथाण वा निग्गंथीण वा चक्खुफास हव्वमागच्छइ, जा छउमत्थेणं निग्गंथेण वा निग्गंथीए वा अभिक्खणं २ जाणियव्वा पासियव्वा पडिलेहियव्वा हवइ, से तं पाणसुहुमे १॥ से किं तं पणगसुहुमे ? पणगसुहुमे पंचविहे पण्णत्ते, तंजहा,—किरहे, नीले, लोहिए, हालिद्दे, सुकिल्ले। अत्थि पणगसुहुमे तद्दव्वसमाणवरणे नामं पण्णत्ते, जे छउमत्थेणं निग्गंथेण वा निग्गंथीए वा जाव पडिलेहिअव्वे भवइ। से तं पणगसुहुमे २॥ से किं तं बीअसुहुमे(२) पंचविहे पण्णत्ते, तजहा—किरहे जाव सुकिल्ले। अत्थि बीअसुहुमे कणियासमाणवण्णए नामं पन्नत्ते, जे छउमत्थेणं निग्गंथेण वा निग्गंथीए वा जाव पडिलेहियव्वे भवइ। से तं बीअसुहुमे ३॥ से किं तं हरियसुहुमे ? हरियसुहुमे पंचविहे पण्णत्ते, तंजहा—किरहे जाव सुकिल्ले। अत्थि हरिअसुहुमे पुढवीसमाणवण्णए नामं पण्णत्ते, जे निग्गंथेण वा निग्गंथीए वा अभिक्खणं २ जाणियव्वे पासियव्वे पडिलेहियव्वे भवइ। से तं हरियसुहुमे ४॥ से किं तं पुप्फसुहुमे ? पुप्फसुहुमे पंचविहे पण्णत्ते, तंजहा—किरहे जाव सुकिल्ले। अत्थि पुप्फसुहुमे रुक्खसमाणवण्णे नामं पण्णत्ते, जे छउमत्थेणं निग्गंथेण वा निग्गंथीए वा जाणियव्वे जाव पडिलेहियव्वे भवइ। से तं पु-

प्फसुहुमे ५ ॥ से तं अंडसुहुमे ? अंडसुहुमे पंचविहे पगणत्ते, तंजहा–उद्दंसंडे, उक्कलियंडे, पिपीलिअंड, हलिअंड, हल्लोहलिअंडे, जे निग्गंथेण वा निग्गंथीए वा जाव पडिलेहियव्वे भवइ । से तं अंडसुहुमे ६॥ से किं तं लेणसुहुमे? लेणसुहुमे पंचविहे पगणत्ते, संजहा–उत्तिंगलेणे, भिंगुलेणे, उज्जुए, तालमूलए, संवुकावट्टे नामं पंचमे, जे निग्गंथेण वा निग्गंथीए वा जाणियव्वे जाव पडिलेहियव्वे भवइ। से तं लेणसुहुमे ७ ॥ से किं तं सिणेहसुहुमे ? सिणेहसुहुमे पंचविहे पगणत्ते, तंजहा उस्सा, हिमए महिया, करए हरतणुए। जे छउमत्थेणं निग्गंथेण वा निग्गथीए वा अभिक्खणं २ जाव पडिलेहियव्वे भवइ । से तं सिणेहसुडुमे ८ ॥ ४५ ॥

पांच रंग के कंथुएं होते हैं वे चलने से ही जीव मालूम होते हैं नहीं तो काले हरे लाल पीले धोले रंग के दीखे तो भी उनमें जीव का ज्ञान नहीं हो सक्ता इसलिये वरतन वस्तु पूंजकर देखकर उपयोग में लेवे जिससे उन जीवों की विराधना न होवे, साधु साध्वी छद्मस्त है इसलिये उनको निरन्तर उपयोग रखकर चारित्र का निर्वाह करना.

गुजरात में जिसको नीलण फुलण वोलते हैं वो जहां पर हवा शरद रहवे वहां पर चोमासा में पांचों वर्ण की पनक (काई) होजाती है इसलिये ऐसी जगह पर वहुत यतना से प्रति लेखना प्रर्भाजन कर उन जीवों की साधु साध्वी रक्षा करे क्योंकि जैसे रंग की वस्तु हो वैसीही वो पनक होजाती है उसी तरह पांच रंग के वीज, वनस्पति और पुष्प भी जानने पांच जाति के अंडे माखी का खटमल के अंडे, मकड़ी के, कीड़ी के, छिपकली, किरला (किरकांटिया) के अंडे उनकी अच्छी तरह यतना करनी.

पांच प्रकार के वील उत्तिंग (   ) के, पानी सूखने से तालाव के वील, मामूली वील, ताडमूल (उपर से वडे भीतर से छोटे) वील, भंवरे के वील इन में जीव होते हैं उनकी यतना करनी.

आकाश का पानी, बरफ का पानी, धूमर (ओस) का पानी, ओला, तृण वा हरिपर पडा पानी उनकी यतना करना साधु साध्वी का कर्त्तव्य है.

वासावासं पज्जोसविए भिक्खू इच्छिज्जा गाहावइकुलं भत्ताए वा पाणाए वा निक्खमित्तए वा पविसित्तए वा, नो से कप्पइ अणापुच्छित्ता आयरियं वा उवज्झायं वा थेरं पवित्तिं गणिं गणहरं गणावच्छेअयं जं वा पुरओ काउं विहरइ, कप्पइ से आपुच्छिउं आयरियं वा जाव जं वा पुरओ काउं विहरइ–'इच्छामि णं भंते तुब्भेहिं अब्भणुराणाए समाणे गाहावइकुलं भत्ताए वा पाणाए वा निक्खमि० पविसि० ते य से वियरिज्जा, एवं से कप्पइ गाहावइकुलं भत्ताए वा पाणाए वा निक्खमितएवा जाव पविसित्तए, ते य से नो वियरिज्जा, एवंसे नो कप्पइ गाहावइकुलं भत्ताए वा पाणाए वा निक्खमिं० पवि-सि०। सेकिमाहु भंते ! ? आयरिया पच्चवायं जाणंति ॥ ४६ ॥

चौमासे में साधु साध्विओं को अपने बडे को पूछकर उनकी आज्ञानुसार गोचरी पानी के लिये गृहस्थिओं के घर को जाना आना कल्पे क्योंकि वडे पुरुष आचार्य उपाध्याय, स्थविर, प्रवर्त्तक, गणि गणधर गणावच्छेदक अथवा जिसको वडा बनाया हो वे साधु साध्वी को परिसह उपसर्ग आवे तो रक्षा करने में वे समर्थ है और उसका ज्ञान उन महान् पुरुषों को है.

एवं विहारभूमिं वा वियारभूमिं वा अन्नं वा जंकिंचि पओअणं, एवं गामाणुगामं दूइज्जित्तए ॥ ४७ ॥

इसी तरह स्थंडिल जाना हो मंदिर जाना हो, अथवा और कोई कार्य करना हो जाना हो दूसरे गांव जाना हो तो वो ही बडे पुरुष को पूछकर करना जाना क्योंकि वे ज्ञाता और समर्थ पुरुष है.

वासावासं पज्जोसविए भिक्खू इच्छिज्जा अराणयरिं

विगइं आहारित्तए, नो से कप्पइ से अणापुच्छित्ता आयरियं वा जाव गणावच्छेययं वा जं वा पुरओ कट्टु विहरइ; कप्पइ से आपुच्छित्ता आयरियं जाव आहारित्तए-'इच्छामि णं भंते ! तुब्भेहिं अब्भणुण्णाए समाणे अन्नयरिं विगइं आहारित्तएतं एवइयं वा एवइखुत्तो वा, ते य से वियरिज्जा, एवं से कप्पइ अएणयरिं विगइं आहारित्तए, ते य से नो वियरिज्जा; एवं से नो कप्पइ अएणयरिं विगइं आहारित्तए; से किमाहु भंते ! ? आयरिया पच्चवायं जाणंति ॥ ४८ ॥

साधु को कोई भी जाति की अन्य विकृति दूध दही वगैरह वापरनी हो तो बड़ों को पूछना जो आज्ञा देवे तो लाने को जाना और लाके वापरे परन्तु आज्ञा न देवे तो नहीं लाना क्योंकि विकृति से क्या लाभ हानि होगी वह पहिले से गुरु महाराज जानते हैं.

वासावासं पज्जोसविए भिक्खू इच्छिज्जा अएणयरिं तेइच्छियं (तेगिच्छं) आउट्टित्तए; तं चेव सव्वं भाणियव्वं॥४९॥

कोई साधु साध्वी दवा करने की इच्छा करे तो भी बड़ों को पूछकर करे.

वासावासं पज्जोसविए भिक्खू इच्छिज्जा अएणयरं ओरालं कल्लाणं सिवं धएणं मंगल्लं सस्सिरीयं महाणुभावं तवोकम्मं उवसंपज्जित्ता णं विहरित्तए; तं चेव सव्वं भाणियव्वं ॥५०॥

साधु को उदार कल्याण शिव धन्य मंगल सश्रीक महानुभाव तप को करना हो तोभी पूछकर करे.

वासावासं पज्जोसविए भिक्खू इच्छिज्जा अपच्छिममारणंतियसंलेहणाजूसणाजूसिए भत्तपाणपडियाइक्खिए पाओवगए कालं अणवकंखमाणे विहरित्तए वा निक्खमित्तए वा,

पविसित्तए वा, असणं वा १ पा० २ खा० ३ सा० वा ४ आहारित्तए वा, उच्चारं वा पासवणं वा परिट्ठावित्तए, वा सज्झायं वा करित्तए, धम्मजागरियं वा जागरित्तए। नो से कप्पइ अणापुच्छित्ता तं चेव सव्वं ॥ ५१ ॥

इस तरह संलेखना अनसन कर अन्तकाल करना हो वा भात पानी का पच्चखाण करने वाला हो, पादोपगमन अनसण करना हो, अथवा वहार जाना आना स्थंडिल मात्रा करना हो पढना हो रातभर जागना हो तो बड़े को पूछकर करे.

वासावासं पज्जोसविए भिक्खू इच्छिज्जा वत्थं वा पडिग्गहं वा कंबलं वा पायपुंछणं वा अएणयरिं वा उवहिं आयाविराए वा पयावित्तए वा। नो से कप्पइ एगं वा अणेगं वा अपडिएणवित्ता गाहावइकुलं भत्ताए वा पाणाए वा निक्खमि० पविसि० असणं १ पा० २ खा० २ सा० ४ आहारित्तए, बहिया विहारभूमिं वा वियारभूमिं वा सज्झायं व करित्तए, काउस्सग्गं वा ठाणं वा ठाइत्तए। अत्थि य इत्थ केइ अभिसमएणागए अहासरिएणहिए एगे वा अणेगे वा, कप्पइ से एवं वइत्तए—'इमं ता अज्जो! तुमं मुहुत्तगं जाणेहि जाव ताव अहं गाहावइकुलं जाव काउस्सग्गं वा ठाणं ठाइत्तए' से य से पडिसुणिज्जा, एवं से कप्पइ गाहावइ० तं चेव! से य से नो पडिसुणिज्जा, एवं से नो कप्पइ गाहावइकुलं जाव काउस्सग्गं वा ठाणं वा ठाइत्तए ॥ ५२ ॥

वस्त्र, पात्र, कंबल, पादपोंछन, अथवा और कोई उपाधि (वस्तु) को धूप में तपानी हो एकवार वा वारंवार सुखानी होतो एक वा ज्यादह साधू को कहकर के ही जाना, वाहर गोचरी पानी लाने को जाना हो, अथवा गोचरी करने

वैठना हो, अथवा मंदिर में जाना हो, अथवा स्थंडिल जाना हो, पढने को वैठना हो, अथवा काउसग्ग करना हो तो उनको पूंछना वह मंजूर करे और सुखाई वस्तु की रक्षा वह करे तो वाहर जासके और जो दूसरा साधु मंजूर न करे तो कुछ भी कार्य उस समय नहीं करना (क्योंकि वर्षा आजावे तो वस्तु विगड़ जावे).

वासावासं पज्जोसवियाणं नो कप्पइ निग्गंथाण वा निग्गंथीण वा अणभिग्गहियसिज्जासणियाणं हुत्तए, आयाणमेयं, अणभिग्गहियसिज्जासणियस्स अणुच्चाकूइयस्स अणट्ठावंधियस्स अमियासणियस्स अणातावियस्स असमियस्स अभिक्खणं २ अपडिलेहणासीलस्स अपमज्जणासीलस्स तहा तहा संजमे दुराराहए भवइ ॥ ५३ ॥

चोमासा में साधूओं को पाट तखता चौकी विना सोना वैठना न कल्पे, जो न रखे, या पाट तखते को स्थिर न कर हिलते रखे, दूसरे जीवों को पीड़ा करने को ज्यादह रखे, धूप में न सुखावे, इर्या समिति न रखे, प्रति लेखना वारंवार न करे, ऐसे प्रमादी साधुओं को संयम कठिन होता है अर्थात् ज्यादह दोष लगाकर अशुभ कर्म वांधते हैं.

अणादाणमेयं, अभिग्गहियसिज्जासणियस्स उच्चाकूइयस्स अट्ठावंधिस्स मियासणियस्स आयावियस्स समियस्स अभिक्खणं २ पडिलेहणासीलस्स पमज्जणासीलस्स तहा २ संजमे सुआराहए भवइ ॥ ५४ ॥

किन्तु पाट चौकी वापरने वाले प्रमार्जन पडिलेहण करने वाले अप्रमादी साधु संयम सुख से अच्छी तरह पाल सकेगा अर्थात् जीव रचा अच्छी तरह कर सकेगा और सद्गति मिला सकेगा.

वासावासं पज्जोसवियाणं कप्पइ निग्गंथाण वा निग्गंथीण वा तओ उच्चारपासवणभूमीओ पडिलेहित्तए, न तहा

हेमंतगिम्हासु जहा णं वासासु, से किमाहु भंते ! ? वासासु णं उस्सरणं पाणा य तणा य बीया य पणगा य हरियाणि य भवंति ॥ ५५ ॥

चौमासा मे साधू को साध्वी को स्थंडिल मात्रा को भूमि को तीन वक्त अच्छी तरह देखनी चाहिये आठ मास सिवाय चार में वनस्पति और सूक्ष्म जन्तु ज्यादा होते हैं उनकी यतना के लिये चौमासा का आचार अलग बताया है.

वासावासं पज्जोसवियाणं कप्पइ निग्गंथाण वा निग्गंथीण वा तओ मत्तगाइं गिण्हित्तए, तंजहा—उच्चारमत्तए पासवणमत्तए, खेलमत्तए ॥ ५६ ॥

चोमासा में साधू साध्वी को मल परठवने के लिये तीन मात्रक (मट्टी के पात्र वा काष्ट पात्र) रखने, कि स्थंडिल, मात्रा और श्लेष्म वगैरह के लिये काम लगे.

वासावासं पज्जोसवियाणं नो कप्पइ निग्गंथाण वा निग्गंथीण वा परं पज्जोसवणाओ गोलोमप्पमाणमित्तेवि केसे तं रयणिं उवायणावित्तए । अज्जेणं खुरमुंडेण वा लुक्कसिरएण वा होइयव्वं सिया । पक्खिया आरोवणा, मासिए खुरमुंडे, अद्धमासिए कत्तरिमुडे, छम्मासिए लोए, संवच्छरिए वा थेरकप्पे ॥ ५७ ॥

वर्षाऋतु में पर्युषणा (संवच्छरी) से आगे सिर पर के लोम जितने भी बाल नहीं रहना चाहिये अथवा रोगादि कारण बालकतरावे वा मुंडन कराना किन्तु प्रति पन्दरह दिन में कतराना, प्रतिमास मुंडन कराना युवान को छे छे मास में लोच कराना, और वृद्ध की आंख की कसर हो वा बाल थोड़े हो तो एक वर्ष में कराना.

वासावासं पज्जोसविआणं नो कप्पइ निग्गंथाण वा नि-

ग्गंथीण वा परं पज्जोसवणाओ अहिगरणं वइत्तए, जे णं नि ग्गंथी वा निग्गंथो वा परं पज्जोसवणाओ अहिगरणं वयइ, से णं ' अकप्पेणं अज्जो ! वयसीति " वत्तव्वे सिया, जेणं निग्गंथो वा निग्गंथी वा परं पज्जोसवणाओ अहिगरणं वयइ- से णं निज्जूहियव्वे ॥ ५८ ॥

साधु साध्वी को पर्युषणा पर्व से ज्यादह आपस में मलीन भाव न रखना चाहिये. कोई क्रोधादि करे तो दूसरे साधु शांति रखने को कहवे किन्तु कहने पर भी क्लेश करे तो उसको अलग रखना कि दूसरे साधूओं को असमाधि न होवे.

वासावासं पज्जोसवियाणं इह खलु निग्गंथाण वा नि- ग्गंथीण वा अज्जेव कक्खडे कडुए वुग्गहे समुप्पज्जिज्जा, सेहे राइणियं खामिज्जा, राइणिएवि सेहं खामिज्जा (ग्रं० १२००) खमियव्वं खमावियव्वं उवसमियव्वं उवसमाविगव्वं संमुइसंपुच्छणाबहुलेणं होयव्वं । जो उवसमइ तस्स अत्थि आराहणा, जो न उवसमइ तस्स नात्थि आराहणा, तम्हा अप्पणा चेव उवसमियव्वं, से किमाहु भंते ! ! उवसमसारं खु सामण्णं ॥ ५९ ॥

चोमास में स्थित साधु साध्वी को कटु शब्द आक्रोश का शब्द लड़ाई का शब्द उत्पन्न होगया हो तो छोटा साधु बड़े को खमावे. बड़ा भी उसको खमालेवे क्योंकि खमाना क्षमा करना शांति रखना शांति उत्पन्न कराना पर- स्पर पवित्र भाव से अच्छी बुद्धि से सुखशाता पूछकर परस्पर एकता करनी क्योंकि जो खमावे उसको आराधना है न खमावे उसको आराधना नहीं है.

वासावासं पज्जोसवियाणं कप्पइ निग्गंथाणं वा निग्गं- थीण वा तओ उवस्सया गिण्हित्तए, तं०—वेउव्विया पडिलेहा साइज्जिया पमज्जणा ॥ ६०

साधू साध्वी को चोमासे में तीन उपाश्रय होना चाहिये उसमें एकमें जो वारंवार उपयोग होता होवे उसकी वारंवार अर्थात् दिन में तीन वक्त प्रमार्जना करनी और आंखों से देखते रहना दो उपाश्रयों को दृष्टि से रोज देखना तीसरे दिन उसका काजा लेना.

वासावासं पज्जोसवियाणं निग्गंथाण वा निग्गंथीण वा कप्पइ अण्णयरिं दिसिं वा अणुदिसिं वा अवगिज्भिय भत्तपाणं गवेसित्तए । से किमाहु भंते ! ! उस्सरणं समणो भगवंतो वासासु तवसंपउत्ता भवंति, तवस्सी दुब्बले किलंते मुच्छिज्ज वा पविडज्जं वा, तमेव दिसं वा अणुदिसं वा समणा भगवंते पडिजागरंति ॥ ६१ ॥

कोई साधू साध्वी चोमासे में गोचरी जावे तो दूसरे साधू को कहकर जावे कि मैं उस दिशा में गोचरी जाता हूं क्योंकि तपस्वी साधू दुर्बल हो और रास्ते में थकजावे तो उसकी खबर लेने को दूसरा जावे.

वासावासं पज्जोसवियाणं कप्पइ निग्गंथाण वा निग्गंथीण वा गिलाणहेउं जाव चत्तारि पंच जोयणाइं गंतुं पडिनियत्तए, अंतरावि से कप्पइ वत्थए, नो से कप्पइ तं रयणिं तत्थेव उवायणावित्तए, ॥ ६२ ॥

चोमासे में रहे हुए साधू को चोमासे में औषध का कारण पडने पर चार पांच जोजन (चार कोस का जोजन होता है) जाना कल्पे परन्तु पीछा लोटना वहां रात न रहना रास्ते में रात्रि होवे तो रास्ते में रहसक्ता है.

इच्चेयं संवच्छरिअं थेरकप्पं अहासुत्तं अहाकप्पं अहामग्गं अहातच्चं सम्मं काएण फासित्ता पालित्ता सोभित्ता तीरित्ता किट्टित्ता आराहित्ता आणाए अणुपालित्ता अत्थेगइआ तेणव भवग्गहणेणं सिज्झंति मुच्चंति परिनिव्वाइंति सव्वदुक्खाणमंतं करिंति, अत्थेगइआ दुच्चेणं भवग्गहणेणं सिज्झंति जाव सव्वदुक्खाणमंतं करिंति, अत्थेगइया तच्चेणं भ-

वग्गहणेणं जाव अंतं करिंति, सत्तट्ठ भवग्गहणाइं नाइक्कमंति ६३॥

उपर कहा हुआ साधू का चोमासा का आचार जैसा सूत्र में बताया ऐसा योग्य मार्ग को समझकर सच्चा और अच्छी तरह मनवचन काया से सेवन, पालन, कर शोभा कर जीवित पर्यंत आराध कर दूसरों को समझाकर स्वयं पाल कर जिनेश्वर की आज्ञा पालन कर उत्तम निग्रन्थ उसी भवमें केवलज्ञान पाकर सिद्धिपद को पाकर कर्म बन्धन से मुक्त होते हैं शांति पाते हैं सब दुःखो से छूटते हैं कितनेक दूसरे भव में वही पद पाते हैं कोई तीसरे भव में मोक्ष पाते हैं किन्तु सात आठ से ज्यादह भव नहीं होते अर्थात् मोक्ष देने वाला यह कल्प सूत्र है इसलिये उसकी सम्यक् प्रकार आराधना करनी.

तेणं कालेणं तेणं समएणं समणे भगवं महावीरे रायगिहे नगरे गुणसिलए चेइए बहूणं समणाणं बहूणं समणीणं बहूणं सावयाणं बहूणं साविणाणं बहूणं देवाणं बहूणं देवीणं मज्झगए चेव एवमाइक्खइ, एवं भासइ, एवं पण्णवेइ, एवं परूवेइ, पज्जोसवणाकप्पो नामं अज्जयणं सअट्ठं सहेउअं सकारणं समुत्तं सअट्ठं सउभयं सवागरणं भुज्जो भुज्जो उवदंसेइ त्ति बेमि ॥ ६४ ॥ पज्जोसवणाकप्पो नाम दसासुअक्खंधस्स अट्ठमज्झयणंसमत्तं ॥ (ग्र०१२१५)

उस काल समय पर श्रमण भगवान महावीर ने राजग्रही नगरी गुण शैल चैत्य में बहुत साधू, साध्वी श्रावक श्राविका देव देवी की सभा में ऐसा कहा है ऐसा अर्थ समजाया है ऐसा विवेचन किया है ऐसा निरूपण किया है यह पर्युषणा कल्प नाम का अध्ययन हेतु प्रयोजन विषय बारम्बार शिष्यों के हितार्थ कहा ऐसा अंत में श्रीभद्रबाहु स्वामी कहते हैं.

कल्प सूत्र नाम का दशाश्रुत स्कंध का अध्ययन समाप्त ।

वीरोवीर शिरोमणि र्हदिरतः पापौघ विध्वंसकः ।
श्रेष्ठो मोह हरोनु मोहन मुनिः पन्यास हर्षस्तथा ॥
देवी दिव्य विभा सुधारस तनुः कंठे च वाणी स्थिता ।
तेषां पूर्ण कृपा ममोपरियतो ग्रंथो मया ग्रंथितः ॥ १ ॥